'अभिनव जयदेव', 'मैथिल कोकिल'

विद्यापति की पदावली

टिप्पणी-सहित

संकलयिता

श्रीरामवृक्ष शर्म्मा बेनीपुरी

बालचन्द विज्जावई भाषा । दुहु नहिं लग्गई दुज्जन हासा ।
ओ परमेसर हर-सिर सोहई । ई निच्चय नाअर-मन मोहइ ॥

—विद्यापति कृत 'कीर्ति लता'

संशोधक

कुमार गंगानन्द सिंह एम ए., एम. एल. ए.

पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय और पटना

प्रकाशक
पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय

प्रथम संस्करण पौष १९८२ वि०

मूल्य २)

द्वितीय संस्करण, वैसाख १९८८ वि०
तृतीय संस्करण, ज्येष्ठ १९९३ वि०

मुद्रक—हनुमानप्रसाद, विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय

समर्पण

हिन्दी के उन सफल समालोचकों के कुशल करों में
जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिये
'नवरत्न' में दस रत्न घुसेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये 'बिहारी' को,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये
कितने अन्य कवियों की
कीर्ति पर
सफाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिये
दास को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो केशव की कविता में तुलसी की कविता से
अधिक काव्य-गुण पाते हैं—
अभिनव जयदेव
मैथिलकोकिल

विद्यापति की पदावली

का
यह सचित्र संकलन
उसके भोसिले संकलयिता द्वारा
सादर, सविनय और सभय समर्पित

हमारी सर्व-प्रशंसित पुस्तक-मालाएँ

राष्ट्रभाषा हिन्दी के सभी विभागों को उत्तमोत्तम ग्रन्थ-रत्नों से पूर्ण करने के लिये हमने निम्नलिखित पुस्तक-मालाएँ पिरोना आरम्भ किया है।

आपका कर्त्तव्य

है कि हमारी इन मालाओं को अपना कर राष्ट्रभाषा की अधिकाधिक सेवा करने को हमें उत्साहित करें। आपके सुभीते के लिये हमने यह प्रबंध किया है कि जो महाशय ॥) फीस भेजकर हमारे स्थायी ग्राहक हो जायँगे, उन्हें

सभी मालाओं की पुस्तकें पौने मूल्य में

ही मिलेंगी। हमें पूरा विश्वास है कि आप यह मौका न चूकेंगे।

हमारी सर्वांगसुन्दर मालाएँ—

१ सुबोध काव्य-माला
२ सुन्दर साहित्य माला
३ बाल-मनोरंजन माला
४ महिला-मनोरंजन माला
५ नवयुवक-हृदय हार
६ सरल-पद्य माला
७ चारु-चरित-माला

मैथिल कोकिल



कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है, इसका परिचय इसीसे मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कविकुल-गुरु महर्षि वाल्मीकि की वंदना के लिये जिह्वा खोलनी पड़ी तब उन्होंने यही कहा—

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।
आरुह्य कविता शाखां वन्दे वाल्मीकि कोकिलम्॥

इस एक श्लोक ही में जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओं में हैं, उनका व्यापक निरूपण है, थोड़े से शब्दों में ही बहुत-कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याख्या करने के लिये उनको 'मैथिल-कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिलीभाषा राकारजनी के राकेश और कविता-कामिनी के कमनीयकान्त हैं। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल कान्त पदावली, भावुक-हृदय-विमोहिनी भावुकता, और नव-नव भावोन्मेषिणी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्हीं

गुणों की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है कि केवल मैथिलीभाषा को ही आपका गर्व नहीं है, बंगभाषा और हिन्दी-भाषा-भाषी भी आपको अपनाने में अपना गौरव समझते हैं, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते हैं। तीन तीन प्रान्तों में समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता में है, तो आपकी ही कविता में है, अन्य किसीकी कविता को आज तक यह महत्व नहीं प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक प्रान्त मे नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रह-कर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली मे से सरस-से सरस सुमनो के संग्रह करने में जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने में सुगन्ध हैं। यदि आपलोगों ने इसका समुचित समादर किया, तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार में उक्त कविपुंगव की अधिकांश रचना आपलोगों के कर-कमलों में अर्पित की जावेगी। उस समय में एक बृहत् भूमिका-द्वारा इस महान् कवि की रचनाओं पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पंक्तियों को लिखकर ही संतोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्व विद्यालय, काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

द्वितीय-संस्करण

हिन्दी भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र सटीक-सुन्दर संकलन के प्रथम संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का दूसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष्य में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिता जी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यतः यह श्रीयुत नगेन्द्र नाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये, वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों का त्यों रहने दिया है, क्योंकि इसमें शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त-सा हो गये हैं। बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर की जाय तो कैसे? हाँ, कई स्थानों में मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे, पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूँगा।

टीका में मैंने जहाँ तहाँ कुछ हेरफेर की है। समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते

होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के काल की मैथिली नहीं है। दोनों में बहुत अन्तर हो गया है। कहीं-कहीं तो ऐसा मालूम पड़ता है कि इस महाकवि ने अपने अनूठे भावों को संगीत-बद्ध करने के लिये अनूठे शब्दों का निर्माण किया है। ऐसी अवस्था में जितनी टीकाएँ प्रकाशित हुई हैं और होंगी उनके सम्बन्ध में समालोचना की गुंजाइश है और रहेगी। इन बातों को दृष्टि में रखते हुए मैंने प्रथम संस्करण में की टीका का संशोधन उन स्थानों में किया है जहाँ भाषा का यथार्थ भाव व्यक्त करने के लिये वैसा करना मुझे नितान्त आवश्यक प्रतीत हुआ। यह मानना होगा कि इस प्रकार के गुटके संस्करण में टीका के लिये यथेष्ट स्थान मिलना असम्भव है। यदि अपने काम से मुझे कुछ भी संतोष है तो इसीलिये कि इससे अधिक संशोधन मैं इस संस्करण में नहीं कर सकता था।

मैं तो एक ऐसे संस्करण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जिसमें पदों के पाठ निर्विवाद हों और टीका विस्तृत, समालोचनात्मक और प्रामाणिक। देखूँ, वह मधुर स्वप्न कब तक चरितार्थ होता है। तब तक के लिये सहृदय पाठकों से मेरा अनुरोध है कि ऐसे अधूरे प्रयत्नों से संतोष करें। यदि इससे उनकी तुष्टि न हो तो शिष्ट समालोचना द्वारा तथ्य निरूपण करके ही वे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

श्रीगंगानन्द सिंह

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के सङ्कलन में मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस सारदाचरण मित्र द्वारा प्रकाशित बँगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अतः इन सज्जनों का मैं अत्यन्त अनुगृहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने में, उक्त पुस्तक, 'मैथिल कोकिल विद्यापति', 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' एवं 'मिथिला दर्पण' से सहायता मिली है, अतः इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एवं कविता रचना से अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे से संग्रह के लिये एक छोटी–किन्तु चोखी–भूमिका लिख देने के लिये पं० अयोध्यासिंह उपाध्यायजी का मैं चिरऋणी हूँ। सुहृद्वर बाबू शिवपूजन सहाय, श्रद्धेय पं० जनार्दन झा, श्री जगदीश्वर ओझा, 'मैथिली'-सम्पादक बाबू उदितनारायणलालदास, मित्र रामनाथलाल 'सुमन' प्रिय 'विकल' आदि ने इस संग्रह को उपयोगी बनाने में मेरी सहायता की है, इनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र हैं हिन्दी पुस्तक-भण्डार के प्राण बाबू रामलोचन शरणजी, जिनके उत्साहदान से ही यह पुस्तक छापी गई है और जिन्होंने इसे सुलभ और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

—श्री बेनीपुरी

विमाता

लेखक—श्रीयुत अवधनारायण

बडे हर्ष की बात है कि 'विमाता' हिन्दी-साहित्य के मौलिक उपन्यासों में स्थान पा गई। इसके ऐसा हृदयग्राही प्लाट हिन्दी के बहुत ही कम उपन्यासों को नसीब हुआ है। हजारों कापियाँ थोडे ही समय में बिक जाना इसकी उपयोगिता का सर्टिफिकेट है। 'सरस्वती' ने जब इसकी प्रशंसा की है, तब अधिक लिखना व्यर्थ है। लेखक ने समाज के चरित्रों का जीता जागता खाका सामने ला रक्खा है। पढते जाइये और सामाजिक चरित्रों पर विचार कर देखिये कि सचमुच भारतवर्ष में यह यथार्थ घटता है कि नहीं। पुत्र के रहते हुए भी, केवल अपनी पाशविक तृष्णा को शांत करने के लिये दूसरी शादी करने से कैसे-कैसे अनर्थ होते हैं, किस प्रकार पुत्र का जीवन बर्बाद होता है और घर नरक कुंड बन जाता है, इसका करुण-रसात्मक वर्णन पढ़कर आँसू बहने लगते हैं।

सरल मुहावरेदार भाषा, पृष्ठ-संख्या ३०८, पक्की जिल्द २)

विषय-सूची

कामना

लेखक—श्रीयुत बाबू जयशंकर 'प्रसाद'

कानपुर का स्वनाम धन्य राष्ट्रीय साप्ताहिक 'प्रताप' लिखता है—"प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी के एक लब्धप्रतिष्ठ लेखक की कृति—'नाटक' है। लेखक ने इस नाटक में एक शैली द्वारा, एक नये संसार—टापू—की कायापलट का रोचक वर्णन किया है। 'कामना' 'सन्तोष', 'दम्भ', 'लालसा' आदि मानव-हृदय के अच्छे और बुरे भाव नाटक के पात्र और पात्रियाँ हैं। और बतलाया गया है कि वर्त्तमान नवीन सभ्यता से एक बिल्कुल अछूत, शान्त एवं सुखमय देश (टापू) किस प्रकार इस सभ्यता के सम्पर्क में आकर विषैला, सम्पत्तिवादी, क्रूर और स्वार्थरत दु समय हो जाता है, और वहाँ कैसा हाहाकार मच जाता है, तथा फिर उसका अन्त किस प्रकार होता है। पुस्तक की भाषा आकर्षक एवं सरल है। श्रीयुत जयशंकर प्रसादजी हिन्दी के नवयुग प्रवर्त्तकों में अग्रगण्य हैं। उनकी कलम में सौकुमार्य, ओज, मौलिकता और जादू है। 'कामना' शुद्ध कला का हृदयग्राही एवं चातुर्यमंडित प्रतिबिम्ब है। हम प्रत्येक साहित्यप्रेमी से इस नाटक के पढ़ने का अनुरोध करते हैं। जिल्द और छपाई—मजबूत, साफ तथा सुन्दर।" हास्यरसप्रधान साप्ताहिक 'मतवाला' लिखता है—"हमने इसे खूब पसंद किया—'कल्पना, भाषा, भाव, और सुन्दर कविताएँ—सभी दृष्टियों से। 'प्रसाद' जी युग से मातृ भाषा का भांडार सुन्दर-सुन्दर रत्नों से भर रहे हैं। सभी आँख वालों की उनपर आँख है। हमारी आन्तरिक कामना है कि प्रसादजी की 'कामना' लोगों के हृदय में स्थान पावे।"

सुनहले छापे की रंगीन जिल्द—मू० १)

विद्यापति का परिचय

विद्यापति का परिचय



भारतीय प्राचीन महापुरुषों का जीवन-वृत्त लिखना कठिन है। भारत में इतिहास या जीवनी लिखने की वैसी प्रथा नहीं थी। अतएव, अपने प्राचीन पुरुषों की जीवनी लिखने में हमें विशेषतः किंवदन्तियों या परम्परा से चली आती हुई जनश्रुतियों का आधार लेना पड़ता है। यदि किसी महापुरुषों की चर्चा प्रसंगवश किसी पुस्तक में आ गई हो, तो वह हमारे लिये एक बहुमूल्य ऐतिहासिक सामग्री हो जाती है। ताम्रपत्र या सिक्के भी इतिहास-संकलन में बहुत सहायता करते हैं। यहाँ एक बात और ध्यान में रखने की है। जो राजा हो गये हैं, जिन्होंने राजवंश में जन्म लिया था, या जिन्होंने किसी राजा का आश्रय लिया था, प्राचीन पुस्तकों में प्राय उन्हींकी अधिक चर्चा है—सिक्के और ताम्रपत्र हमें उन्हींके इतिहास संकलन में सहायक होते हैं। जिनका जन्म साधारण घराने में हुआ था, जिन्होंने किसी राजा का आश्रय नहीं लिया था, उनके जीवन-वृत्त लिखने में तो विशेषतः किंवदन्तियाँ ही सहायक होती हैं। सूर और तुलसी इतने बड़े कवि हो गये हैं, किन्तु इनके विषय में जो कुछ हम जानकारी रखते हैं, वह केवल किंवदन्तियों के ही आधार पर। जन श्रुति या किंवदन्ती सर्वथा अमूलक नहीं हुआ करती। उसमें बहुत कुछ ऐतिहासिक तथ्य रहते हैं—हाँ, हम यह स्वीकार करेंगे कि उसमें ऐतिहासिक तथ्यों पर बहुत-कुछ परदा पड़ा हुआ रहता है।

विद्यापति इस विषय में सूर या तुलसी से अधिक सौभाग्य शाली हैं। इनका जन्म सूर तुलसी के लगभग दो सौ वर्ष पूर्व होने

पर भी इनके जीवनी-लेखक को बहुत कुछ ऐतिहासिक सामग्रियाँ मिलती हैं। उसका खास कारण यह है कि ये एक राजवंश के आश्रित थे। उस राजवंश के इतिहास के साथ इनका इतिहास भी सम्मिलित है। कई प्राचीन पुस्तकों में प्रसंग-क्रम से इनकी चर्चा आ गई है। एक ताम्रपत्र भी इनके सम्बन्ध में मिला है।

विद्यापति का निवास-स्थान

बहुत दिनों तक विद्यापति के जन्मस्थान के विषय में विवाद चला आ रहा था, किन्तु अब उस विवाद का अन्त हो गया। अब यह बात निश्चित हो गई है कि विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे। उनका जन्म दरभंगे जिले के बेनीपट्टी थाने के अन्तर्गत 'बिसपी' गाँव में हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाड़ी उत्तर-पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन कमतौल है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनों से यहीं वास करते थे—इस गाँव का पहला नाम गढ़बिसपी था। विद्यापति को यह गाँव उनके आश्रय-दाता राजा शिवसिंह की ओर से उपहार स्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

स्वस्ति श्रीगजरथपुरात् समस्त प्रक्रिया विराजमान श्रीमद्रामेश्वरीवरलब्धप्रसाद भवानीभवभक्तिभावनापरायण रूपनारायण महाराजाधिराज श्रीमच्छिवसिंह देवपादाःसमरविजयिनो जरैल तप्पायां बिसपी ग्राम वास्तव्य सकल लोकान् भूकर्षकाश्च समादिशन्ति। ज्ञातमस्तुभवताम्। ग्रामोऽयमस्माभि सप्रक्रियाभिनवजयदेव महाराजपण्डित ठक्कुर श्रीविद्यापतिभ्य शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकर्मकरिष्यथेति ॥ ल० स० २९३, श्रावण सुदि ७ गुरौ।

विद्यापति के वंशधर बहुत दिनों तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु अभी, चार पुश्त पहले, ये इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के सौराठ नामक गाँव में बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग लाखिराज के रूप में करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरों से छीन लिया गया। उस समय विद्यापति के वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिये उपयुक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र को लेकर कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रियर्सन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य बंगीय अनुसन्धान कर्त्ताओं ने इस दान-पत्र को प्रामाणिक माना है। बिसपी गाँव विद्यापति को शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के प्रसिद्ध विद्वेषी पण्डित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर "अति लुब्ध नगर-याचक" नाम से इनका उपहास किया करते थे।

इन्हें बंगदेशीय सिद्ध करने के लिये जो कोशिश हुई थी उस विषय में भी कुछ ज्ञान लेना अप्रासंगिक न होगा। बात यों है, विद्यापति की अधिकांश रचनाएँ शृंगार रस से ओत-प्रोत हैं। भारतीय शृंगारी कवियों के प्रधान उपास्यदेव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और भाषा का शृंगार-साहित्य राधा-कृष्ण की केलि-क्रीड़ाओं से भरा पड़ा है। विद्यापति ने भी अपने पदों में राधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा साहित्य में कहीं अन्यत्र मिलना कठिन है। जिस समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि कोकिल की काकली मिथिला की गली गली को रसप्लावित कर बंगाल के श्यामल [illegible]

गुँजा रही थी। चैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मन्त्रमुग्ध हो गये। वे ढूँढ़ ढूँढ़कर विद्यापति के पद गाने लगे। विद्यापति के अलौकिक पदों को गाते गाते, प्रेमावेश में, वे मूर्च्छित हो जाते थे। (चैतन्यदेव भारत के अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिये कितने गौरव की बात है!) अब क्या था, चैतन्यदेव की शिष्य-परम्परा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदिन बढ़ती ही गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास श्री निवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताओं का बनाना आरम्भ किया। बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त लिखते हैं-"विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइआछिल, बोध हय कोन देशे कोन कविर तद्रूप हय नाई।...... ताहाँरई भावा भाँगिया-चूरिया, गढ़िया-गठिया, रूप रस, छन्दोबन्ध, भावभंगी, शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा, ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनो-मोहन वैष्णव काव्यसमूह सृजित हइल।" श्रीजोगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य एम० ए० बी० ए० एल० ने जो लिखा था उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चंडीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्ददास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और म्रात्य रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सब ही उनलोगों की आभा से आलोकित हैं, और उनलोगों का अनुकरण करके कविता रचना में व्यस्त पाये जाते हैं।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों के रगरग में प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियों द्वारा गाये जाने के कारण विद्यापति के बंगदेशीय पदों का रूप भी ठेठ बँगला हो

* कहा जाता है कि ये भी मैथिल ही थे।—लेखक।

गया। अब तो बंगाली लोग यह एक बार ही भूल गये कि विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे। बंगाली अपनी कुशाग्र-बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हैं। उनलोगों ने विद्यापति का निवास स्थान भी बंगाल ही को ढूँढ़ निकाला। यही नहीं, शिवसिंह नामक एक बंगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े——रानी लखिमा देवी भी मिल गई। यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि विद्यापति ठेठ बंगाली थे। यही कारण है कि बंगला १२८२ साल में स्वर्गीय राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने जब पहले पहल 'बङ्गदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि विद्यापति बंगाली नहीं मैथिल थे, और इसके प्रमाण में उन्होंने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये, तब समूचे बंगाल म कोलाहल मच गया। विद्यापति पर वे लोग इतने फिदा थे कि उन्हें अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे। उस समय एक प्रसिद्ध बंगला लेखक ने यह अन्दाज लगाया था कि विद्यापति बंगाली ही थे। पहले बंगाली लोग मिथिला में विद्याध्ययन को जाते थे, सम्भव है, विद्यापति यहाँ से विद्याध्ययन को गये हों और वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किया हो और बस गये हों। किन्तु ये सब गपोड़े-बाजियाँ अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जस्टिस सारदाचरण मित्र, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त आदि सभी बंगीय विद्वानों ने यह कबूल कर लिया है कि वे मिथिला-निवासी थे और इन्होंने मैथिल भाषा में कविता की है। हमें धन्यवाद देना चाहिये श्रीयुत ग्रियर्सन साहब को, जिन्होंने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

विद्यापति का समय

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के

समय भी निश्चित नहीं है। किंवदन्ती तथा स्फुट पदों के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति सम्भव है। पता तो केवल इसीका लगता है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या १३२४ में देवसिंह मरे थे, उसी साल शिवसिंह राजगद्दी पर बैठे थे, और, राजगद्दी पर बैठने के छः महीने के अन्दर उन्होंने विद्यापति को बिसपी गाँव उपहार में दिया था। बिसपी गाँव के ताम्रपत्र की प्रतिलिपि दी जा चुकी है, शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय में विद्यापति का एक पद यों है—

अनल रन्ध्र कर लक्खन नरवइ सक समुद्द कर अगिनि ससी।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ वार वेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ अद्धासन सुरराअ सरु। इत्यादि।

बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' ग्रंथ में लिखा है कि बिसपी गाँव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस बरस की थी। इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्त्ति-लता' नाम की पुस्तक लिखी थी। सहायजी ने उसे १६ की अवस्था में लिखी हुई बताते हैं। सहायजी का यह कथन अनुमान-विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है। सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसलमानों से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये, जहाँ से वे पुन नहीं लौटे—सम्भवत वे उसी युद्ध में मारे गये। इतिहास से यह सिद्ध है * और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है, कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और

* 'मिथिला दर्पण' के रचयिता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज करने की बात लिखी है। किन्तु 'मिथिला दर्पण' का काल निर्णय नितांत अशुद्ध जान पड़ता है। यहाँ तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है।—लेखक।

शिवसिंह की संगति रही। विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों? अनुमान की बात जाने दीजिये। इतिहास भी इसके विरुद्ध है। स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता गणपति ठाकुर के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते जाते थे। नैपाल-दरबार के पुस्तकालय में विद्यापति रचित 'कीर्त्ति-लता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी इन्होंने करा ली थी। उस कीर्तिलता में लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अत राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा। वे ऐसी अवस्था के जरूर रहे होंगे कि दरबार में अपने पिता के साथ जा सकें। २५२ लक्ष्मणाब्द में वे राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ जा सकते थे—उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा!

बात यों है कि बाबू व्रजानन्दनसहायजी को बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री लिखित मिथिला राज्य की वंशावली ने धोखा दिया है। बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४४६ ईस्वी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है *। सहायजी ने स्वयं इसका खंडन किया है। क्योंकि

* लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल २९३ ल० स० को १४०० ई० माना है, 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' के रचयिता ने इसे १४१२ ई० लिखा है और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है।—लेखक।

विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। यों अयोध्याप्रसादजी ने सहायजी की गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है। किन्तु एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मान कर भी दूसरी जगह सहायजी ने उसे ही प्रामाणिक मान लिया है। दुर्गाभक्तितरंगिणी नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंह देव का समय खत्रीजी ने १४७० ई० लिखा है। सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है। जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म साल को आगे बढ़ाना सहायजी के लिये जरूरी था। किन्तु सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है, वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी की होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास सिद्ध है। स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के २० पृष्ठ में लिखा है कि नरसिंहदेव के पुत्र धीर सिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत ग्रंथ की 'सेतुदर्पणी' नामक टीका लिखी गई थी। जिसके अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द में धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये हैं। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० में पड़ता है *। सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था, तो उसका पिता १४७० में कैसे राजा हुआ? यह साफ प्रकट है कि खत्रीजी ने यहाँ भी ४६ वर्ष की गलती की है। १४७० में ४६ घटा देने पर १४२४ ई० में नरसिंहदेव का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार,

* सहायजी की गणना के अनुसार—लेखक।

एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है १४२६ में वे मर गये हों और १४२८ में उनका पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पिणी' से भी यही पता चलता है। इसी ४१ वर्ष के फेर में पड़कर जहाँ सहायजी ने केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम दूर हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिये आपने जमीन आसमान का कुलावा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

सहायजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने २३ पृष्ठ में लिखा है कि ३४९ लक्ष्मणाब्द में इनके अपने हाथ से भागवत पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर चंदा झा के साथ स्वयं तरौनी जाकर उस पुस्तक को देखा था। उस पुस्तक के अन्त में लिखा है—"शुभमस्तु सर्वजगतां ल० सं० ३०९ श्रावण सुदि १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्री विद्यापतिर्लिपिरियमिति।" इस ३०९ को ही सहायजी ने भ्रमवश ३४९ मान लिया है।

अब यथार्थ बात सुनिये। यह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगी।

एशियाटिक सोसाइटी में एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है जो १३२१ शकाब्द (=२६० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी शिवसिंह की राजधानी गजरथपुर में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने इसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' ऐसा लिखा है और शिवसिंह का नाम महाराजा की उपाधि से युक्त है। इससे दो

हरिसिंह देव के * राजमंत्री भी थे, "छान्दोग्य दशपद्धति" की रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार विहार में दश-कर्म किये जाते हैं। इनके सहोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, "महावार्तिक नैबन्धिक" नाम से प्रख्यात थे। धीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य चिंतामणि' तथा 'विवादरत्नाकर' 'राजनीति-रत्नाकर' आदि सप्त रत्नाकरों की रचना की थी। राज-नीति रत्नाकर एक बहुत ही बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत-कुछ प्रकाश डाला जा सकता है। आप उपर्युक्त हरिसिंह देव के मंत्री एवं महामहत्तक सान्धिविग्रहीक थे। विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। आपने गंगाभक्तितरङ्गिणी नाम की एक पुस्तककी रचना की थी।

यों देखा जाता है कि विद्यापति का खानदान ही सरस्वती का अपूर्व कृपापत्र रहा है। जिस प्रकार उनके पूर्वजों ने राज्यकर्म में अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती सेवा में भी वे लोग पीछे नहीं रहे हैं। ऐसे प्रतिभावान् कुल में उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्य कुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

विद्यापति का प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता नाम था पण्डित गणपति ठाकुर। गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापण्डित थे। इनकी माता का नाम था हाँसिनी देवी। वह पिता धन्य है, जिन्हें ऐसा पुत्ररत्न

* हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध सिमरौंव गढ़ के अधिपति थे। इन्होंने नेपाल को जीता था।—लेखक।

प्राप्त हुआ था, वह माता भी धन्य है, जिन्होंने ऐसे पुरुषरत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। बिसपी गाँव की प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है, जहाँ ऐसे कविकोकिल ने अपना जीवन व्यतीत किया था। कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की आराधना करके विद्यापति ऐसा पुत्र रत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में बचपन से ही आया जाया करते थे। गणेश्वर के बाद कीर्त्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति राजा कीर्त्तिसिंह के दरबार में आने जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। राजा कीर्त्तिसिंह के दरबार में, मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे। क्योंकि इन्हीं राजा कीर्त्तिसिंह के नाम पर इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ 'कीर्त्तिलता' का निर्माण किया था। वह पूरी पुस्तक नेपाल के राज-पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है। 'कीर्त्तिलता' कवि के तरुण वयस की रचना है। इस ग्रन्थ की भाषा संस्कृत, प्राकृत मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ठ' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है-

देसिल वअना सब जन मिट्ठा।
ते तेसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सभों को मीठी लगती है, यही जानकर अवहट्ठ भाषा में इसकी मैंने रचना की है।' किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य-कुशलता के लिये

बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। उनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। उनका प्रतिद्वंद्वी उसी अवस्था में कोई नहीं था। वे अभिमान के साथ उस पुस्तक में लिखते हैं—

बालचन्द विज्जावइ भाषा।
दुहु नहिं लग्गई दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर सिर सोहई।
इ निच्चय नायर मन मोहई॥

—कीर्तिलता, प्रथम पल्लव।

बाल-चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनों पर दुष्टों की हँसी नहीं लग सकती। वह (बालचन्द्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है और यह (विद्यापति की भाषा) निश्चय पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषाविज्ञों का—मन मोहती है। इस पद के एक-एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है। जयदेव के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज थी। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इन कवि का कोई भी प्रतिद्वंद्वी हिन्दी-साहित्य में नहीं है।

कीर्तिसिंह के बाद शिवसिंह के पिता देवसिंह राजा हुए। देवसिंह के समय में राज्यशासन का भार शिवसिंह के ही हाथ में था। उसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिंह में घनिष्ठता हुई। तब से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्हींके पास रहे।

विद्वत्ता, संस्कृत-रचनाएँ

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, इन्होंने सुप्रसिद्ध विद्वान् हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था। इनका खानदान ही सरस्वती

का कृपापात्र रहा है। इनके पिता गणपति ठाकुर स्वयं कवि थे। अतएव, इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ हैं। यहाँ पर यदि हम इनके लिखे हुए संस्कृत ग्रन्थों का कुछ परिचय दे दें, तो अप्रासंगिक नहीं होगा। उनसे हम इनकी विद्वत्ता का कुछ अन्दाज लगा सकेंगे।

विद्यापति की प्रथम रचना कीर्त्ति-लता है। इसके विषय में कुछ चर्चा हो चुकी है। दूसरी पोथी 'भू परिक्रमा' है। यह पोथी राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक कहानियाँ हैं। इसीका वृहद् रूप 'पुरुष परीक्षा' है। इनकी तीसरी पोथी है— 'पुरुष-परीक्षा'। यह पोथी, मालूम होता है, उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकास हो चुका था। यह राजा शिवसिंह की आज्ञा से उन्हींके राजत्वकाल में लिखी गई थी। इसमें कथाओं के ढंग से धार्मिक एवं राजनीतिक उपयोगी विषयों का वर्णन है। राजनीतिक और धार्मिक विषयों में भी कवि ने शृंगार रस का विस्मरण नहीं किया है। कवि ने शृंगार रस के परदे राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत न है। १८३० ईस्वी में इसका अँगरेजी में अनुवाद हुआ था। अनुवाद लार्डविशप टर्नर के परामर्श से राजा काली्कृष्ण दुर ने किया था। फोर्ट विलियम कालेज में पहले यह पाठ्य क की तरह पढ़ाई जाती थी। उक्त कालेज के पण्डित भाषा के पक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० में इसका भाषानुवाद या।

नकी चौथी पुस्तक 'कीर्त्ति पताका' है। इसमें ई

भाषा में लिखी गई प्रेम-कविताएँ हैं। पाँचवीं 'लिखनावली' है, जिसमें संस्कृत में पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। लिखनावली रजाबनौली के अधिपति पुरादित्य के लिये २९९ लक्ष्मणाब्द में लिखी गई थी। इसी रजाबनौली में विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द में अपने हाथ से भागवत लिखकर समाप्त किया था। छठी पुस्तक 'शैव सर्वस्व-सार' है। यह पुस्तक शिवसिंह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद रानी विश्वासदेवी के समय में लिखी गई थी। इस पुस्तक में भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओं की कीर्ति कथा है, एवं शिव की पूजा की विधि लिखी हुई है। सातवीं पुस्तक 'गंगा-वाक्यावली' है, जो विश्वास-देवी के ही लिये लिखी गई थी। आठवीं पुस्तक है 'दान वाक्या वली'। यह राजा नरसिंह देव की स्त्री धीरमती को समर्पित की गई है। नवीं पुस्तक 'दुर्गाभक्ति तरंगिणी' दुर्गा-पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिंह देव के कहने से हुआ था। धीरसिंह के समय में यह पूरी हुई थी। इसमें धीरसिंह के भाई भैरवसिंह और चन्द्रसिंह के भी नाम आये हैं। इनके अतिरिक्त विभाग सार (स्मृति ग्रंथ), वर्षकृत्य और गया-पत्तलक नामक संस्कृत पुस्तकें भी आपकी की ही लिखी हैं। अब तक मिथिला में खोज का काम कुछ नहीं हुआ है। सम्भव है, इनकी लिखी और भी संस्कृत पुस्तकें हों, जो अभी तक छिपी पड़ी होंगी, क्योंकि विद्यापति दीर्घजीवी पुरुष थे। किन्तु, केवल इन्हीं पुस्तकों के देखने से विद्यापति के प्रगाढ़ पांडित्य का परिचय मिलता है। हिन्दी के लिये तो यह नितान्त गौरव की बात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी का कवि संस्कृत-साहित्य में भी अपना खास स्थान रखता है।

विद्यापति की उपाधियाँ

हिन्दी में आजकल यह प्रथा विशेष रूप से पाई जाती है कि प्रत्येक कवि अपना एक न एक उपनाम रखता है। हिन्दी वालों ने यह प्रथा विशेषतः उर्दू वालों से ली है, ऐसा कहा जाता है। किन्तु प्राचीन हिन्दी कवियों के भी उपनाम देखे जाते हैं। हाँ, आजकल के उपनामों और उस समय के उपनामों में एक गहरा भेद है। किसी राजा या प्रसिद्ध व्यक्ति द्वारा, उनकी काव्य कुशलता देखकर उसीके अनुसार प्रदान की हुई उपाधियाँ ही, उस समय कवियों के उपनाम होती थीं। आजकल जिसके जी में आता है, अपना उपनाम धर लेता है। प्राचीन कवियों में 'बिहारी, भूषण' आदि उपनाम जो देखे जाते हैं, वे सब राज प्रदत्त उपाधियाँ हैं।

विद्यापति को भी कई उपाधियाँ प्राप्त हुई थीं। 'अभिनव जयदेव' की उपाधि तो सर्व प्रसिद्ध है। बिसपी गाँव का जो शासनपत्र है, उसमें भी विद्यापति को 'अभिनव जयदेव' कहा है। मालूम होता है यह उपाधि स्वयं शिवसिंह ने दी थी। विद्यापति इस उपाधि के सर्वथा योग्य भी थे। जिस प्रकार संस्कृत साहित्य में मधुर शृङ्गार वर्णन में जयदेव का जोड़ नहीं है, उसी प्रकार, इस विषय में विद्यापति भी भाषा साहित्य में अपना जोड़ नहीं रखते। इस उपनाम से इन्होंने कुछ कविताएँ भी की हैं। एक पद यों है—

सुकवि नव जयदेव भनिअ रे।
देवसिंह नरेन्द्र नन्दन
सेतु नरउह कुलनिकन्दन

सिंह सम सिवसिंह राया
सकल गुनक निधान गनिश्र रे ॥

इनकी दूसरी उपाधि 'कविशेखर' है। कविशेखर नाम से भी इनकी बहुत-सी रचनाएँ हैं। न मालूम यह उपाधि किसने दी थी। बिस्पी ग्राम के दानपत्र में यह उपाधि नहीं है। कविकंठहार, कविरंजन इन दो नामों से भी अधिक कविताएँ हैं। दशावधान और पंचानन की उपाधियाँ भी इनको कही जाती हैं। कुछ कविताएँ चम्पति या विद्यापति चम्पई नाम से भी हैं। 'दशावधान' नाम से कुछ कविताएँ भी हैं। यह उपाधि, कहा जाता है, दिल्लीश्वर ने दी थी।

विद्यापति का सम्प्रदाय

अभी तक यह विषय भी संदेहमद रहा है। इनकी कविताएँ विशेषतः राधाकृष्ण विषयक हैं। अतः लोगों की धारणा है कि ये वैष्णव रहे होंगे। बंगाल में भी पहले यही धारणा थी। बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने समर्पण पत्र में इन्हें 'वैष्णव कवि चूड़ामणि' लिखा है। किन्तु जनश्रुति और प्रमाण इसके विरुद्ध हैं। बात यों है कि विद्यापति शृङ्गारिक कवि थे। शृङ्गार के आराध्य देव श्रीकृष्णजी ठहरे। अतः शृङ्गारिक वर्णन में राधा कृष्ण के विलास ही वर्णन किये जाते हैं—सभी भारतीय शृङ्गारिक कवियों ने इसी युगल मूर्त्ति को लक्ष्य कर शृङ्गारिक रचनाएँ की हैं। किन्तु इसीसे किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नहीं। विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर शैव थे। आपने शिव की उपासना के बाद ही यह पुत्ररत्न प्राप्त किया था। ऐसी अवस्था में विद्यापति का शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, विद्यापति का एक पद यों है—

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंह देव ने एक बृहत् यज्ञा-नुष्ठान किया था। किन्तु अन्य राजाओं द्वारा यज्ञभ्रष्ट कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल में चले गये। इसी समय सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढ़ाई की। मिथिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का चिरमनोरथ पूरा हुआ—मिथिला का शासन-सूत्र मुसलमानों के हाथ में आया। इस अवसर पर राजपंडित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से भेंट की। बादशाह* उनके गुण से अत्यन्त संतुष्ट हुए। उनके अस्वीकार करने पर भी उन्हींको मिथिला-प्रदेश का शासक नियुक्त किया। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ में आया।

कामेश्वर ठाकुर ओयनवार ब्राह्मण थे। उनके पूर्वपुरुष प० ओयन ठाकुर ने किसी राजा से (सम्भवतः नान्यदेव से) 'ओयनी' नामक गाँव उपहार में पाया था। 'ओयनी' गाँव दरभङ्गा जिले में पूसा रोड स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव में बसने के कारण इस वंश को 'ओयनवार' वंश कहते हैं।

ओयनवार वंश के सबसे प्रथम राजा यही पं० कामेश्वर हुए। कामेश्वर के बाद उनके पुत्र भोगेश्वर और उनके बाद उनके पुत्र गणेश्वर राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे—वीरसिंह देव और कीर्त्ति सिंह। इन्हीं कीर्त्तिसिंह के दरबार में विद्यापति ने कीर्त्तिलता का निर्माण किया था। कीर्त्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह नि सन्तान मरे तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।

राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। इनकी राजधानी

* उस समय गयासुद्दीन का राज्य काल था—लेखक

जरथपुर नामक नगर में बागमती के किनारे थी। विद्यापति के आश्रयदाता राजा शिवसिंह की राजधानी भी गजरथपुर में ही थी।

यह गजरथपुर कहाँ है ? दरभंगे से ४—५ मील पूर्व-दक्षिण कोने पर 'शिवसिंहपुर' नामक एक गाँव है, लोगों का कहना है, उसीका दूसरा नाम गजरथपुर था। वहाँ जाकर पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यहीं शिवसिंह की राजधानी थी। वृद्ध ने बतलाया कि इधर भी उस गढ़ को खोदने से कभी कभी सोना चाँदी आदि द्रव्य मिलते थे। किन्तु अब गढ़ का कहीं पता नहीं है—जहाँ पहले गढ़ था, वहाँ खेत लहरा रहे हैं। शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देखकर, मालूम होता है, ये बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ* पुरुष थे। विद्यापति के पदों में इनके नाम के साथ साथ इनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी का नाम पदों में देने से लोगों ने उलटा-सीधा बहुत कुछ अनुमान किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यों है कि विद्यापति ने जहाँ कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहाँ साथ ही साथ साधारणतया उसकी स्त्री का भी नाम दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी के नाम पदों में होने के

---

*विद्यापति के ही समान अन्य कितने ही कवि भी शिवसिंह के दरबार में थे। उन्हीं में से एक थे उमापति, जो 'पारिजातहरण' और 'रुक्मिणी परिणय' नामक भाषा-नाटकों के रचयिता कहे जाते हैं। लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को मानते थे।

—लेखक

विषय में मिथिला में एक प्रवाद है। वह यह है कि विद्यापति जिन पदों की रचना करते थे, वे सब राजा के अन्तःपुर में गाये जाते थे। राजा रानी दोनों अन्तःपुर में एकत्र बैठते, उनके चारों ओर स्त्रियाँ या बैठतीं। उस समय चेटी (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी शिवसिंह और लखिमा देवी की भणिता युक्त विद्यापति के पद गाने लगतीं। 'चेटी' स्त्रियाँ गानविद्या में निपुण होती थीं। वे महल में इसी काम के लिये नियुक्त की जातीं। विद्यापति के पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के भी नाम आये हैं। सम्भवत लखिमादेवी ही पटरानी रही हों, या इन्हींपर राजा की अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के वे अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली कर भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई। दैव दुर्विपाक से शिवसिंह कैद करके दिल्ली पहुँचाये गये। देव सिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया, किन्तु पुत्रशोक से पीड़ित रहने लगे। इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना? विद्यापति अपनी जान पर खेलकर शिवसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। कविजी दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुलतान ने हुक्म दिया कि अगर शायर हो तो कुछ करामात दिखाओ। विद्यापति ने कहा कि मैं अदृष्ट का इश्य वर्णन कर सकता हूँ। सुलतान ने एक सद्य स्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। विद्यापति गाने लगे—

दूओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंघ करू ॥
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ, दुन्दुभि सुन्दरसाद धरू ।
वीर छत्र देखन को कारन सुरगन सते गगन भरू।
आरम्भिए अन्तेट्टि महामख राजसूअ असमेध जहाँ ।
पंडित घर अचार वर वानिज जाचक काँ घर दान कहाँ ॥
विज्जावइ कविवर यहु गावए मानव मन आनन्द भओ ।
सिंहासन सिवसिंह वइठठो, उच्छवे वैरस विसरि गओ ॥

शिवसिंह ने राजगद्दी पर बैठते ही विद्यापति को बिसपी गाँव उपहार में दे दिया। राज्यारोहण के तीन ही वर्ष बाद पुनः यवन-सेना मिथिला पर आ चढ़ी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावतः ही बादशाह ने बड़ी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये। किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। आपने अपनी स्त्रियों को विद्यापति के साथ अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास रजाबनौली (नेपाल तराई) भेज दिया। राजा शिवसिंह के मित्र राजा पुरादित्य के विषय में भी कुछ विशेष बातें मालूम हुई हैं। आप द्रोणवार कुल के ब्राह्मण थे। आप बड़े ही प्रतापशाली थे और अपने बाहुबल से सप्तरी पर गण जीतकर उसमें अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी 'लिखनावली' में लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुलं तदीय वसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता
दोर्दर्पाजित सप्तरी जनपदे राज्य स्थिति कारिता ।
सग्रामेऽर्जुन भूपनिर्जितहतो वन्धोनृशसायित ।
तेनेय लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता ॥

शिवसिंह सेना के साथ बादशाह से जा भिड़े। ये शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उड़ाते हुए फिर बाहर निकल भागे। इनकी वीरता पर बादशाह मुग्ध हो गया। यवन सेना इनके पीछे दौड़ी, तो उसने मना कर दिया। शिवसिंह वहाँ से नेपाल की ओर जंगल में चले गये और पुनः अपने राज्य में न लौटे। कोई कोई कहते हैं, वे मारे गये।

शिवसिंह की मृत्यु (अथवा पलायन) के बाद मालूम होता है, विद्यापति बहुत दिनों तक लखिमा देवी* के साथ रजाबनौली में ही रहे। क्योंकि वहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में वहाँ के राजा पुरादित्य के लिये आपने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०६ लक्ष्मणाब्द में आपने स्वलिखित भागवत की पोथी भी वहीं समाप्त की। 'लिखनावली' के बाद आपने शिवसिंह के भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वासदेवी के लिये दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रंथों में समय नहीं दिये गये हैं। पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिये आपने 'विभागसागर' की रचना की थी। इनकी स्त्री धीरमती के लिये 'दानवाक्यावली' लिखी गई थी। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, इनकी अन्तिम रचना दुर्गाभक्तितरंगिणी है। यह नर

* लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जनश्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी किसी ऐतिहासिक के मत से इन्होंने शिवसिंह के बाद ९ वर्ष तक राज्य भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने कहीं भी इसकी ओर इशारा तक नहीं किया है। अतः यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है—लेखक।

माधव, हम परिनाम निरासा
तुहु जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसवासा।
आध जनम हम नींद गमायनु जरा सिसु कत दिन गेला॥
निधुवन रमनि रभसरंग मातनु तोहें भजब कओन बेला॥

आपने अपनी कविता रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था में आप इस धन को देख-देखकर कहते हैं—

जतन अनेक धन पापे बटोरल मिलि मिलि परिजन खाए।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए करम सग चलि जाए॥
ए हरि बन्दों तुअ पद नाय
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु जुवती मतिमय मेलि।
अमृत तजि किए हलाहल पीअनु सम्पद अपदहि भेलि॥

विद्यापति अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

वयस, कतए चल गेला।
तोंहे सेवइत जनम बहल, तइओ न अपन भेला॥

वयस, तुम कहाँ चले गये? तुम्हें सेवते हुए अपना जन्म बिता दिया, किन्तु तुम अपने न हुए।

कहा जाता है, अपना मृत्यु समय निकट आया जान विद्यापति अपने घर के लोगों से विदा लेकर गगा सेवन को चले। गगा सेवन की प्रथा मिथिला में अद्यावधि प्रचुर रूप से प्रचलित है। गगा-यात्रा के अवसर पर आपने अपने पुत्र को बहुत कुछ उपदेश दिया। उससे कहा—बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि सत्कार में कभी नहीं चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के

तुल्य जानना। पश्चात् विद्यापति अपनी कुल-देवी विश्वेश्वरी के निकट गये। देवी से आपने जाने की अनुमति माँगी—कहा, माँ, अब गंगा जा रहा हूँ। जन्म-भर शिव की आराधना की। अब विदा दो। घर पर सभी को संतोष दे पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले। राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तब आपने अपनी पालकी रखवा दी। एक अभिमानी भक्त की तरह कहा—मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिये दो कोस आगे नहीं बढ़ आवेगी? रात बीती। दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये। गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर पहुँच गई थी!! अभी तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है। उस स्थान का नाम 'मऊ-बाजितपुर' है। यह मुजफ्फरपुर जिले में है। वहीं विद्यापति की मृत्यु हुई। इनकी चिता पर एक शिव मन्दिर की स्थापना की गई। यह शिव-मन्दिर अभी तक विद्यमान है। विद्यापति की मृत्यु-तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है—

विद्यापतिक आयु अवसान॥
कातिक धवल त्रयोदसि जान॥

इसके अनुसार विद्यापति की मृत्यु कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी को हुई। यह तिथि प्रामाणिक समझ पड़ती है। कार्तिक महीने में गंगासेवन करने का हिन्दू-शास्त्र के अनुसार बड़ा महत्व है। विद्यापति की मृत्यु गंगा तट पर हुई थी—जब कि वे गंगा सेवा करने गये थे। अतः, इस तिथि को अप्रामाणिक मानने का कोई कारण नहीं। तुलसीदास के विषय में भी ऐसा ही एक दोहा

प्रसिद्ध है। जब यह दोहा प्रामाणिक माना जाता है, तब कोई कारण नहीं, कि यह पद प्रामाणिक न माना जाय।

विद्यापति का हस्ताक्षर

हिन्दी में ऐसे बहुत ही कम सौभाग्यशाली प्राचीन कवि हैं, जिनकी हस्तलिपि प्राप्त होती है। विशेषत विद्यापति ऐसे प्राचीन कवि की—जो चन्द को छोड़कर सभी प्रसिद्ध हिन्दी कवियों मे पहले हुए थे—हस्तलिपि प्राप्त होना, तो हमलोगों के लिये बड़े ही सौभाग्य का विषय है। विद्यापति के हाथ से लिखी हुई उनकी निज रचना, पदावली या संस्कृत पोथियाँ, नहीं पाई जातीं। हाँ, एक सटीक भागवत की पोथी विद्यापति के हाथ की लिखी हुई अवश्य पाई जाती है। यह पुस्तक दरभंगा से बारह कोस 'तरौनी' नामक गाँव में जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभंगा जिले की पण्डितमंडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति में भी यह सिद्ध है कि यह पुस्तक विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह पुस्तक ताल-पत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फीट और डेढ़ इंच तथा चौड़ाई सवा दो इंच के लगभग है। पत्र की संख्या ५७१ है। पत्र के दोनों ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ में छ: पंक्तियाँ हैं। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग अलग और स्पष्ट, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपि-दोष नहीं। रोशनाई प्राय सर्वत्र स्पष्ट। अन्तिम पत्र

फाड़ के वेष्टन के घर्षण और पन्धान के कारण जीर्ण हो गया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रन्थ के शेष में लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता संख्या ल० स० ३०९ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्री विद्यापतिलिपिरियमिति।"

अन्तिम दो अक्षर 'मिति' पत्रांश से छिन्न हो गया है। 'रजाबनौली' गाँव दरभंगे से प्रायः १५ कोस उत्तर है। शिवसिंह २९३ लक्ष्मणाब्द में राज्यासन पर बैठे थे। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है। मालूम होता है, शिवसिंह की मृत्यु के बाद विद्यापति का जी सांसारिक कार्यों से उचट गया था—कम-से कम शृङ्गारिक रचनाओं की ओर से। मित्र-वियोग पर ऐसा होना सम्भव भी है। उसी शोकावस्था में अपने चित्त की शान्ति के लिये विद्यापति ने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो।

विद्यापति का परिवार

विद्यापति के बेटे का नाम हरिपति था—विद्यापति रचित एक पद में इनका नाम आया है। विद्यापति के एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लड़की का नाम दुल्लही था। विद्यापति ने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें पति गृह गमन के समय कन्या को उपदेश दिया गया है। उन पदों में दुलही शब्द आया है। कहते हैं, ये पद विद्यापति ने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे। दुलही का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम क्या रहस्य है? मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में एक पद

प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लड़की का नाम दुलही था। अन्तिम पद में विद्यापति कहते हैं—

दुलहि, तोहर कतए छथि माय।
कहुन ओ आवथु एखन नहाय॥

'दुलही तुम्हारी, माँ कहाँ हैं, कहो न, इस समय स्नान कर आवें।

दरभंगे के वर्त्तमान राजघराने में नरपति ठाकुर नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में लोचन नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का सङ्कलन किया था। उसमें उसने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं। 'रागतरंगिणी' में एक कविता चन्द्रकला नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है—"इति श्री विद्यापतिपुत्रवध्वा." । इससे मालूम होता है, चन्द्रकला विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमल कुच'गडमण्डित कोमलम्।
अधर बिम्ब समान सुन्दर शरदचन्द्र निभाननम्॥
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्वल सौरभम्।
बाहु-घटित-मृणाल पङ्कज-हार शोभित ते शुभम्॥

शोभय सुन्दरि मम हृदयम्।
गद्गद हास सुदति निपुणम्॥

उर पीन कठिन विशाल कोमल यालि युग्म निरन्तरम्।
श्रीफला कमला विचित्र विधातु निर्मम कुचवरम्॥

श्यामा सुवेषा त्रिवलिरेखा जघन भार विलम्बिते।
मत्त गज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते॥
सुललित मन्द गमन करई।
जनि पति सँग वरटा भमई॥
अति रूप यौवन प्रथम सम्भव कि वृथा कथया प्रिये।
तेजह रूप विमोह परिहर शोक चिन्तित चिन्तये॥
उपयात मदन-व्याधि दु सह दहय पावक से घनम्।
पवन दिसे दिसे दहय पावक युग्मदारज सम्वरम्॥
श्यामा सवन्दिते।
अति समय गीत सुशोभिते॥
आत्मदान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये।
सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम्।
अधर सुधा मधु पानमियम्॥
चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोह रात्रिके।
वचन मम धर कृष्णमनुसर किन्तु काम कला शुभे॥
चन्द्रकला हे वचन करसी।
मानिनि माधवमनुसरसी॥

विद्यापति और पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकाण्ड विद्वान् हो गये हैं। आप विद्यापति के सहपाठी थे। विद्यापति ने विसपी गाँव में एक अतिथि शाला निर्माण कर रक्खी थी। प्रतिदिन भोजन के पश्चात् स्वयं विद्यापति अतिथिशाला में जाते और अतिथियों से वार्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब विद्यापति अतिथिशाला में गये तब सभी अतिथि इनकी अभ्यर्थना में खड़े हो गये। केवल कोने में एक अत्यन्त कृश पुरुष बैठा ही रहा। विद्यापति के पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि इन्होंने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता और कृशता पर इनके मुख से सहसा निकल गया—

"प्राघूनो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षित।"

'घर के कोने में सूक्ष्म कीट (घुन) वत् अतिथि सूक्ष्मता-वशात नहीं दीख पड़े।'

बैठे हुए पुरुष ने तुरत उसे श्लोक की पूर्त्ति करते हुए उत्तर दिया–

"नहि स्थूलधियं पुंसः सूक्ष्मे दृष्टिः प्रयायते॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नहीं दीख पड़ता।' विद्यापति बोली सुनते ही अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हें आदर पूर्वक अपने घर में ले गये। पक्षधर मिश्र सम्भवत विद्यापति से कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक विष्णुपुराण में ३४५ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्यापति के प्रति विद्वेष

बड़े लोगों के प्रति उनके अरोस परोस वाले सदा द्वेष भाव रखते हैं, यह बात स्वयसिद्ध है। विद्यापति के भी कुछ लोग विद्वेषी थे। विद्यापति शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, भावावेश में, निज प्रणीत नचारी गाते-गाते, वे नाचने लग जाते थे। इसी कारण कुछ लोग उन्हें 'नर्तक' नाम से चिढ़ाते थे। ऐसा प्रवाद है कि विद्यापति के एक और प्रसिद्ध विद्वेषी हो गये हैं।

इनका नाम है केशव मिश्र। इनका समय ४७२ लक्ष्मणाब्द है, अर्थात् विद्यापति के लगभग सौ वर्ष पश्चात्। ये प्रसिद्ध शाक्त थे। 'द्वैत परिशिष्ट' नामक स्वरचित ग्रन्थ में इन्होंने देवीभागवत को प्रामाणिक ग्रन्थ प्रतिपादित किया है। विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिये ये उनसे चिढ़ से गये थे। केशव मिश्र विद्यापति को 'अतिलुब्ध नगरयाचक' नाम से उपहास करते थे। विद्यापति ने बिसपी गाँव उपहार रूप में ग्रहण किया था—इसीलिये वे 'नगरयाचक' थे। द्वेष का कोई ठिकाना है! ये महाशय शिवसिंह के कुल की दौहित्र-सन्तान थे। राजकुटुम्ब के पुरुष थे। अतएव ऐसी उद्दण्डता स्वाभाविक भी है।

—ः—

पदावली

यद्यपि विद्यापति ने लगभग एक दर्जन संस्कृत ग्रंथों का निर्माण किया था, तथापि उनकी प्रसिद्धि का खास कारण है उनकी पदावली। गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते हैं। विद्यापति ने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए हैं। विद्यापति ने कविता में अपना आदर्श जयदेव को माना है—लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अतः, जयदेव के ही समान वे संगीत-पूर्ण कोमल कान्त पदावली में शृङ्गारिक रचना करते थे। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, दरभंगे के वर्त्तमान अधिपति के पूर्वपुरुष नरपति ठाकुर के समय में 'लोचन' नामक एक कवि हो गये हैं। उन्होंने अपनी 'रागतरंगिणी' नामक पुस्तक में लिखा है कि सुमति नामक एक कलाविद् कायस्थ कथक के लड़के जयत को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था। विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

सुमति सुतोदय जन्मा जयत· शिवसिंहदेवेन।
पंडितवर कविशेखर विद्यापतये तु सन्यस्त॥

बिना संगीत का मर्म जाने संगीत की रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, विद्यापति स्वयं भी गान विद्या में पारंगत थे। विद्यापति के पदों में कहीं कहीं छन्दोभंग से दीख पड़ते हैं। सूरदास के पदों में यही बात पाई जाती है। किन्तु यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। संगीत के सुर-लय के अनुसार जो पद बनाये जाते हैं, उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है, अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीसे संगीत से अपरिचित व्यक्तियों को पदों में छन्दोभंग का आभास मिल जाता है।

पदावली का रूप

विद्यापति ने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चलता है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह प्रकाशित किया था। बाबू ब्रजनन्दन सहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे पद हैं, जो नगेन्द्रनाथ गुप्त वाले संस्करण में नहीं हैं। सहायजी के नये पदों में नचारियों की ही प्रधानता है। किन्तु अभी तक विद्यापति के बहुत से अनूठे पद अप्रकाशित ही हैं। मिथिला की स्त्रियाँ जिन पदों को विवाह के अवसर पर गाती हैं उनका, तथा बहुत सी नचारियों का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणों को देखने से पता चलता है, कि विद्यापति ने नये पदों की रचना विषय विभाग के अनुसार नहीं की थी। बिहारी के ही समान विद्यापति भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगों ने उन्हें अलग अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो विद्यापति के अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही हैं और उन्हींका संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बँगला के प्राचीन संग्रह ग्रंथों में है, किन्तु हाल में तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ मिले हैं, जिन से विद्यापति के कितने नवीन पद प्राप्त हुए हैं, एवं पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रन्थों में सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी भी विद्यापति लिखित 'भागवत' के साथ 'तरौनी' ग्राम के स्वर्गीय पंडित लोकनाथ झा के घर में सुरक्षित

विद्यापति की पदावली

(सटिप्पण)



वन्दना

(१)

नन्द क नन्दन कदम्ब क तरु-तर
धिरे धिरे मुरलि बजाय।
समय सँकेत-निकेतन बइसल बैठल
बेरि बेरि बोलि पठाव ॥२॥
सामरि, तोग लागि
प्रतिपल अनुखन विकल मुरारि ॥३॥

१—नन्द क नन्दन=नन्द के बेटे, श्रीकृष्ण। तर=तले, नीचे। २—सँकेत-निकेतन=मिलने का निर्दिष्ट स्थान। बइसल=बैठे हुए। बेरि बेरि=बार बार। (संकेत स्थान में बैठकर मिलन का समय आया जान) बार बार बुला रहे हैं (बंशी में पुकार रहे हैं)—"नामसमेतम् कृतसंकेतम् वादयते मृदुवेणुम्"—गीतगोविन्द। ३—सामरि=श्यामा, सुन्दरी,—"शीते सुखोष्णसर्वांगी, ग्रीष्मे च सुखशीतला। तप्तकाञ्चन वर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते॥" तोरा लागि=तुम्हारे वास्ते। अनुखन=प्रतिक्षण।

जमुना क तिर उपवन उदवेगल
फिरि फिरि ततहि निहारि।
गोरस बेंचए अवइत जाइत
जनि जनि पुछ वनमारि ॥५॥
तोंहे मतिमान, सुमति, मधुसूदन
वचन सुनह किछु मोरा।
भनइ विद्यापति सुन वरजौवति
वन्दह नन्द-किसोरा ॥७॥

४-५ तिर = तट। उदवेगल = उद्विग्न हुआ, व्याकुल। तवहि = उसी तरफ। जनि जनि = प्रत्येक स्त्री से (पुल्लिंग जन, स्त्री० जनि) यमुना के किनारे उपवन में (भ्रमण करते हुए) व्याकुल होकर पुन पुन उसी ओर (तुम्हारे आगमन पथ को ओर) देखते हैं, और दूध-दही बेचने को आने जानेवाली प्रत्येक रमणी से वनमाली श्रीकृष्ण (तुम्हारे विषय में) पूछते हैं। ६—मतिमान = अनुरक्त। हे सुमति! मेरी कुछ बातें सुनो, मधुसूदन तुमपर अनुरक्त हैं। ७—भनइ = कहते हैं। जौवति = युवती। वन्दह = वन्दना करो।

"ते सुकृती रस सिद्ध कवि, वन्दनीय जग माँहि।
जिनके सुजस-सरीर कहँ, जरा मरन भय नाँहि॥"

(२)

(राधा की वन्दना)

देख देख राधा रूप अपार।
अपुरुब के बिहि आनि मिलाओल
खिति तल लावनि-सार ॥२॥
अगहि अंग अनँग मुरछायत
हेरए पडए अथीर।
मनमथ कोटि-मथन करु जे जन
से हेरि महि-मधि गीर ॥४॥
कत कत लखिमी चरन-तल नेओछए
रगिनि हेरि विभोरि।
करु अभिलाख मनहि पदपंकज
अहोनिसि कोर अगोरि ॥६॥

२—अपुरुब = अपूर्व। बिहि = विधि, ब्रह्मा। आनि मिलाओल = ला मिलाया, रच दिखाया। खिति = क्षिति, पृथ्वी। लावनि = लावण्य। ३—अनँग = कामदेव। हेरए = देखकर। अथीर = अस्थिर, चंचल। ४—मनमथ = कामदेव। मधि = में। जो करोड़ों कामदेवों का (अपने सौंदर्य से) मथन करते हैं, (वह श्रीकृष्ण भी) जिसे देखकर (मूर्च्छित हो) पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। ५—लखिमी = लक्ष्मी। नेओछए = न्यौछावर करते हैं। रगिनी = सुन्दरी। विभोरि = बेसुध होकर। ६—अहोनिसि = अहर्निश, दिन रात। कोर = गोद। अगोरि = (मैथिली) यत्न पूर्वक रखना। ६—मन में अभिलाषा होती है कि इस पद कमल को रात दिन गोदी में 'अगोर कर' रखे।

(३)
(देवी-वंदना)

जय जय भैरवि असुर-भयाउनि
पसुपति-भामिनि माया ।
सहज सुमति वर दिअओ गोसाउनि
अनुगति गति तुअ पाया ॥२॥
वासर-रैनि सवासन सोभित
चरन, चन्द्रमनि चूड़ा ।
कतओक दैत्य मारि मुँह मेलल,
कतओ उगिल केल कूड़ा ॥४॥
सामर बरन, नयन अनुरंजित,
जलद-जोग फुल कोका ।
कट कट विकट ओठ-पुट पाँडरि
लिधुर-फेन उठ फोका ॥६॥
घन घन घनए घुघुर कत बाजए,
हन हन कर तुअ काता ।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र बिसरु जनि माता ॥८॥

२—दिअओ = दो । गोसाउनि = गोस्वामिनी, भगवती । पाया=पैर ।
३—वासर = दिन । रैनि = रात । सवासन = शवासन = मुर्दे पर आसन । चन्द्रमनि = चन्द्रकान्तमणि । चूड़ा = सिर । ४—कतओक = कितना ही । मेलल = रक्खा । कूड़ा केल = चूर-चूर कर दिया । अनुरंजित = रँगा हुआ, लाल । जलद जोग फुल कोका = बादल में कमल फूले हों । पाँडरि = एक लाल फूल । फोका = बुदबुद । ७—काता = कत्ता, कटार ।

(४)

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल।
स्रवन क पथ दुहु लोचन लेल ॥२॥
वचन क चातुरि लहु-लहु हाँस।
धरनिये चाँद कपल परगास ॥४॥
मुकुर लई अब करई सिंगार।
सखि पूछइ कइसे सुरत-विहार ॥६॥
निरजन उरज हेरइ कत बेरि।
हसइ से अपन पयोधर हेरि ॥८॥
पहिल बदरि-सम पुन नवरंग।
दिन-दिन अनंग अगोरल अंग ॥१०॥
माधव पेखल अपुरुब बाला।
सैसव जौवन दुहु एक भेला ॥१२॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
दुहु एक जोग इह के कह सयानि ॥१४॥

—सैभव = शिशुता, बचपन। जौवन = जवानी। २—दोनों
कानों की राह पकड़ी = कटाक्ष करना आरम्भ किया। ३—लहु =
। हास = हँसी। ४-परगास = प्रकाश। ५—मुकुर = आईना।
वहार = काम क्रीड़ा। ७—निरजन = एकान्त में। उरज =
। है। "स्मित किंचिदक सरलतरलो
भपि नवविलासोक्तिसरस। गतीना
। स्पृशन्त्यारत्तारुण्य किमिह न दि
का फल। नवरंग = नारंगी, नीबू।

(५)

सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु दल-बले दन्द परि गेल ॥२॥
कबहु बाँधय कच कबहु बिथारि ।
कबहु झाँपय अँग कबहु उघारि ॥४॥
अति थिर नयन अथिर किछु भेल ।
उरज-उदय-थल लालिम देल ॥६॥
चचल चरन, चित चञ्चल भान ।
जागल मनसिज मुदित नयान ॥८॥
विद्यापति कह सुनु वर कान ।
धैरज धरह मिलायब आन ॥१०॥

कुच, पहले बैर के समान छोटे थे, पुन नारगी से हुए । १०—अनँग = कामदेव । झगोरल = पहरा दिया । ११—पेखल = देखा । अपुरुब = अपूर्व । १२—भेला = भया, हुआ । १४—के कह = कौन कहता है ।

२— दन्द = द्वन्द्व = युद्ध । परिगेल = पड़ गया, शुरू हो गया, ठन गया । दोनों (शैशव और यौवन) के सैन्यबल में द्वन्द्व युद्ध छिड़ गया । ३—कच = केश । बिथारि = खोल देना । ४—अँग = देह, (यहाँ छाती) । ५—अथिर = चचल । ६—उरज = कुच । उदयथल—उगने का स्थान । देल = दिया । कुचों के उत्पन्न होने के स्थान में लालिमा छा गई । ७—भान = मालूम होना । पैर चचल थे ही, अब चित्त भी चचल मालूम होता है । ८—मुदित = बंद । नयान = आँखें । कामदेव जाग तो गया, पर उसकी आँखें बद ही हैं, नहीं खुलतीं । ९—कान = कान्ह, कृष्ण । १०— आन = लाकर ।

(६)

सैसव जौवन दरसन भेल।
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ॥२॥
मदन क भाव पहिल परचार।
भिन जन देल भिन्न अधिकार ॥४॥
कटि क गौरव पाओल नितम्ब।
एक क खीन अओक अवलम्ब ॥६॥
प्रगट हास अब गोपत भेल।
उरज प्रगट अब तन्हिक लेल ॥८॥
चरन चपल गति लोचन पाव।
लोचन क धैरज पदतल जाव ॥१०॥
नव कविसेखर कि कहइत पार।
भिन भिन राज भिन्न वेवहार ॥१२॥

२—मनसिज = काम। दोनों को राह में देखते हुए कामदेव ने (बाला के शरीर में) गमन किया। ३—पहिल परचार = प्रथम प्रचारित हुआ। ५—कटि क = कमर का। गौरव = गुरुता। नितम्ब = चूतड़। ६—खीन = क्षीण, पतला। अओक = अन्य का = दूसरे का। ७,८—गोपत = गुप्त। तन्हिक = उसका। प्रकट हँसी अब गुप्त हुई और उसकी प्रकटता अब कुचों ने ले ली। १०—धैरज = धीरता। 'काव्यप्रकाश में कहा है—श्रोणीबन्धस्त्यजति तनुतां सेवते मध्यभाग। पद्भ्यां मुक्तास्तरलगतय संश्रितालोचनाभ्याम्॥ वक्ष प्राप्त कुच सचिवतामद्वितीयन्तु वक्त्रं। तद्गात्राणां गुणविनिमय कल्पितो यौवनेन। ११—नव कविसेखर = विद्यापति का उपनाम।

(७)

किछु किछु उतपति अंकुर भेल।
चरन-चपल-गति लोचन लेल ॥२॥
अब सब खन रहु आँचर हात।
लाजे सखिगन न पुछए बात ॥४॥
कि कहब माधव वयस क सधि।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ॥६॥
तइअओ काम हृदय अनुपाम।
रोपल घट ऊचल कए ठाम ॥८॥
सुनइत रस-कथा थापय चीत।
जइसे कुरगिनी सुनए सँगीत ॥१०॥
सैसव जौवन उपजल वाद।
केओ न मानए जय-अवसाद ॥१२॥
विद्यापति कौतुक बलिहारि।
सैसव से तनु छोडनहि पारि ॥१४॥

---

१ अकुर = कुचों के अँकुरे । ३-खन = क्षण । हात = हाथ । ५ ६, माधव ! वय सधि (की बातें) क्या कहूँ, देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया। ७ ८ तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उसके अनुपम हृदय पर घट स्थापित कर उस स्थान को ऊँचा कर दिया। ९—थापय = स्थापित करती है। १०—कुरगिनी = हरिणी। ११—उपजल वाद = होड़ मची। १२—केओ = कोई। अवसाद = पराजय। १४—शैशव को उसका शरीर छोड़ना ही पड़ेगा।

(८)

पहिल बदरि कुच पुन नवरग।
दिन दिन बाढ़य पिड़ए अनग ॥२॥
से पुन भए गेल बीजकपोर।
अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर ॥४॥
माधव पेखल रमनि सधान।
घाटहि भेटल करत सिनान ॥६॥
तनसुक सुबसन हिरदय लागि।
जे पुरुख देखब तेकर भागि ॥८॥
उर हिल्लोलित चाँचर केस।
चामर झाँपल कनक-महेस ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह मुरारि।
सुपुरुख बिलसए से बरनारि ॥१२॥

१—बदरि = बेर (फल)। नवरग = नारंगी। २—पिड़ए = पीड़ा देता है। ३—बीजकपोर = बीजपूर, बड़ा (जम) नींबू, जैसे, बीज क्रमशः बढ़ते बढ़ते पोर (वृक्ष की मुटाई और गाँठ) बनता है उसी तरह कुच भी बढ़े और मोटे हो चले। ४—सिरिफल = श्रीफल, बेल। १-४, एक संस्कृत श्लोक है—

इन्दुभेद प्रतिपथपक्वबदरीभाव समेता क्रमात्। पुनागद्रुविभाव्य पूगपदवीमाश्रित्य बिल्वश्रियम्॥ लब्धा तालफलोपमाँ च ललितामासाद्य भूयोऽधुना। चचत् कांचनकुम्भजृम्भनमिमावस्याः स्तनौ विभ्रत॥ ५—पेखल = देखा। सिनान = स्नान। तनसुक = एक प्रकार का महीन कपड़ा। हिल्लोलित = झूलता हुआ। चाँचर = चंचल। ९ १०—हृदय पर झाँझरी से बने हुए बाल डोल रहे हैं, मानो सोने के महादेव को चँवर से ढक दिया हो। १२—विलसए = विलास करें।

(६)

खने खन नयन कोन अनुसरई।
खने खन वसन धूलि तनु भरई ॥२॥
खने खन दसन-छटा छुटहास।
खने खन अधर आगे गहु वास ॥४॥
चउँकि चलए खने खन चलु मन्द।
मनमथ-पाठ पहिल अनुबन्ध ॥६॥
हिरदय-मुकुल हेरि हेरि थोर।
खने आँचर दए खने होय भोर ॥८॥
बाला सैसव तारुन भेट।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ ॥१०॥
विद्यापति कह सुन वर कान।
तरुनिम सैसव चिन्हइ न जान ॥१२॥

१—खने खन = क्षण क्षण। क्षण क्षण में आँखें कोण का नुसरण करती हैं—कटाक्ष करती हैं। २—क्षण क्षण में अस्तव्यस्त त्र (चंचल धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भरते हैं। —दसन = दाँत। हास = हँसी। ४—अधर = होंठ। वास = वस्त्र। —अनुबन्ध = भूमिका। ७—हिरदय मुकुल = हृदय की कली, च। ८—भोर = भूल जाना। ९-१०—तारुन = तरुनाई, जवानी। नेठ = कनिष्ठ = छोटा। बाला के शरीर में बचपन और जवानी भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है। इन दोनों में कौन बड़ा और न छोटा (कौन निर्बल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता। १—कान = कान्ह, कृष्ण। १२—तरुनिम = जवानी।

(१०)

पीन पयोधर दूबरि गता।
मेरु उपजल कनक-लता ॥२॥
    ए कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई।
    अति अपूरब देखलि साई ॥४॥
मुख मनोहर अधर रगे।
फूललि मधुरी कमल सगे ॥६॥
    लोचन-जुगल भृंग अकारे।
    मधु क मातल उडए न पारे ॥८॥
भउँह क कथा पूछह जनू।
मदन जोडल काजर धनू ॥१०॥
    भन विद्यापति दूति बचने।
    एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१–२, पीन = पुष्ट। पयोधर = कुच। गता = गात, शरीर। मेरु = सुमेरु पर्वत। दुबली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है, मानों सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो। ४—अपूरब = अपूर्व। साइ = उसे। ५–६, अधर = ओष्ठ। रगे = रँगे हुए, लाल। मधुरी = एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष होता है। सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानो कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो। ७-८—भृंग = भौंरा। मधु क मातल = मधु पीकर मस्त बना। (उस मुख कमल में) दोनों लोचन भौंरे के समान है जो (मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होनेसे उड़ नहीं सकते।

(१०)

पीन पयोधर दूबरि गता।
मेरु उपजल कनक-लता ॥२॥
ए कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई।
अति अपूरुब देखलि साई ॥४॥
मुख मनोहर अधर रंगे।
फूललि मधुरी कमल संगे ॥६॥
लोचन-जुगल भृंग अकारे।
मधु क मातल उड़ए न पारे ॥८॥
भउँह क कथा पूछह जनू।
मदन जोड़ल काजर-धनू ॥१०॥
भन विद्यापति दूति वचने।
एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१–२, पीन = पुष्ट। पयोधर = कुच। गता = गात, शरीर। मेरु = सुमेरु पर्वत। दुबली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है, मानों सोने की ल[illegible] (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो। ४—अपूरुब = अपूर्व। साई = उसे। ५–६, अधर = ओष्ठ। रंगे = रँगे हुए, लाल मधुरी = एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष हो[illegible] है। सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानो कमल के फू[illegible] के साथ मधुरी फूली हो। ७-८—भृंग = भौंरा। मधु क मातल = म[illegible] पीकर मस्त बना। (उस मुख कमल में) दोनों लोचन भौंरे के सम[illegible] है जो (मुख-कमल का) मधु पीकर मत्त होनेसे उड़ नहीं सकते।

(१२)

माधव, की कहब सुन्दरि रूपे।
कतेक जतन विहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे ॥२॥
पल्लव राज चरन-जुग सोभित
गति गजराज क भाने।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ॥४॥
मेरु उपर दुइ कमल फुलायल
नाल बिना रुचि पाई।
मनि-मय हार धार बहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई ॥६॥

(नोट—"अद्भुद एक अनूपम बाग" शीर्षक सूरदास का एक प्रसिद्ध पद्य है। साहित्य संसार में उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। सूरदास से डेढ़ सौ वर्ष पहले रची गई यह कविता पढ़कर, पाठक, विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें।)

१—की = क्या। २—बिहि = विधि, ब्रह्मा। सरूपे = सत्य, प्रत्यक्ष। ३—पल्लवराज = कमल। ४—कनक-कदलि = सोने के केले का थम्भ (जाँघ की उपमा)। सिंह = (कटि की उपमा)। मेरु = पहाड़ (उभड़ी हुई छाती)। ५—दुइ कमल = दो कमल (दोनों कुच)। नाल = डंटी। रुचि = शोभा। ६—(कुचों पर) मणि माला रूपी गंगा की धारा बह रही है, इसीसे—उसके स्रोत में —(बिना नाल के भी दोनों कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते।

अधर बिम्ब सन, दसन दाड़िम बिजु
रवि ससि उगथिक पासे।
राहु दूर बस नियरो न आबथि
तें नहि करथि गरासे ॥८॥
सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने।
सारँग उपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधुपाने ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
एहन जगत नहि आने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन—
लखिमा देइ पति भाने ॥१२॥

७—अधर = ओठ। बिम्बफल। सन = ऐसा। दसन = दाँत। दाड़िम = अनार। बिजु = बीज, दाना। रवि ससि उगथिक पासे = सूर्य चन्द्र एक साथ उगे हैं (चन्द्रमा ऐसे मुख में बाल सूर्य सा लाल सिंदूर है)। ८—राहु = (केश की उपमा)। नियरो = निकट। ९—सारँग = (१) हरिण। सारँग = (२) कोयल। सारँग = (३) कामदेव। सारँग तसु समधाने = उसके सधान में—कटाक्ष में—काम (बसता) है। १०-सारँग = (४) कमल (ललाट)। दस = (यहाँ बहुवाची)। सारँग = (५) भौंरा (केशों के लटके हुए गुच्छे)। मधुपाने = रस पीकर। (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) हैं, जो मधुपान कर केलि कर रहे हैं। एहन = ऐसा। आने = दूसरा।

(१३)

जुगल सैल-सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ॥ १ ॥
फुलति मधुरि फुल सिंदुर लोटाएल
पाँति बइसलि गज-मोति रे।
आज देखल जत के पतिआएत
अपुरुब बिहि निरमान रे ॥ ३ ॥
× × × ×
विपरित कनक-कदलि-तर सोभित
थल पकज के रूप रे।
तथहु मनोहर वाजन वाजए
जनि जागे मनसिज भूप रे ॥ ५ ॥
भनइ विद्यापति पूरब पुन तह
पेसनि भजए रसमन्त रे।
बुझल सकल रस नृप सिवसिंघ
लखिमा देइ कर कन्त रे ॥ ७ ॥

१—जुगल सैल = दो पहाड़ (कुचों की उपमा)। सिम = सीमा में, निकट। हिमकर = चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल = (मुख की उपमा)। दुइ जोति = दो ज्योतियाँ (दो आँखें)। २—मधुरि फुल = एक तरह का लाल फूल। फूली हुई मधुरी (फूल) सिंदूर पर लोटती है। और, दाँत क्या है, गजमुक्ताओं की पंक्ति बैठी है। ४—बिपरित = उलटा। कनक कदलि = (जाँघ की उपमा)। थल पकज = स्थल कमल (पैर की उपमा)। ५—तथहु = वहाँ भी। मनसिज = कामदेव। ६—पुन = पुण्य। पेसनि = ऐसा। रसमत = रसवती, सुरसिका।

(१४)

चाँद-सार लए मुख-घटना कर
लोचन चकित चकोरे।
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि
दह दिसि भेल उँजोरे ॥ २ ॥
कामिनि कोने गढली।
रूप सरूप मोयँ कहइत असंभव
लोचन लागि रहली ॥ ४ ॥
गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माभ-खानि खीनि निमाई।
भागि जाइत मनसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुभाई ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति अद्भुत कौतुक
ई सब बचन सरूपे।
रूपनरायन ई रस जानथि
सिवसिंघ मिथिला भूपे ॥ ८ ॥

१—२, चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की, (जिसे देखते ही) चकोर की आँखें चकित हुईं। बाला ने (अपने मुख चन्द्र को) अंचल से पोंछकर जो अमृत धो बहाया, वही (चाँदनी के रूप में) दसों दिशाओं में प्रकाशित हुआ। ३—कोने—किसने। गढली = गढ़ा, रचा। ५—भरे = भार से। माझ खानि = मध्य भाग में (कटि)। खीनि = क्षीण, पतली। निमाई = निर्माण की। ६—त्रिवलि लता = त्रिवली = पेट में पड़ी तीन रेखाएँ।

(१५)

सुधामुखि के विहि निरमिल वाला।
अपरुब रूप मनोभव-मगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥ २ ॥
सुन्दर वदन चारु अरु लोचन
काजर-रंजित भेला।
कनक-कमल माझ काल-भुजगिनी
स्रीयुत, खजन खेला ॥ ४ ॥
नाभि-विवर सयँ लोम-लतावलि
भुजगि निसास-पियासा।
नासा-खगपति-चचु भरम-भय
कुच-गिरि-सधि निवासा ॥ ६ ॥

१—के विहि = किस विधाता ने। निरमिल = निर्माण किया। २—मनोभव मगल = कामदेव का शुभ स्वरूप—"मनोभव मगल कमल सहोदरे"—गीतगोविन्द। त्रिभुवन विजयी माला = तीनों भुवनों को पराजित करनेवाली माला के समान। ३—४ वदन = मुखड़ा। भेला = हुआ। माझ = मध्य में। स्रीयुत = सुन्दर। सुन्दर मुख में सुन्दर काजल लगी आखें हैं, मानों सोने के कमल (मुख) में काल-सर्पिणी (अंजन) क्रीड़ा कर रही हो। अथवा मानों काल भुजगिनी रूपी आँखें कनक कमलरूपी मुख के बीच सुन्दर (स्रीयुत) खजन की तरह खेल रही हों। ५—६, विवर = बिल, छेद। सयँ = से। लोम लतावली = बाल-रूपी लताएँ, पंक्तिबद्ध बाल। भुजगि = सर्पिणी। निसास = साँस। खगपति = गरुड़। चंचु = चोंच। नाभी रूपी बिल से पंक्तिबद्ध बाल रूपी सर्पिणी (नायिका

तिन बान मदन तेजल तिन भुवने
अवधि रहल दश्रो बाने।
विधि बड दारुन बधए रसिकजन
सौंपल तोहर नयाने ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
इह रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ १० ॥

की सुगन्धित) साँसों की प्यास में (आगे बढ़ी), किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझकर, डर से कुच रूपी (दो) पर्वतों के बीच के (सकीर्ण) मिलन स्थान में आ बसी। ७—८ तिन = तीन। तेजल = छोड़ा। अवधि = अवशिष्ट, बाकी। रहल = रहा। दओ = दो। बधए = बधने को, हत्या करने को। तोहर = तुम्हारे। नयान = आँखें। (कामदेव को पञ्चबाण कहते हैं, सो) मदन ने अपने (पाँच बाणों में से) तीन बाण तो तीन लोकों में छोड़े, शेष उसके दो बाण रह गये। ब्रह्मा बड़ा ही निष्ठुर है, (उन बचे हुए दो बाणों को) रसिकों की हत्या करने के लिये तुम्हारे नयनों को सौंप दिया। ९—इह रस केओ पए जाने = यह रस कोई-कोई ही जानता है। १०—देइ—देवी। रमाने = रमण, पति।

"हृदय सिंधु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना।
जो बरसै बर बारि बिचारू। होहि 'कवित' चिंतामनि चारू॥"

(१६)

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे
बिहि निरमाओल आनि ॥ २ ॥
हस्ति-गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राजकुमारि।
जिनकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ॥ ४ ॥
नील वसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल चिकुर सँभारि।
तापर भमरा पिबए रस सजनि गे
बइसल पाँखि पसारि ॥ ६ ॥
केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ॥ ८ ॥

१—नागरि = नगर निवासिनी, सुचतुरा। आगरि = अग्रगण्या। २—सनि = समान। निरमाओल आनि = लाकर बनाया। ३—जकाँ = ऐसा। ४—जिनकर = जिसकी। एहनि = ऐसी। ५—चिकुर = केश। ६—तापर = उसपर। भमरा = भौंरा। ७—केहरि = सिंह। अछि = (अस्ति) है। अम्बुज = कमल। धारि = धारण करो, समझो। ८—अवधारि = निश्चय

(१७)

चिकुर-निकर तम-सम
पुनु आनन पुनिम ससी।
नयन-पंकज के पतिआओत
एक ठाम रहु बसी ॥ २ ॥
आज मोयँ देखलि बारा।
लुबुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥ ४ ॥
सहज सुन्दर गोर कलेवर
पीन पयोधर सिरी।
कनक लता अति विपरित
फरल जुगल गिरी ॥ ६ ॥
भन विद्यापति विहि क घटन
के न अदभुद जान।
राय सिवसिंघ रुपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥ ८ ॥

१—२—चिकुर निकर = केश समूह । पुनिम = पूर्णिमा का। ठाम = स्थान। केश समूह अंधकार के समान है, फिर, मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मोयँ = मैंने। बारा = बाला। ४—लुबुध = लुब्ध, अनुरक्त। चालक = सञ्चालन करनेवाला। मयन—काम। की परकारा = किस प्रकार। ५—सिरी = श्री, शोभायुक्त। ६—फरल = फला। ७—घटन = सृष्टि।

(१८)

सजनी, अपरुप पेखल रामा।
कनक-लता अवलम्बन ऊअल
हरिन-हीन हिमधामा ॥ २ ॥
नयन-नलिनि दओ अञ्जन रञ्जइ
भौंह विभंग-विलासा।
चकित चकोर-जोर विधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥ ४ ॥
गिरिवर-गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज-मोति क हारा।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारत सुरसरि-धारा ॥ ६ ॥
पएसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पावए बहुभागी।
विद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥ ८ ॥

१—अपरप = अपूर्व। पेखल = देखा। रामा = सुन्दरी। २—कनक लता = सोने की लता (देह)। ऊअल = उदय हुआ। हरिन हीन हिमधामा = निष्कलंक चन्द्र (मुख)। ३—नलिनी = कमलिनी। दओ = दो। भौंह-विभंग विलासा = कुटिल कटीली भौंहें—मवों—में भाव भंगी। ४—जोर = जोड़ा। बाँधल = बाँधा है। पास = पास में, रस्सी में। ५–६ गिरिवर गरुअ = पहाड़ के ऐसे भारी। पयोधर = कुच। गिम = ग्रीवा, कण्ठ। गजमोतिक = गजमुक्ता की। कम्बु = शंख। कनक = सोना। पहाड़

(१६)

कनक-लता अरविन्दा।
दमना माँझ उगल जनि चन्दा ॥ २ ॥
केहु कहे सेवल छपला।
केहु बोले नहि नहि मेघे झपला ॥ ४ ॥
केहु कहे भमए भमरा।
केहु बोले नहि नहि चरए चकोरा ॥ ६ ॥
ससय परल सब देखी।
केहु बोलए ताहि जुगुति विसेखी ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति गावे।
वड पुन गुनमति पुनमत पावे ॥१०॥

ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानों, कामदेव शंख (कण्ठ) में भरकर, सोने के महादेव (कुचों) पर, गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो। ७—पएसि = पैठकर, जाकर। पयाग = प्रयाग में। जाग = यज्ञ। सत = शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१—२, दमना = द्रोणलता। माँझ = में। उगल = उदय हुआ। जनि = मानो। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण लता पर चन्द्रमा उगा है। ३—केहु = कोई। कहे = कहता है। सेवल = शैवाल, सेंवार। छपला = छिपा हुआ। ४—४, झपला = ढँपा हुआ। ५—भमए भमरा = भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए = चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परल = पड़ गया। १०—पुन = पुण्य से। पुनमत = पुण्यवत।

(२२)

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचन तरल तरङ्ग ।
अकास पताल वस सेओ कइसे भेल अस
चाँद सरोरुह सँग ॥२॥
विहि निरमलि रामा दोसरि लछि समा
भल तुलाएल निरमान ॥३॥
कुच-मडल सिरि हेरि कनक-गिरि
लाजे दिगन्तर गेल ।
केओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ॥५॥
माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाए जनु
विधि अनुसए भेल साजि ।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जानि
जतन सिरिजु रोमराजि ॥७॥
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त ।
सिर सिवसिंघ राउ पुरुख सुकृत पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ॥६॥

३—लछि = लक्ष्मी । तुलाएल = तुल्य हुआ, समान हुआ । ४—सिरि = श्री, शोभा । ६—माझ खीनि = बीच में पतली (कटि) । भरे = बोझ से । भाँगि जाए = टूटि जाये । अनुसए = आशंका । ७—पटोर = रेशम । सिरिजु = बनाया । रोमराजि = केश समूह ।

आइत पेखल नहायलि गोरी।
कति सयँ रूप धनि आनलि चोरी ॥ २ ॥
केस निगारइत बह जल-धारा।
चमर गरए जनि मोतिम हारा ॥ ४ ॥
अलकहि तीतल तैं अति सोभा।
अलिकुल कमल बेढ़ल मधुलोभा ॥ ६ ॥
नीर निरंजन लोचन राता।
सिंदुर मँडित जनि पंकज-पाता ॥ ८ ॥
सजल चीर रह पयोधर सीमा।
कनक-बेल जनि पड़ि गेल हीमा ॥१०॥
ओ नुकि करतहि चाहि किए देहा।
अबहि छोड़ब मोहि तेजब नेहा ॥१२॥
ऐसन रस नहि पाओब आरा।
इथे लागि रोइ गरए जलधारा ॥१४॥
विद्यापति कह सुनह मुरारि।
बसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२–कति सयँ = कहाँ से। आनलि चोरी = चुरा लाई। ३–निगारइत = गारते समय, पानी निचोड़ते समय। ४–चमर = चँवर से। ५–अलक = केश। तीतल = भीगा हुआ। तैं = इससे ... कुल = भ्रमर गण। बेढ़ल = घेर लिया। ७–पानी ... कारण आँखें अञ्जन हीन और लाल हो गई हैं। ... का पत्ता। ६–पयोधर सीमा = कुचों पर।

(२६)

नहाइ उठल तीर राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान।
गुरुजन सग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरब बयान ॥ २ ॥
सखि हे, अपरुब चातुरि गोरि।
सब जन तेजि कए अगुसरि सचरि
आड बदन तँहि फेरि ॥ ४ ॥
तँहि पुन मोति-हार तोरि फेंकल
कहइत हार टुटि गेल।
सब जन एक-एक चुनि सचरु
स्याम-दरस धनि लेल ॥ ६ ॥
नयन-चकोर कान्हु-मुख ससि-बर
कएल अमिय-रस-पान।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारल
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

बिल्व फल। पड़ि गेल = पड़ गया। हीमा = बर्फ। ११-ओ = (वस्त्र)। नुकि करतहि चाहि = छिपाना चाहता है। किए = क्यों
१३-ऐसन = ऐसा। भारा = अ'धप। १४-इथे = इस लिये।

१-राइ = राधा। हेरल = देखा। कान = कृष्ण। २-नत = नीचे
बयान = वदन, मुख। ४-अगुसरि = अग्रसर, आगे। सचरि = जाकर
आड़ = ओट। ५-तोरि फेंकल = तोड़ कर फेंक दिया। टुटि गेल = टूट गया। ६-लेल = लिया। ७-कएल = किया। अमिय = अमृत

श्रीकृष्ण का प्रेम

(२७)

पथ-गति नयन मिलल राधा कान।
दुहु मन मनसिज पूरल सधान॥ २॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।
समय न बूझए अचतुर चोर॥ ४॥
विदगधि सगिनी सब रस जान।
कुटिल नयन कएलहि समधान॥ ६॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई।
कह कवि सेखर दुहु चतुराई॥ ८॥

१—२, पथगति = राह में जाते हुए। कान = कृष्ण। २—मनसिज = कामदेव। पूरल = पूरा किया। सधान = बाण का सचालन। पथ में जाते हुए राधा कृष्ण दोनों आँखों से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनों के मन में कामदेव ने अपने बाण का सचालन किया—दोनों के हृदय में काम का सचार हुआ। ३—हेरइत = देखते ही। भेल भोर = बेसुध हुए। ४—समय न बूझए = अवसर नहीं समझता। ५—विदगधि—विदग्ध, सुरसिका। ६—कुटिल नयन = टेढ़ी चितवन से—इशारे से। कएलहि = कर दिया। समधान = सावधान। ७—उरझाई = उलझकर।

"चरन धरत चिंता करत, चहत न नेकहु सोर।
ढूँढ़त है सुबरन सदा, कवि व्यभिचारी चोर॥"

(२८)

सजनी, भल कए पेखल न भेल।
मेघ-माल सयँ तड़ित-लता जनि
। हिरदय सेल दई गेल ॥ २ ॥
आध आँचर खसि आध वदन हसि
आधहि नयन-तरङ्ग।
आध उरज हेरि आध आँचर भरि
तवधरि दगधे अनङ्ग ॥ ४ ॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतुन काचला उपाम।
हार हारल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥ ६ ॥
दसन मुकुता-पाँति अधर मिलायल
मृदु मृदु कहतहि भासा।
विद्यापति कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पुरल आसा ॥ ८ ॥

१—भल कए = अच्छी तरह। पेखल न भेल = देख न सका। २—सयँ = संग में, साथ में। तड़ित लता = बिजली। जनि = मानों। ३—नयन-तरंग = कटाक्ष। ४—उरज = कुच। तवधरि = तब से। दगधे = जलाता है। अनंग = काम। ५—कनक कटोरा = सोने का कटोरा (कुच)। अतनु = कामदेव। एक तो शरीर गौरवर्ण है और उसपर से (कुच) मानों मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कोंच (बलपूर्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है। ६—जनि बूझि ऐसन = ऐसा समझ पड़ता है मानों। ७—दसन = दाँत। अधर = ओष्ठ। भासा = भाषा, वचन। ८—अतए = इतना ही तो।

(२६)

ससन-परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह ।
नव जलधर-तर सचर रे
जनि विजुरी-रेह ॥ २ ॥
आज देखल धनि जाइत रे
मोहि उपजल रङ्ग ।
कनक-लता जनि संचर रे
महि निर अवलम्ब ॥ ४ ॥
ता पुन अपरब देखल रे
कुच-जुग अरविन्द ।
विगसित नहि किछु कारन रे
सोझा मुख-चन्द ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बूझ रसमन्त ।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त ॥ ८ ॥

१—ससन = श्वसन, पवन । परस = स्पर्श से । खसु = गिर पड़ा । अम्बर = कपड़ा, अचल । देख = देखा । धनि = बाला । २—जलधर = बादल । तर = तले, नीचे । जनि = मानों । रेह = रेखा । ३—जाइत = जाती हुई । रंग = प्रेम । ४—सचर = जा रही है । निर अवलम्ब = बिना अवलम्ब का । ५—ता = उसपर भी । पुन = पुन । जुग = दो । अरबिन्द = कमल । ६—विगसित = खिला हुआ । सोझा = सम्मुख ।

(३०)

अलखित हमे हेरि विहुसलि थोर।
जनि रयनी भेल चाँद इँजोर ॥ २ ॥
कुटिल कटाख लाट पडि गेल।
मधुकर-डम्बर अम्बर लेल ॥ ४ ॥
काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥ ६ ॥
लीला कमल भमर धरु बारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥
तें भेल बेकत पयोधर सोभ।
कनक-कमल हेरि काहि न लोभ ॥१०॥
आध नुकाएल आध उदास।
कुच कुम्भे कहि गेल अप्पन आस ॥१२॥
से अब अमिल निधि दए गेल सँदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥ १४ ॥
भनइ विद्यापति दुहु मन जागु।
विसम कुसुम सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित = अलक्ष्य रूप से—बिना दूसरे के देखे। हेरि = देख कर। विहुसलि = मुस्कुराई। २—रयनी=रजनी, रात। इँजोर = उजाला। ५—काहिक = किसकी। के = कौन। ६—धरु बारि = निवारण कर—कौतुक से भ्रमर को कमल से निवारण कर। ९-तें = इससे। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ११—१२, नुकाएल = छिपा हुआ। उदास = प्रकट। कुम्भ = घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रकट कुच कुम्भ (दिखाकर) वह अपनी

(३१)

अम्बर बिघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक-सम्भु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस चन्दा ॥ २ ॥
कत रूप कहब बुझाई ।
मन मोर चंचल लोचन विकल भेल
ओ नहिं अनइत जाई ॥ ४ ॥
आउ बदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई ।
अओंधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग बहि जाई ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
पुहवी नव पँचवाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ ८ ॥

आशा बंद्द गई (कि मिलूँगी) १३–अमिल = अप्राप्य । निधि = खजाना । १४–परिसेस = परिशेष, बाकी । १६–बिसम = विषम, कठोर । कुसुम सर = कामदेव का शर ।

१ अम्बर = वस्त्र, अचल । बिघटु = हट गया । अकामिक = अकस्मात् । कर = हाथ । झाँपु = ढक लिया । सुछन्दा = सुन्दर । अकस्मात् अचल हट गया, (तब) कामिनी ने अपने दोनों हाथों से सुन्दर कुचों को ढक लिया । २–कनक सम्भु = सोने के महादेव

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
विहसि पलटि निहारि।
इन्द्रजालक कुसुम-सायक
कुहकि भेल वर नारि ॥ २ ॥
जोरि भुज जुग मोरि वेढ़ल
ततहि वदन सुछन्द।
दाम-चम्पक काम पूजल
जइसे सारद चन्द ॥ ४ ॥

(कुच)। दुइ पकज = दो कमल (दोनों हाथ)। दस चदा = दस चन्द्रमा (दस अंगुलियाँ)। ३–कत = कितना। ४–अनहत = अन्यत्र, दूसरी जगह। ५–आड़ = ओट। ६–अओंधा = उलटकर रखा हुआ। जुग बहि जाई = जुग बीत जाते हैं। ७–पुहवी = पृथ्वी। नव = नवीन। पचबाने = कामदेव। ८–रमाने = रमण, पति।

१–गेलि = गई। गजहु गामिनि = हाथी के समान मस्तानी चाल वाली। विहसि = मुस्कुराकर। निहारि = देखकर। २–इन्द्रजालक = ऐन्द्रजालिक, जादू भरा। कुसुमसायक = कामदेव। कुहुकि = मायाविनी नटी मेलि = हुई। मानों वह श्रेष्ठ नारी काम ऐन्द्रजालिक की मायाविनी नटी हो। अर्थात् उसकी हँसी ने अद्भुत चमत्कार का अनुभव कराया। ३–४, मोरि = मोड़कर। वेढ़ल = घेरा। ततहि = वहीं। वदन = मुख। दाम = रस्सी (माला)। चम्पक = चम्पे की। जइसे = जैसे। सुछन्द = सुन्दर। दोनों हाथों को जोड़कर उनसे अपना सुन्दर मुख लपेट लिया, मानों, कामदेव ने चम्पे की माला (हाथ) से शरद चन्द्र (मुख) की पूजा की हो।

उरहि अचल झाँपि चचल
आध पयोधर हेरु।
पौन पराभव सरद घन जनि
बेकत कएल सुमेरु ॥ ६ ॥
पुनहि दरसन जीव जुड़ाएब
टुटत विरह क ओर।
चरन जावक हृदय पावक
दहइ सब अँग मोर ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होय।
से जे रमनि परम गुनमनि
पुनु कए मिलब तोय ॥ १० ॥

४-५—उरहि = वक्ष.स्थल को। झाँपि = ढँककर। पयोधर = स्तन, कुच। हेरु = देखती है। पौन = पवन, वायु। पराभव = हारकर। जनि = मानों। बेकत = व्यक्त, प्रकट। कएल = किया। सुमेरु = पर्वत वक्ष स्थल को चचल अचल से ढाँककर आधे कुच को देखती है, मानों, पवन से हारकर शरद के मेघ (अचल) ने सुमेरु को (कुच) प्रकट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके से मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पड़ता है उसी प्रकार. । ७—जीव = प्राण। जुड़ाएब = शीतल होंगे। ओर = सीमा। ८—जावक = महावर। पावक = आग। दहइ = जलता है। उसके पैर के महावर (मेरे) हृदय में आग (लगा रहा) है जिससे मेरे सब अग जल रहे हैं। १०—से = वह। पुनु = पुन। मिलब = मिलेगी। तोय = तुम्हें।

(३३)

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पकज मधु-पिबि मधुकर रे
उड़ए पसारल पाँखि ॥ २ ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि वर नारि।
आसा-लुबुधल न तेजए रे
कृपन क पाछु भिखारि ॥४॥
इंगित नयन तरंगित रे
वाम भँओह भेल भंग।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥ ६ ॥

१—आनन = मुख। भौंह सुरेखलि = भौंहों द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई। २—पंकज = कमल (मुख)। मधु = पुष्परस। पिबि = पीकर। मधुकर = भौंरा (नयन)। उड़ए = उड़ने को। पसारल = पसार दिया, फैला दिया। पाँखि = पख, पर, (भौंह)। ततहि = वहाँ। धाओल = दौड़ गया। जतहि = जहाँ। गेलि = गई। ४—आसा लुबुधल = आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ। आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता। ५—इंगित = इशारे युक्त। तरंगित = चंचल। वाम = बाईं। भँओह भेल भंग = भौंह भंग हुई—भवें टेढ़ी कीं। ६—तखन = उस समय। तेसर = तीसरा व्यक्ति। मनोभव = काम-

चन्दन चरचु पयोधर रे
    गिम गज मुकुताहार।
भसम भरल जनि सकर रे
    सिर सुरसरि जलधार ॥८॥
वाम चरन अगुसारल रे
    दाहिन तेजइत लाज।
तखन मदन सर पूरल रे
    गति गंजए गजराज ॥१०॥
आज जाइत पथ देखलि रे
    रूप रहल मन लागि।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
    धैरज गेल भागि ॥११॥

देव। ७—चरचु = चर्चित किया। पयोधर = कुच, स्तन। गिम = गले में। भरल = भरा हुआ। सुरसरि = गगा। कुच चन्दन से चर्चित है, जिनपर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है, मानों भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गगा की धारा (बह रही) हो। ६—अगुसारल = अग्रसर किया आगे किया। दाहिन तेजइत लाज = दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है। १०—तखन = उस समय। मदन = कामदेव। गति = चाल। गजए = पराजित करती है। गजराज = हाथी। १०—रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया। खन = क्षण। सयँ = से। गेल = गये।

(३३)

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पकज मधु-पिबि मधुकर रे
उडए पसारल पाँखि ॥ २ ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि वर नारि।
आसा-लुबुधल न तेजए रे
कृपन क पाछु भिखारि ॥४॥
इगित नयन तरगित रे
वाम भँओह भेल भग।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रग ॥ ६ ॥

१–आनन = मुख। भौंह सुरेखलि = भौंहों द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई। २–पंकज = कमल (मुख)। मधु = पुष्परस। पिबि = पीकर। मधुकर = भौंरा (नयन)। उड़ए = उड़ने को। पसारल = पसार दिया, फैला दिया। पाँखि = पंख, पर, (भौंह)। ततहि = वहाँ। धाओल = दौड़ गया। जतहि = जहाँ। गेलि = गई। ४—आसा लुबुधल = आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ। आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता। ५–इंगित = इशारे युक्त। तरंगित = चंचल। वाम = बाईं। भँओह भेल भग = भौंह भंग हुई—भवें टेढ़ी कीं। ६–तखन = उस समय। तेसर = तीसरा व्यक्ति। मनोभव = काम-

चन्दन चरचु पयोधर रे
 ग्रिम गज मुकुताहार।
भसम भरल जनि सकर रे
 सिर सुरसरि जलधार ॥८॥
बाम चरन अगुसारल रे
 दाहिन तेजइत लाज।
तखन मदन सर पूरल रे
 गति गंजुए गजराज ॥१०॥
आज जाइत पथ देखलि रे
 रूप रहल मन लागि।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
 धरज गेल भागि ॥११॥

देव। ७—चरचु = चर्चित किया। पयोधर = कुच, स्तन। ग्रिम = [illegible]
गले में। भरल = भरा हुआ। सुरसरि = गंगा। कुच चन्दन से चर्चित
है, जिनपर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है, मानों भस्म का लेप
किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो। ९—
अगुसारल = अग्रसर किया, आगे किया। दाहिन तेजइत लाज = दाहिने
पैर को आगे रखते लज्जा होती है। १०—तखन = उस समय।
मदन = कामदेव। गति = चाल। गंजुए = पराजित करती है। गजराज =
हाथी। ११—रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य
हृदय में बैठ गया। खन = क्षण। सयँ = से। गेल = गये।

कर-जुग पिहित पयोधर-अंचल
चंचल देखि चित भेला।
हेम कमलन जनि अरुनित चंचल
मिहिर-तरे निन्द गेला ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनह मधुरपति
इह रस केह पए बाधा।
हास दरस रस सबहु बुझाएल
नाल कमल दुइ आधा ॥ १० ॥

गरासल = ग्रस लिया। ७–८—पिहित = आवृत, ढँपा। पयोधर = स्तन। अंचल = विभाग, तट। हेम = सोना। जनि = मानो। अरुनित = लालिमा युक्त। तरे = नीचे। मिहिर = सूर्य। निन्द गेला = सो रहा। दोनों हाथों से ढके हुए स्तनों के तट भाग देखकर चित्त चंचल हो गया, मानो, सोने के कमल (दोनों कुच) लालिमा युक्त चंचल सूर्य (लाल हथेली) के नीचे सो रहे हों। ९—१० सुनह = सुनो। मधुरपति = मथुरा पति। इह = यह। केह = कौन। हास = हँसी। दरस = दर्शन। बुझाएल = बूझ पड़ा, मालूम हुआ। नाल = (कमल की) डंटी। हे मथुरापति श्रीकृष्ण, (तुम्हारे) इस रस में कौन बाधा देगा? तुम्हारे पारस्परिक हँसी और दर्शन के रस से ही सबको मालूम हो गया कि मृणाल और कमल (तुम्हारे हाथ रूपी मृणाल और उसके कुच रूपी कमल) ये दोनों (एक ही पदार्थ) के दो भाग हैं—अर्थात् उसके कुच के लिये तुम्हारे हाथ ही उपयुक्त हैं।

(३५)

जहाँ-जहाँ पग-जुग धरई। तहिं-तहिं सरोरुह झरई ॥२॥
जहाँ-जहाँ झलकत अग। तहिं तहिं बिजुरि तरग ॥ ४ ॥
कि हेरल अपरुब गोरि। पइठल हिय मधि मोरि ॥ ६ ॥
जहाँ जहाँ नयन विकास। तहिं-तहिं कमल प्रकास ॥ ८ ॥
जहाँ लहु हास सँचार। तहिं तहिं अमिय-विकार ॥१०॥
जहाँ जहाँ कुटिल कटाख। ततहिं मदन-सर लाख ॥१२॥
हेरइत से धनि थोर। अब तिन भुवन अगोर ॥१४॥
पुनु किए दरसन पाव। अब मोहे इत दुख जाव ॥१६॥
विद्यापति कह जानि। तुअ गुन देहब आनि ॥१८॥

१-२—पग जुग = दोनों पैर। धरइ = धरतो है, रखतो है। तँहि = वहाँ। सरोरुह = कमल। भरई = झड़ते है। ३—४ झलकत = झलकते है—चमकते है। अग - शरीर। बिजुरि-तरग = बिजली का चचल प्रकाश। ५—६ -कि = क्या। हेरल = देखा। गोरि = गौर-बदनी, सुन्दरी। पइठल = पैठ गई, घुस गइ। हिय-मधि = हृदय में। मोरि = मेरे। ६-१०-लहु = लघु मद। हास = हँसो। अमिय = अमृत ११-१२-कुटिल = टेढ़े। कटाख = कटाच। ततहिं = वहाँ ही। मदन = कामदेव। सर = वाण। १३-१४-हेरइत = देखते ही। से = वह। धनि = बाला, सुन्दरी। अगोर = प्रतीचा करना। १५—१६—पुनु = पुन। किए = क्या। १६—अब मैं इसी दुख से मरूँगा। १८—तुअ = तुम्हारे। देहब आनि = ला दूँगा।

राधा का प्रेम

(३६)

ए सखि पेखलि एक अपरूप ।
सुनइत मानबि सपन-सरूप ॥ २ ॥
कमल जुगल पर चाँद क माला ।
तापर उपजल तरुन तमाला ॥ ४ ॥
तापर बेढ़लि बिजुरी-लता ।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥ ६ ॥
साखा सिखर सुधाकर पाँति ।
ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति ॥ ८ ॥
बिमल बिम्बफल जुगल बिकास ।
तापर कीर थीर करु बास ॥१०॥
तापर चंचल खंजन जोर ।
तापर साँपिनि झाँपल मोर ॥१२॥
ए सखि-रंगिनि कहल निसान ।
हेरइत पुनि मोर हरल गिआन ॥१४॥
कवि विद्यापति एह रस भान ।
सुपुरुख मरम तुहू भल जान ॥१६॥

३—कमल-जुगल = दो पैर। चाँद क माला = नखों की पंक्ति। ४—तरुन तमाल = काला शरीर। ५—बेढ़लि = लिपटी हुई। बिजुरी लता = पीताम्बर। ७—साखा-सिखर = तमाल रूपी शरीर की शाखा रूपी बाहुओं के अग्र भाग में। सुधाकर पाँति = नखों की पंक्ति। ८—नव पल्लव = हथेली। अरुनक भाँति — लाल।

की लागि कौतुक देखलौं सखि
निमिष लोचन आध।
मोर मन मृग मरम बेधल
विषम बान बेआध ॥ २ ॥
गोरस बिरस बासी बिसेखल
छिकहु छाडल गेह।
मुरलि धुनि सुनि मो मन मोहल
बिकहु भेल सन्देह ॥ ४ ॥
तीर तरंगिनि कदम्ब-कानन
निकट जमुना घाट।
उलटि हेरइत उलटि परलञों
चरन चीरल काँट ॥ ६ ॥
सुकृति सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गुपाल सुन्दर
मिलल नन्दकुमार ॥ ८ ॥

९—बिम्बफल = ओठ। १०—कीर = नाक। ११—खञ्जन जोर = आँखों का जोड़ा। माँथिनि = केश। मोर = मोर-मुकुट।

१—की लागि = किसलिये। निमिष = एक पल। लोचन आध = आधी आँखों से, कनखियों से। २—मरम = हृदय का भीतरी भाग। विषम = कठोर। ३—बिरस = रसहीन। बासी बिसेखल = विशेषत बासी। छिकहु = छींकने पर भी। ५—तरंगिनी = नदी।

(३८)

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ
वारल लोचन-चोर ।
पिया मुख-रुचि पिवए धाओल
जनि से चाँद चकोर ॥२॥
ततहु सयँ हठ हटि मो आनल
धएल चरलन राखि ।
मधुप मातल उडए न पारए
तइअओ पसारए पाँखि ॥४॥

१–२ अवनत = नीचे । आनन = मुख । वारल = निवारण किया रोक रक्खा । मुख रुचि = मुख की शोभा । पिवए = पीने के लिये । धाओल = दौड़ पड़ा । जनि = मानों । से = वह । मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन रूपी चोरों को (उनकी ओर जाने से) रोक दिया । किन्तु प्रीतम के मुख की शोभा को पान करने के लिये वे दौड़ पड़े, जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौड़ते हैं । ३ ४ ततहु = वहाँ । सयँ = से । हटि = हटाकर । मो = मैं । आनल = लाया । धएल राखि = धर रक्खा । मधुप = भौंरा । मातल = मत्त बना, पागल । उड़ए न पारए = उड़ नहीं सकता । तइअओ = तो भी । पसारए = पसारता है । वहाँ से—मुख की ओर से—मैं (आँखों को) हठ पूर्वक रोककर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रक्खा—नीचे की ओर देखने लगी । (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा उड़ नहीं सकता

माधव बोलत मधुर बानी
ते सुनि मुँदु मोयँ कान।
ताहि अवसर ठाम वाम भेल
धरि धनू पँचबान ॥ ६ ॥
तनु पसेव पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चूनि भए कांचुअ फाटलि
बाहु बलआ भाँगु ॥८॥
भन विद्यापति कम्पित कर हो
बोलल बोल न जाय।
राजा सिवसिंघ रुपनरायन
साम सुन्दर काय ॥१०॥

तोमी पञ्च पसारता है। उसी तरह मेरी आँखें बराबर उस ओर जाने लगीं। ५-मुँदु = मूँद लिया। ठाम = जगह। वाम = मेत्र = विरुद्ध हुआ, वैरी हुआ। पचवान = कामदेव। ६-उसी समय, उसी जगह कामदेव धनुष धारण कर मेरा वैरी हुआ—मुझपर बाण की बौछार करने लगा। ७—पसेव = पसीना। पसाहनि = प्रसाधनी, ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि = दह गया, धो गया। पुलक = रोमांच। तइसन = उसी प्रकार। ८-चूनि चूनि भए = लपट-लपट होकर, चिपके चिपके होकर। काँचुअ = कंचुकी, चोली। बलआ = चूड़ी। भाँगु = फूट गई। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गई।] ६—कम्पित कर हो = हाथ काँप रहे हैं। बोलल बोल न जाय = बोली बोली नहीं जाती।

कृष्ण की दूती

(४५)

धनि धनि रमनि जनम धनि तोर ।
सब जन कान्हु कान्हु करि झूरए
से तुअ भाव बिभोर ॥ २ ॥
चातक चाहि तिआसल अम्बुद
चकोर चाहि रहु चन्दा ।
तरु लतिका अवलम्बन करिए
मझु मन लागल धन्दा ॥ ४ ॥
केस पसारि जबे तुहुँ राखलि
उर पर अम्बर आधा ।

१-धनि = धन्य । रमनि = रमणी, स्त्री । तोर = तुम्हारा । २-जन = आदमी । कान्हु = कृष्ण । झूरए = जलने, व्याकुल होते । से = वह । तुअ = तुम्हारे । बिभोर = बेसुध । ३-४—चातक = पपीहा । चाहि = देखना । तिआसल = तृषित, प्यासा । अम्बुद = बादल । तरु = वृक्ष । लतिका = लता । करिए = कर रहा है । मझु = मेरे । लागल = लगा । धन्दा = सन्देह । (कैसी विचित्रता है !) तृषित मेघ आज पपीहे की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है (इन विरोधी बातों को देख) मेरे मन में संशय हो रहा है । [कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिये थी, वह श्रीकृष्ण में है ।] ५-पसारि = पसारकर, खोलकर । राखलि = रखा ।

से सब सुमिरि कान्हु भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ॥ ६ ॥
हँसइत कब तुहु दसन देखापलि
करे कर जोरहि मोर।
अलखित दिठि कब हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि कर कोर ॥ ८ ॥
एतहु निदेस कहल तोहे सुन्दरि
जानि तोहे करह विधान।
हृदय-पुतलि तुहु से सून कलेवर
कवि विद्यापति भान ॥ १० ॥

उर = छाती, वक्ष स्थल। अम्बर = वस्त्र, अंचल। ६-से = वह। भेल-हुआ। इथे = इसका। धनि = बाले। समाधा = निवारण। ७–८ दसन = दाँत। करे कर जोरहि मोर = हाथ से हाथ जोड़ कर मुड़ती हुई। अलखिते = अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुनु = पुन। हेरि = देखकर। कर कोर = कोर कर = कोड़ में करना–रखना, आलिंगन करना। हाथ से हाथ जोड़ कर (अँगड़ाइयाँ लेती हुई) कब तुमने पीछे की ओर मुड़कर, हँसती हुई, अपने दाँतों की छटा दिखाई, एवम् अलक्ष्य दृष्टि से कब उनके हृदय को प्रसारित कर, पुन उनकी ओर देखकर, सखी का आलिंगन किया। ६– एतहु = इतना। निदेस = इशारा। कहल = (मैंने) कहा। तोहे = तुम्हें। जानि = जानकर। करह = करो। विधन = उपचार। १०–हृदय पुतलि = हृदय की पुतली, प्राण। से = वह (कृष्ण)। सून = शून्य। कलेवर = । भान = कहता है।

(४६)

सुन सुन ए सखि कहए न होए।
राहि राहि कए तन मन खोए ॥ २ ॥
कहइत नाम पेम भए भोर।
पुलक कम्प तनु धरमहि नोर ॥ ४ ॥
गद गद भाखि कहए वर-कान।
राहि दरस बिनु निकस परान ॥ ६ ॥
जब नहि हेरब तकर से मुख।
तब जिउ-भार धरब कोन सुख ॥ ८ ॥
तुहु बिनु आन नहि इथे कोइ।
बिसरए चाह बिसर नहि होइ ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति नाहि चिबाद।
पूरब तोहर सब मन साध ॥ १२ ॥

१–कहए न होए = कहा नहीं जाता। २–राहि = राधा। कए = करके, कहकर। खोए = खोना, भुला देना। ३–पेम = प्रेम। भोर = बेसुध। ४–पुलक = रोमांच। धरमहि = पसीना भी। नोर = आँसू। शरीर रोमाच होकर काँपने लगता है, पसीना होता है और आँसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५–गदगद = रुँधे हुए कँठ से। भाखि = कहता। कान – कृष्ण। ६–निकसे = निकलता है। ७–तकर = उसका। से = वह। ८–धरब = धरूँगा। ९–आन = दूसरा। इथे = यहाँ, तुम्हारे सिवा यहाँ दूसरा कोई नहीं — तुम्हें छोड़कर कृष्ण अन्य किसी को प्यार नहीं करते। १०— बिसरए = विस्मरण होना भूल जाना। ११–बिवाद = कलह। १२–पूरब = पूरी होगी। मन साध = मन कामना।

(४७)

कटक माझ कुसुम परगास।
भमर विकल नहिं पावए पास ॥ २ ॥

भमरा भेल घुरए सवे ठाम।
तोहे विनु मालति नहिं विसराम ॥ ४ ॥

रसमति मालति पुनु पुनु देखि।
पिवए चाह मधु जीव उपेखि ॥ ६ ॥

उ मधुजीवी तोंहे मधुरासि।
साँचि धरसि मधु मने न लजासि ॥ ८ ॥

अपनेहु मने गुनि बुझ अवगाहि।
तसु दूषन वध लागत काहि ॥ १० ॥

भनहि विद्यापति तौं पय जीव।
अधर सुधारस जौं पय पीव ॥ १२ ॥

१—परगास = प्रकाश। २—पावए = पाता है, पा सकता है ३—भमरा (माधव) ४—मालति (राधा) ६—जीव उपेखि—जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीवेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके। ८—साँचि धरसि—सचित करके रक्खा है। ६—अवगाहि = डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भली भाँति सोचो समझो। ११—तौं पय जीव = तब जी सकता है। १२—जौं पय पाव = यदि वह पी सके।

(४८) ✓

आजु हम पेखल कालिन्दी कूले।
तुअ विनु माधव विलुठए धूले ॥ २ ॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने।
किए विष दाह-समय जल दाने ॥ ४ ॥
मदन भुजंगम दसल कान।
विनहि अमिय-रस कि करव आन ॥ ६ ॥
कुलवति धरम काँच समतूल।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥ ८ ॥
आनल वेचि नीलमनि हार।
से तुहु पहिरवि करि अभिसार ॥ १० ॥
नील निचोल झाँपवि निज देह।
जनि घन भीतर दामिनि रेह ॥ १२ ॥
चौदिक चतुर सखी चलु संग।
आजु निकुंज करह रस-रंग ॥ १४ ॥

१–पेखल = देखा। कालिन्दी = यमुना। कूले = किनारे में। २–विलुठए = लोट रहे हैं। ३–कत = कितने। सत = सौ। आने = लाता है। ४–विष की ज्वाला के समय जल के दान से क्या—विष की ज्वाला कहीं पानी से शान्त होती है? ५–भुजंगम = सर्प। दसल = काटा। कान = कृष्ण। ६–अमिय = अमृत। कि करव = क्या करेगा। आन = अन्य। ८ समतूल = समान। १०–से = वह। अभिसार = गुप्त मिलन, प्रियतम के पास गमन। ११–निचोल = चोली। १२ घन = मेघ। दामिनि = बिजली। रेह-रेखा। चौदिक = चारो ओर।

(४६)

आज पेखल नन्द-किसोर।
केलि विलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहत बिभोर ॥ २ ॥
जब धरि चकित बिलोकि विपिन-तट
पलटि आओलि मुख मोरि।
तबधरि मदन मोहन तरु कानन
लुटइ धीरज पुनि छोरि ॥ ४ ॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरबि
पाओब चेतन नाह।
भुजगिनि दसि पुनहि जदि दसए
तबहि समय विष जाह ॥ ६ ॥
अब सुभ खन धनि मनिमय भूषन
भूषित तनु अनुपाम।
अभिसरु वल्लभ हृदय बिराजहु
जनि मनि काचन-दाम ॥ ८ ॥

२-अह निसि=दिन-रात। बिभोरि=बेसुध। २-जब धरि=जबसे। ४-तब धरि=तबसे। लुटइ=लोटते हैं। ४—पाओब चेतन=चेतना पायेंगे, सुध में आयेंगे। नाह=नाथ (कृष्ण)। ६—भुजगिनी=साँपिनी। =काटकर। तबहि समय=उसी समय—उसी हालत में। जाह=है। ८-अभिसरु=अभिसार करो—गुप्त मिलन स्थान में जा मिलो। प्यारा, विद्यापति का उपनाम। जनि मनि काँचन-दाम=जैसे सोने में मणियों की माला पिरोई गई हो।

(५०)

प्रथम सिरिफल गरय गमश्रोलह
जौं गुन गाहक आवे।
गेल जौवन पुनु पलटि न आवए
केवल रह पछतावे ॥ २ ॥
सुन्दरि, वचन करह समधाने।
तोह सनि नारि दिवस दस अछलिहुँ
ऐसन उपजु मोहि भाने ॥४॥
जौवन रूप तावेधरि छाजत
जावे मदन अधिकारी।
दिन दस गेले सखि सेहओ परापत
सकल जगत परचारी ॥६॥
विद्यापति कह जुवति लाख लह
पडल पयोधर-तूले।
दिन दिन आगे सखि ऐसनि होएवह
घोसिनि घोर क मूले ॥ ८ ॥

१– सिरिफल = श्रीफल, बेल (कुच)। गमश्रोलह = गँवा दिया, खो दिया। २–जौं = जबतक। आवे = आता है। ३–करह समधाने = समाधान करो, विचार करो। ४–सनि = समान। अछलिहु = मैं भी थी। भाने = अनुमान। ५–छाजत = शोभता है। ६–गेले = जाने पर। सेहओ = वह भी। परापत = मागेगा। ७–पयोधर-तूले = कुच तराजू पर है। ८–आगे सखि = अरी सखि। होएबह = हो जाओगी। घोसिनि = ग्वालिन की। घोर क– मट्ठा। मूले = मूल्य की।

(५१)

ए धनि कमलिनि सुन हित वानि।
प्रेम करबि जब सुपुरुष जानि ॥ २ ॥
सुजन क प्रेम हेम समतूल।
दहइत कनक दिगुन होय मूल ॥ ४ ॥
टूटइत नहि टुट प्रेम अद्‌भूत।
जइसन बढ़ए मृनाल क सूत ॥ ६ ॥
सबहु मतंगज मोति नहि मानि।
सकल कंठ नहि कोइल बानि ॥ ८ ॥
सकल समय नहि रीतु बसन्त।
सकल पुरुष नारि नहि गुनवन्त ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
प्रेम क रीत अब बुझह विचारि ॥ १२ ॥

१—धनि = बाला। कमलिनी = पद्मिनी जाति की स्त्री। वानि = वाणी बात। २—जब प्रेम करो तो सुपात्र ही जान कर। ३—सुजन क = सज्जन का। हेम = सोना। समतूल = समान। ४—दहइत = जलने पर। कनक = सोना। दिगुन = दो गुणा। मूल = मूल्य। ६—जइसन = जिस प्रकार। बढ़ए = बढ़ता है। मृणाल क = मृणाल का, कमल की डंटी का। सूत = सूत्र, धागा, भीतर का रेशा। ७—मतंगज = हाथी। मोति—मुक्ता। ८—कोइल बानि = कोयल की काकली। १०—सभी स्त्रियाँ और पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते। 'घाघ' की एक कहावत इसी भाव की है—

सदा न बागों बुलबुल बोलैं, सदा न बाग बहारा।
सदा न ज्वानी रहती यारों, सदा न सोहबत यारा॥

राधा की दूती

(५२)

सुनु मनमोहन कि कहब तोय।
मुगुधिनि रमनी तुश्र लागि रोय ॥२॥
निसि दिन जागि जपय तुश्र नाम।
थर थर काँपि पड़ए सोइ ठाम ॥४॥
जामिनि श्राध श्रधिक जब होइ।
विगलित लाज उठए तब रोइ ॥६॥
सखिगन जत परबोधय जाय।
तापिनि ताप ततहिं तत ताय ॥८॥
कह कवि सेखर ताक उपाय।
रचइत तबहि रयनि बहि जाय ॥१०॥

१-कि = क्या। कहब = कहूँ। तोय = तुझे। २-मुगुधिनि = मुग्धा, प्रेमासक्ता। रमनी = रमणी, स्त्री। तुश्रलागि = तेरे लिये। रोय = रोती है। ४-पड़ए = (गिर) पड़ती है। ठाम = जगह। ५-जब रात आधी से अधिक बीत जाती है। ६-विगलित लाज = लाज से रहित होकर। उठए तब रोइ = तब रो उठती है। ७—जत = जितनी। परबोधय = प्रबोध करती है, समझाती है। ८—तापिनी = ज्वाला से जली हुई। ताप = ज्वाला से। ततहि तत = उतना ही-उतना। ताय = जलती है। (वह विरह ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है। ९—ताक = उसका। १०-बहि जाय = बह जाती है, बीत जाती है।

(५३)

माधव ! कि कहव से विपरीत ।
तनु भेल जरजर भामिनी अन्तर
चित बाढ़ल तसु प्रीत ॥ २ ॥
निरस कमल मुख कर अवलम्बइ
सखि माझ बइसलि गोइ ।
नयन क नीर थीर नहि बाँधइ
पक कयल महि रोइ ॥ ४ ॥
मरम क बोल, वयन नहि बोलए
तनु भेल कुहु-ससि खीना ।
अवनि उपर धनि उठए न पारइ
धएलि भुजा धरि दीना ॥ ६ ॥
तपत कनक जनि काजर भेल तनु
अति भेल विरह हुतासे ।
कवि विद्यापति मन अभिलासत
कान्हु चलह तसु पासे ॥ ८ ॥

२-जरजर = जजर, अत्यन्त क्षीण । भामिनी = स्त्री । अन्तर = भीतर । बाढ़ल = बढ़ गया । तसु = उसी प्रकार । ३-निरस = रसहीन, उदास । कर = हाथ । अवलम्बइ = अवलम्बन करके । माझ = मध्य । बइसलि = बैठी । गोइ = छिपाकर । ४-नयन क नीर = आँसू । थीर = स्थिरता । ५-मरम क बोल = मर्म कथा हृदय के भाव । कुहु ससि = अमावास्या का चन्द्र । ६-उठए न पारइ = उठ नहीं सकती । पृथ्वी पर वह बाला स्वय उठ नहीं सकती, (सखियाँ) उस दीना को भुजा पकड़कर (धरती पर से)

(५४)

लोटइ धरनि, धरनि धरि सोइ।
खने खन साँस खने खन रोइ ॥ २ ॥
खने खन मुरछइ कठ परान।
इथि पर की गति दैव से जान ॥ ४ ॥
हे हरि पेखलों से वर नारि।
न जीवइ बिनु कर परस तोहारि ॥ ६ ॥
केओ केओ जपय वेद दिठि जानि।
केओ नव ग्रह पुज जोतिश्र आनि ॥ ८ ॥
केओ केओ कर धरि धातु बिचारि।
विरह विखिन कोइ लखए न पारि ॥ १० ॥

उठाती है। ७—तपत = तप्त, तपाये हुए। कनक = सोना। जनि = समान। हुतासे = अग्नि। ८—तसु = उसके।

१-लोटइ = लोटती है। धरनि = पृथ्वी। सोइ = वह। २—खने-खन = क्षण क्षण में। साँस = श्वासें लेती है। रोइ = रोती है। ३-क्षण क्षण में वह मूर्च्छित हो जाती है और प्राण कण्ठ तक चले आते हैं (मृत प्राय हो जाती है)। ४-इथि = इसके। पर = बाद। की = क्या। से = वह। ५-पेखलों = (मैंने) देखा। ६-जीवइ = जीयेगी। करपरस = हाथ का स्पर्श। ७-केओ = कोई। दिठि = नजर लगाना। ८ पुज = पूजना है। जोतिश्र = ज्योतिषी। आनि = ले आकर, बुलाकर। ९ धातु = नाड़ी। १० बिरह बिखिन = विरह विक्षीण, विरह से क्षीण हुई। लखए न पारि = लख नहीं सकता।

(५५)

अविरल नयन गरए जल-धार।
नव-जल विंदु सहए के पार ॥ २ ॥
कि कहब सजनी तकर कहिनी।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥ ४ ॥
कुच-जुग ऊपर आनन हेरु।
चाँद राहु डर चढ़ल सुमेरु ॥ ६ ॥
अनिल अनल वम मलयज वीख।
जेहु छल सीतल सेहु भेल तीख ॥ ८ ॥
चाँद सतावए सविता हु जीनि।
नहि जीवन एकमत भेल तीनि ॥ १० ॥
किछु उपचार मान नहि आनु।
ताहि वेआधि भेषज पँचवान ॥ १२ ॥
तुअ दरसन विनु तिलओ न जीव।
जइओ कलामति पीउख पीव ॥ १४ ॥

१-अविरल = लगातार। गरए - गिरता है। २-नव जल बिन्दु = नवीन जल के कण, आँसू। ३-तकर = उसका। कहिनी = कहानी। ४-जहिनी = जैसी। ५-आनन = मुख। ७-अनिल = वायु। अनल = आग। वम = वमन करता है, उगलता है। मलयज = चन्दन। वीख = विष। ८-छल = था। तीख = तीक्ष्ण। ६-सविताहु = सूर्य। जीनि = जैसे, जीतकर, बढ़कर। १०-एकमत भेल तीनि = तीनों (वायु, चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए। ११-उपचार = औषधादि। १२ भेषज = दवा। पँचबान = कामदेव। १३-तिलओ = तिलमात्र भी, एक क्षण भी।

(५६)

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुवति कत न लेख।
सब फुलमधु मधुर नही
फुलहु फुल विसेख ॥२॥
जे फुल भमर निन्दहु सुमर
बासि न विसरए पार।
जाहि मधुकर उड़ि उडि पड
सेहे ससार क सार ॥४॥
सुन्दरि, अवहु वचन सुन।
सबे परिहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पुन ॥६॥

जीव = जीवेगी। १४–पीउख = पीयूष = अमृत।

१–२–तरुअर = तरुवर, वृक्षश्रेष्ठ। कत = कितना। न लेख = संख्या नहीं, असंख्य। मधु = पुष्परस। मधुर = मीठा। लाखों पेड़ हैं, करोड़ों लताएँ हैं, (यों ही) कितनी युवतियाँ हैं (जिनकी) गिनती नहीं। किन्तु सभी फूलों का रस मीठा नहीं होता—फूलों में भी कोई विशेष फूल होते हैं। जे = जिस। भमर = भौंरा। निन्दहु = नीन्द में भी। सुमर = स्मरण करता है। बासि = गंध। न विसरए पार = नहीं विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता। ४–मधुकर = भौंरा। पड़ = पड़ना, बैठना। से हे = वही। जिसपर भौंरा उड़-उड़ कर बैठे, वही (फूल) ससार का सार है—ससार में खिलना उसी का सार्थक है।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहु हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव ॥८॥
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि बिनु सुन कोर।
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर ॥१०॥
राहि राही जाहि मुँह सुनि
ततहि अरपए कान।
सिरि सिव सिंघ इ रस जानए
कवि विद्यापति भान ॥१२॥

५– सुन = सुनो। ६–सबे = सबको। परिहरि = छोड़कर। इछ = इच्छा करता है। आप = अपना। सराहहि = सराहना करो। पुन = पुण्य। ७–तोहरे = तुम्हारा। सेजहु = शय्या पर भी। चाव = चाहना। ८–सपनहु = सपने में भी। पुन पुन कए = बारम्बार। लए उठए = ले उठते हैं। नाव = नाम। दए = देते है। पाछु = पीछे। निहारय = देखते हैं। सुन = शून्य, खाली। कोर = गोद। १०–अकथ = न कहने योग्य। आपु = अपनी। अवथा = अवस्था। नोर = आँसू। ११—राहि = राधा। अप्पए = अर्पण करते हैं। १२–भान = कहते हैं।

"A poet is a painter of soul"

(५७)

आसायें मन्दिर निसि गमावए
सुख न सूत सँयान।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि भान॥ २॥
मालति! सफल जीवन तोर।
तोर विरहे भुअन भम्मए
भेल मधुकर भोर॥ ४॥
जातकि केतकि कत न अछए
सबहि रस समान।
सपनहु नहि ताहि निहारए
मधू कि करत पान॥ ६॥
बन उपवन कुञ्ज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप।

१–आसायें = आशा में। गमावए = बिताता है। सून = सोता है। सँयान = शयन पर बिछावन पर। २–जखन = जब। जतए = जहाँ। जाहि = जिसे। निहारए = देखता है। जब जहाँ जिसे देखता है, उसे उसे ही तुम्हें मान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है। ४–भुअन = भुवन, संसार। भम्मए = भ्रमण करते। मधुकर = भौंरा। भोर = विभोर व्याकुल, या प्रात काल। ५–जातकि = पारिजात। कत = कितना। अछए = हैं। ६–स्वप्न में भी उन्हें देखता तक नहीं, फिर उनका मधु क्यों पान करने चला। ७–सबहि = सभी स्थानों में। निरूप = निरूपण करता है।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहू हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव ॥८॥
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि विनु सुन कोर।
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर ॥१०॥
राहि राही जाहि मुँह सुनि
ततहि अपए कान।
सिरि सिव सिंघ इ रस जानए
कबि विद्यापति भान ॥१२॥

४– सुन = सुनो। ६–सवे = सबको। परिहरि = छोड़कर। इछ = इच्छा करता है। आप = अपना। सराहहि = सराहना करो। पुन = पुण्य। ७–तोहरे = तुम्हारा। सेजहु = शय्या पर भी। चाव = चाहना। ८–सपनहु = सपने में भी। पुन पुन कए = बारम्बार। लए उठए = ले उठते हैं। नाव = नाम। दए = देते हैं। पाछु = पीछे। निहारए = देखते हैं। सुन = शून्य, खाली। कोर = गोद। १०–अकथ = न कहने योग्य। आपु = अपनी। अवथा = अवस्था। नोर = आँसू। ११—राहि = राधा। अपए = अर्पण करते हैं। १२–भान = कहते हैं।

"A poet is a painter of soul"

(५८)

कर धए करु मोदे पारे
देव मैं अपरुब हारे, कन्हैया ॥ २ ॥
सखि सब तेजि चलि गेली।
न जानू कोन पथ भेली, कन्हैया ॥ ४ ॥
हम न जाएब तुअ पासे।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥ ६ ॥
विद्यापति पहो भाने।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥ ८ ॥

१—कर=हाथ। धए=धरकर। करु=करो पारे=उस पार २—देव=दूँगी। मैं=मै। हारे=माला। ३—तेजि=छोड़कर। चलि गेली=चली गई। ४—न जानू=न मालूम। कोन पथ भेली=किस रास्ता गई। ५—जाएब=जाऊँगी। तुअ=तेरे। पासे=निकट। ६—औघट घाटे=जिस घाट से कोई आना जाता न हो। ७—पहो=यह। भाने=कहते हैं। ८—गूजरि=ग्वाला।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। जहाँ एक ओर कहती है—'हम न जाएब तुअ पासे', तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है—'जाएब औघट घाटे'—याने आ रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही—अर्थात् चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें। यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान है। रसिक पाठक गौर करें।

Poetry has something devine in it —*Bacon*.

(५८)

कर धरु करु मोहे पारे
देव मे अपरुब हारे, कन्हैया ॥ २ ॥
सखि सब तेजि चलि गेली।
न जानू कोन पथ भेली, कन्हैया ॥ ४ ॥
हम न जाएब तुअ पासे।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥ ६ ॥
विद्यापति पहो भाने।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥ ८ ॥

१—कर = हाथ। धरु = धरकर। करु = करो। पारे = उस पार २—देब = दूँगी। मे = मैं। हारे = माला। ३—तेजि = छोड़कर। चलि गेलो = चली गई। ४—न जानू = न मालूम। कोन पथ भेली = किस रास्ते गई। ५—जाएब = जाऊँगी। तुअ = तेरे। पासे = निकट। ६—औघट घाटे = जिस घाट से कोई आता जाता न हो। ७—पहो = यह। भाने = कहते हैं। ८—गूजरि = बाला।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। जहाँ एक ओर कहती है—'हम न जाएब तुअ पासे', तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है—'जाएब औघट घाटे'—याने जा रही हूँ निश्चिन्त स्थान में हो—अर्थात चलो, उस एकान्त स्थान में केलि क्रीड़ा करें। यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान हैं। रसिक पाठक गौर करें।

Poetry has something devine in it —*Bacon*

(५६)

कुज-भवन सयँ निकसलि रे
रोकल गिरिधारी।
एकहि नगर बस माधव हे
जनि कर बटमारी ॥ २ ॥
छाडु कन्हैया मोर आँचर रे
फाटत नव-सारी।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी ॥ ४ ॥
संग क सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी।
दामिनि आए तुलाएल हे
एक रात अँधारी ॥ ६ ॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी।
हरि क सग किछु डर नहि हे
तोंह परम गमारी ॥ ८ ॥

१—सयँ = से। निकसलि = निकली। रोकल = रोक लिया। २—बस = रहते हो। जनि = मत। बटमारी = डकैती, राहजनी। ३—नव सारी = नवीन साड़ी। उघारि = नग्न। ४—सग क = साथ की। अगुआइलि = आगे गईं। एकसरि = अकेली। ६—दामिनि आए तुलाएल = बिजली सी चमकने लगी—मेघ छा गया। अँधारी = अँधेरी, कृष्ण-पक्ष की। ८—हरि क = श्रीकृष्ण के। गमारी = गँवारी, बेवकूफ।

(६०)

सुन सुन गौरव लीन सोभाय ।
सुनि कत महतिहुँ सोहरि नाय ॥२॥
हठ न करिअ कान्हु कर मोहि पार ।
नाय नहँ यहु पिय पर-उपकार ॥४॥
...हि वालि नाय साय हमार ।
...मन भेलि निकहि विधि पार ॥६॥
...ता भेलि कान्हु तोहरोअ आन ।
जा अँगिरिअ, ता न होइअ उदास ॥८॥
मल मन्द आनि करिअ परिनाम ।
जस अपजस दुह रहत न ठाम ॥१०॥
हम अपनमा मत करय आनन ।
आइति पइले मुधिय विधाप ॥१२॥
तोहँ पर नागर हम पर नारि ।
काँप हृदय तुअ प्रकृति विचारि ॥१४॥
भनइ विद्यापति गाय ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन इ रस सकल से पावे ॥१६॥

२—सुनिय = सुनकर । ४—नह नहँ = पकने । विक = है । ६—भेलि = हुई । निकहि विधि = अच्छी तरह से । ८—जे = जो कुछ । अँगिरिअ = अगीकार करना । ता = तभी । होइअ उदास = उदास होना, मुकरना । ११—कत = कितना । १२—आइत पइले = आ पड़ने पर ही, अवसर आने पर ही । सुधिय विधक = ज्ञान की बात । १३—पर नागर = अन्य पुरुष । १४—प्रकृति = स्वभाव ।

(६१)

नाव डोलाय अहीरे
जिवइत न पाओव तीरे
खर नीरे लो।
खेवा न लेअए मोले
हँसि हँसि की दहु बोले
जिव डोले लो ॥ २ ॥
किए बिके पेलिहु आपे
वेढ़लिहु मोहि वड सापे
मोरे पापे लो।
करितहुँ पर-उपहासे
परिलिहुँ तन्हि विधि-फाँसे
नहि आसे लो ॥ ४ ॥
न बूझसि अबूझ गोआरी
भजि रहु देव मुरारी
नहि गारी लो।
कवि विद्यापति भाने
नृप सिवसिंघ रस जाने
नव कान्हे लो ॥ ६ ॥

१–जिवइत = जीती हुई। खर नीरे = तीव्र धारा। २–मोले = मूल्य में, रुपये पैसा में। की दहु = न जाने क्या ? ३–किए = क्यों। पेलिहु = मैं आई। बेढ़लिहु = आ घेरा। ४–तन्हि = उसी से। ५–गोआरी = ग्वालिन। गारी = गाली। ६–नव = नवीन, युवक।

राधा को शिक्षा

(६२)

प्रथमहि अलक तिलक लेव साजि ।
चचल लोचन काजर आँजि ॥ २ ॥
जाएब बसन आँग लेब गोए ।
दूरहि रहब तेँ अरथित होए ॥ ४ ॥
मोरि बोलब सखि रहब लजाए ।
कुटिल नयन देब मदन जगाए ॥ ६ ॥
झाँपब कुच दरसाओब आध ।
खन खन सुदृढ़ करब निवि-बाँध ॥ ८ ॥
मान करए किछु दरसब भाव ।
रस राखब तेँ पुनु पुनु आव ॥ १० ॥
हम कि सिखाओबि अओो रस रग ।
अपनहि गुरु भए कहत अनग ॥१२॥
भनइ विद्यापति इ रस गाव ।
नागरि कामिनि भाव बुझाव ॥ १४ ॥

१—अलक = केश । तिलक = टीका, बेंदी । लेव = लेना । २—आँजि = लगा देना । ३—बसन = कपड़ा । आँग = अग । लेव गोए = छिपा लेना । ४—तेँ = इससे । अरथित = अर्थित याहक । ५—मुख मोड़कर बातें करना और बार बार लज्जित होना । ६—कुटिल = टेढ़े । झाँपब = ढँकना । निवि-बाँध = नीवी का बन्धन । ९—मान करने के कुछ भाव प्रकट करना । ११ अओो = और । १२—अनग = कामदेव । १४—नागरि कामिनि = सुचतुरा स्त्री ।

(६३)

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख।
जिव जोखे नागर दे दस लाख ॥ २ ॥
केओ दे हास सुधा सम नीक।
जइसन परहोंक तइसन बीक ॥ ४ ॥
सुनु सुन्दरि नव मदन-पसार।
जनि गोपह आओब बनिजार ॥ ६ ॥
रोस दरस रस राखब गोए।
धएले रतन अधिक मूल होए ॥
भलहि न हृदय बुझाओब नाह।
आरति गाहक महँग बेसाह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनहु सयानि।
सुहित वचन राखब हिय आनि ॥१२॥

१-२ जोखे = तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाच करना जिसके (मूल्य रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—केओ = कोई। हास = हँसी। नीक = अच्छा। ४—परहोंक = बोहनी। बीक = बिक्री होती है। ५—मदन पसार = कामदेव की दूकान। ६—गोपह = छिपाओ। बनिजार = व्यापारी। ७—८ रोप मकटकर प्रेम छिपाकर रखना, क्योंकि धरे हुए रत्न की कीमत अधिक होती है। ९—भलहि = अच्छी तरह। १०—आरति = आर्त, आग्रहपूर्ण। महँग = महँगा। बेसाह = खरीद करता है। १२—सुहित = सुहृद, मित्र। हिय = हृदय।



(६४)

सुनु सुनु ए सखि वचन विसेस।
आजु हम देव तोहे उपदेस ॥२॥
पहिलहि बैठबि सयनक-सीम।
हेरइत पिया मुख मोडबि गीम ॥४॥
परसइत दुहु कर वारबि पानि।
मौन रहबि पहु करइत बानि ॥६॥
जब हम सौंपब करे कर आपि।
साधुस धरबि उलटि मोहे काँपि ॥८॥
विद्यापति कत इह रस ठाठ।
भए गुरु काम सिखाओब पाठ ॥१०॥

३—सयनक सीम = शय्या की एक ओर। ४—गीम = ग्रीवा, गरदन। जब प्रीतम मुख देखने लगें तो अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना। ५—परसइत = स्पर्श करते। कर = हाथ। बारबि = वारण करना, मना करना। पानि = हाथ। जब वे अंग स्पर्श करने लगें तो दोनों हाथों से उनके हाथ को रोकना। ६—पहु = प्रभु, प्रीतम। करइत बानि = बातचीत करते समय। ७-८—करे = हाथ में। कर = हाथ। आपि = अर्पण कर। साधस = सभय। जब मैं उनके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौंपूँगी, तो तुम सभय उलटकर काँपते हुए मुझे पकड़ना। ९—रस ठाठ = रस की रीति। १०—भए = होकर।

"रसात्मक वाक्य काव्यम्"—साहित्यदर्पण

(६५)

परिहर, ए सखी, तोहे परनाम।
हम नह जाएव से पिआ-ठाम ॥२॥
वचन चातुरि हम किछु नहि जान।
इगित न बूझिए न जानिए मान ॥४॥
सहचरि मिली वनावए भेस।
वाँधए न जानिए अप्पन केस ॥६॥
कभु नहि सुनिए सुरत क वात।
कइसे मिलव हम माधव साथ ॥८॥
से वर नागर रसिक सुजान।
हम अवला अति अलप गेआन ॥१०॥
विद्यापति कह कि वोलव तोए।
आजुक मीलल समुचित होए ॥१२॥

१—ए सखि, (इन बातों को) छोड़ो मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ। २—ठाम = स्थान। ४—इगित = इशारा। न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ। ५—सहचरि = सखियाँ। बनावए भेस = भेष बनाती हैं—मेरा शृंगार कर देती हैं। ६—अप्पन = अपना। ७—सुरत क बात = काम क्रीडा की बातें। ८—कइसे = किस प्रकार। ९—नागर = चतुर। १०—अलप = अल्प, थोड़ा। ११—तोए = तुम्हें। १२—आजु क = आज का। मीलल = मिलना।

शेर दर असल है वही 'हसरत',
सुनते ही दिल में जो उतर जाये।

(६६)

काहे डरसि सखि चलु हम सग।
माधव नहिं परसब तुअ अग ॥ २ ॥
इह रजनी फुल-कानन माझ।
के एक फिरत साजि बहु साज ॥४॥
कुसुम क घोर धनुप धरि पानि।
मारत सर बाला जन जानि ॥ ६ ॥
अतए चलह सखि भीतर कुज।
जहाँ रह हरी महाबल पुज ॥ ८ ॥
एत कहि आनल धनि हरि पास।
पूरल बल्लभ सुख अभिलास ॥१०॥

१—काहे = किसलिये। डरसि = डरती है। २—परसब = स्पर्श करेंगे। ३-६—रजनी = रात। फुल कानन = पुष्प-वन। माझ = में। के = कौन। एक = अकेले। कुसुम क = फूलों का। धनुक = धनुष। पानि = हाथ। इस रात में, पुष्प वन में यों नाना प्रकार शृङ्गार करके कौन अकेली घूमती है? (अरी, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि) फूलों का कठोर धनुष हाथ में धरकर (कामदेव रूपी तीरंदाज) बाला स्त्रियों को खोज खोजकर बाण मारता है। ७—अतए = अतएव, इसलिये। ८—हरी = श्रीकृष्ण। महाबलपुज = बड़े बलशाली। 'महाबल पुज' कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के बाण की चोट से बचावेंगे। ९—एत = इतना। आनल = लाई। धनि = बाला। पास = निकट। १०—पूरल = पूरा हुआ। बल्लभ = विद्यापति का उपनाम।

—

(६७)

परिहर मन किछु न कर तरास।
साधुस नहिं कर चल पिय पास ॥ २ ॥
दुर कर दुरमति कहलम तोए।
बिनु दुख सूख कबहु नहि होए ॥ ४ ॥
तिल आध दूख जनम भरि सूख।
इथे लागि धनि किए होइ विमूख ॥ ६ ॥
तिला एक मूनि रहु दु नयान।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥ ८ ॥
चल चल सुन्दरि करहु सिगार।
विद्यापति कह एहि से विचार ॥१०॥

---

१ परिहर = छोड़ो। तरास = त्रास, डर। २—साधस = भय ३-दुर कर = दूर करो। दुरमति = दुर्बुद्धि। कहलम = मैं कहती हूँ। तोए = तुझे। ४—तिल आध = (मैथिली प्रयोग) एक क्षण के लिये। ६—इथे = इसलिये। किए = क्यों। होइ = होती हो। विमूख = विमुख, विपक्ष। ७ — मूनि रहु = मूँद रक्खो। दु = दो। नयान = आँखें। ८—जइसे = जिस प्रकार। पान = पीना। ९ — करहु = करो। १० — एहि से = यह ही।

A poet is not only a dreamer of dreams his heart is the mirror of the world's emotions, his songs of gladnees are the echoes af the world's laughter, his songs of sorrow reflect the tears of humanity—Sarojini

श्रीकृष्ण को शिक्षा

(६८)

हमे दरसइत कतहुँ वेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप ।
सुरत सिंगारि आज धनि आओलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥
सुनु हे कान्हु कहिये अवधारि ।
सकल काज हम बुझल बुझाएल
न बुझल अन्तर नारि ॥४॥
अभिनव काम नाम पुनु सुनइत
रोखत गुन दरसाइ ।
अरि सम गजए मन पुनु रजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥
अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन तरासे ।
कह कवि-सेखर सहज विपय-रत
विदगधि केलि विलासे ॥ ८ ॥

१—दरसइत = दिखा करके । कतहुँ = कितना ही । वेस कर = शृंगार करना । हेरइत = देखते । झाँप = ढाँप लेना । २—सुरत = काम-क्रीड़ा । ३—अवधारि = निश्चय करके । ४—बुझल-बुझाएल = समझा बुझा दिया है । अन्तर = हृदय । ५—अभिनव = नवीन । रोखत = रोष प्रकट करती है । गुन दरसाइ = गुण दिखाकर, कला प्रकट करके । चूँकि

बुझव छ्यलपन आज।
राहि मनि रतने आनलि अति जतने
चचि सब रमनि-समाज ॥२॥
सिरिस-कुसुम जनि अति सुकुमार धनि
आलिगव दृढ़ अनुरागे।
निर्भय करव केलि केह नहि बूझे गेलि
भौंर भरे मॉजरि न भाँगे ॥४॥
पिरीतिक बोलि नियरे वइसाओब
नख हनि, आनव कोल।
नहि नहि कर धनि कपट भुलब जनु
यदि कह कातर बोल ॥६॥

३—एक बार छोड़कर पुन घसकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह त पकड़ना। १४—गिलप = निगल जाना। १६-जिस प्रकार भौंरा बड़े ौशल से सिरिस के फूल का रस चूसता है, उसी प्रकार।

१—छ्यलपन = रसिकता। २—राहि = राधा। मनि रतने = त्नों में मणि। आनलि = लाई। चचि = छल करके। ३ = धनि = ।ना। आलिगव = आलिंगन करना, छाती लगाना। ४—निर्भय होकर केलि करना, यह किसे नहीं मालूम है कि भौंरे के शरीर के भार से कोमल मंजरी नहीं टूटती। ५—नियरे = निकट। नख हनि आनब कोले = नख से हनन कर = नख से कुचों को क्षत विक्षत कर—उसे गोदी में बैठा लेना। ६—नहि नहि कर धनि = वह बाला यदि नहीं नहीं करे। कातर बोल = दीन वचन।

(७४)

अहे सखि अहे सखि लए जनि जाह।
हम अति बालिक आकुल नाह॥ २॥
गोट गोट सखि सब गेलि बहराय।
बजर किवाड पहु देलहि लगाय॥ ४॥
तेहि अवसर पहु जागल कन्त।
चोर सँभारलि जिउ भेल अन्त॥ ६॥
नहि नहि करए नयन ढर नोर।
काँच कमल भमरा झिकझोर॥ ८॥
जइसे डगमग नलनि क नीर।
तइसे डगमग धनि क सरीर॥ १०॥
भन विद्यापति सुनु कविराज।
आगि जारि पुनि आगि क काज॥ १२॥

१—लए जाह = ले जाओ। जनि = मत, नहीं। २ = बालिक = बालिका। आकुल = घबराया हुआ। नाह = नाथ, प्रीतम। ३—गोट गोट = एक-एक कर। गेलि = गई। बहराय = बाहर होना। ४—बजर = वज्र तुल्य। पहु = प्रभु, प्रीतम। देलहि = दिया। ५—पहु = प्रीतम (यहाँ कामदेव से तात्पर्य है)। ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही, मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये। ७—नोर = आँसू। ८—काँच कमल = अधखिला कमल। भमरा = भौंरा। ६—डगमग = हिलता-डुलता। नलनिक नीर = कमल के (पत्ते पर का) पानी। १०—धनि क = धनि के, बाला के। १२—आग जलाई जाती है, तोभी तो फिर आग की आवश्यकता होती है।

(८३)

निबि-बधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ बिचारि।
बड तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जौं हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
बिहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए बिलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजय निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति एहो रस जान।
नृप सिवसिंघ लखिमा विरमान ॥ १४ ॥

१—निबि बधन = फोंफे का बन्धन। किए = क्यों। २—एहो पए = इससे भी। ३—हेरने = देखने से। ४—बुझल = मैं समझ गई। ५—हेरह—देखो। ६—लहु लहु = धीरे धीरे। पारब गारि = गाली दूँगी। ७—खुश होकर बिहार करो, [बिहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार = ऐसा ढंग। १०—काम-क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन = पड़ोसी। तेजय निसास = [केलि समय में] निश्वास लेना। १२—रमह = समोग करो। पास = निकट। १४—

(८२)

रति-सुबिसारद तुहु राख मान।
बाढ़िले जौवन तोहे देब दान॥ २॥
आबे से अलप रस न पूरब आस।
थोर सलिल तुअ न जाब पियास॥ ४॥
अलप अलप रति यहि चाहि नीति।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति॥ ६॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि।
न दिह नख-रेख हरि रस जानि॥ ८॥
भनइ विद्यापति कइसन रीति।
काँच दाड़िम प्रति पेसन प्रीति॥ १०॥

१—रति सुबिसारद = कामक्रीड़ा में परम चतुर। तुहु = तुम। मान = मर्यादा। २—आबे = इस समय। से = वह। अलप = थोड़ा। पूरब = पूरेगा। ३—सलिल = पानी। तुअ = तेरी। न जाब = नहीं जायगी। ५-६—जिस प्रकार प्रतिपदा मे चन्द्रमा थोड़ा थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी थोड़ी करके बढ़ानी चाहिये, यही नीति है। ७—थोरि = छोटी। पयोधर = कुच। पानि = हाथ अभी कुच छोटे हैं, उनमे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे। ८—हे हरि, ऊपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत नकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो। ९—कइसन = किस प्रकार की। १०— दाड़िम = अनार [कुच की उपमा]। पेसन = इस प्रकार।

"जहाँ न जाय रवि। तहाँ जाय कवि।"

(८३)

निबि-बधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ विचारि।
बड तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जों हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
बिहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए बिलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजब निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति एहो रस जान।
नृप सिवसिंघ लखिमा रिरमान ॥ १४ ॥

१—निबि बंधन = कोंचे का बन्धन। किए = क्यों। २—एहो पए = इससे भी। ३—हेरने = देखने से। ४—बुझल = मैं समझ गई। ५—हेरह—देखो। ६—लहु लहु = धीरे धीरे। पारब गारि = गाली दूँगी। ७—खुश होकर बिहार करो, [बिहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार = ऐसा ढग। १०—काम क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन = पड़ोसी। तेजब निसास = [केलि समय में] निश्वास लेना। १२—रमह = सभोग करो। पास = निकट। १४—रिरमान = पति।

(८२)

रति-सुबिसारद तुहु राख मान।
बाढिले जौवन तोहे देव दान ॥ २ ॥
आबे से अलप रस न पूरब आस।
थोर सलिल तुअ न जाव पियास ॥ ४ ॥
अलप अलप रति यहि चाहि नीति।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ॥ ६ ॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि।
न दिह नख-रेख हरि रस जानि ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति कइसन रीति।
काँच दाडिम प्रति ऐसन प्रीति ॥ १० ॥

१—रति सुबिसारद = कामक्रीड़ा में परम चतुर। तुहु = तुम। मान = मर्यादा। २—आबे = इस समय। से = वह। अलप = थोड़ा। पूरब = पूरेगा। ३—सलिल = पानी। तुअ = तेरी। न जाव = नहीं जायगी। ४–६—जिस प्रकार प्रतिपदा से चन्द्रमा थोड़ा थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी थोड़ी करके बढ़ानी चाहिये, यही नीति है। ७—थोरि = छोटी। पयोधर = कुच। पानि = हाथ अभी कुच छोटे हैं, उनसे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे। ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत खकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो। ९—कइसन = किस प्रकार की। १०— दाड़िम = अनार [कुच की उपमा]। ऐसन = इस प्रकार।

"जहाँ न जाय रवि। तहाँ जाय कवि।"

(८३)

निवि-वधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ विचारि।
बड़ तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जौं हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
विहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए विलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजब निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति एहो रस भान।
नृप सिवसिंघ लखिमा विरमान ॥ १४ ॥

१—निवि बधन = कोंचे का बन्धन। किए = क्यों। २—एहो पए = इससे भी। ३—हेरने = देखने से। ४—बुझल = मैं समझ गई। ५—हेरह—देखो। ६—लहु लहु = धीरे धीरे। पारब गारि = गाली दूँगी। ७—खुश होकर बिहार करो, [बिहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार = ऐसा ढग। १०—काम क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन = पड़ोसी। तेजब निसास = [केलि समय में] निःश्वास लेना। १२—रमह = संभोग करो। पास = निकट। १४—विरमान = पति।

(८४)

सुन सुन नागर निवि-बंध छोर।
गाँठिते नहिं सुरत-धन मोर ॥ २ ॥
सुरत क नाम सुनल हम आज।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ॥ ४ ॥
सुरत क खोज करब जहाँ पाब।
घर कि अछए नाहि सखिरे सुधाब ॥ ६ ॥
बेरि एक माधव सुन मझु बानि।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ॥ ८ ॥
बिनति करए धनि माँगे परिहार।
नागरि-चातुरि भन कवि-कंठहार ॥ १० ॥

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से, वर्णित है।
ष्ण राधा से 'सुरत' माँग रहे हैं—राधा से काम क्रीड़ा करने को कह रहे
-इसपर राधा कहती है,—"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन
ोड़ो, इसकी गाँठ में 'सुरत' रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत'
ा नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' [कौन है और] क्या
ाम करता है। हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी।
खियों से पूछूँगी [सखि रे सुधाब] कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव!
क बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूँगी तो खोज
ूँढ़कर तुम्हें ला दूँगी।" यों नायिका विनती करती और उन्हें मना कर
ही है, कवि कण्ठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता
ूर्ण।) वर्णन करते हैं।

(८५)

हरि-कर हरनि नयनि तब सौंपलि
सखिगन गेलि आन ठाम ।
अवसर पाइ धनि कर धरि नागर
बिनति करय अनुपाम ॥ २ ॥
हरनि-नयनि धनि रामा ।
कानु क सरस परस सभापन
मेटल लाज क धामा ॥ ४ ॥
सुखद सेजोपरि नागरि नागर
बइसल नव रति साधे ।
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर थर काँपए राधे ॥ ६ ॥
मदन सिंहासन करल अरोहन
मोहन रसिक सुजान ।
भय गढ़ तोड़ल अलप समाधल
राखल सकल समान ॥ ८ ॥
कह कवि-सेखर गरुअ भूख पर
करु जल थोर अहार ।
अइसन दुहुमन तलफइ पुन पुन
उपजल अधिक विकार ॥ १० ॥

४—सरस परस = रसमय स्पर्श, आलिंगन । ५—सेजोपरि—शय्या
; ऊपर । करल अरोहन = आरोहण किया, चढ़े । ८—अलप समाधल =
ाेड़े से संतुष्ट किया । समान = मान-सहित । १०—गरुअ = अधिक ।

(८४)

सुन सुन नागर निवि-बंध छोर।
गाँठिते नहिं सुरत-धन मोर ॥ २ ॥
सुरत क नाम सुनल हम आज।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ॥ ४ ॥
सुरत क खोज करब जहाँ पाव।
घर कि अछए नाहि सखिरे सुधाव ॥ ६ ॥
बेरि एक माधव सुन मभु बानि।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ॥ ८ ॥
विनति करए धनि माँगे परिहार।
नागरि चातुरि भन कवि-कठहार ॥ १० ॥

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से, वर्णित है। कृष्ण राधा से 'सुरत' माँग रहे हैं—राधा से काम क्रीड़ा करने को कह रहे हैं-इसपर राधा कहती है,—"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन छोड़ो, इसकी गाँठ में 'सुरत' रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' [कौन है और] क्या काम करता है। हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी। सखियों से पूछूँगी [सखि रे सुधाव] कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव! एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूँगी तो खोज ढूँढ़कर तुम्हें ला दूँगी।" यों नायिका विनती करती और उन्हें मना कर रही है, कवि कण्ठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता पूर्ण।) वर्णन करते हैं।

(८१)

हे हरि हे हरि सुनिए स्रवन भरि
अब न बिलास क बेरा।
गगन नखत छल से अबेकत भेल
कोकिल करइछ फेरा ॥ २ ॥
चकवा मोर सोर कए चुप भेल
उठिए मलिन भेल चंदा।
नगर क धेनु डगर कए सचर
कुमुदनि बस मकरंदा ॥ ४ ॥
मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अवसर भल नहिं मंदा।
विद्यापति भन एहो न निक थिक
जग भरि करइछ निंदा ॥ ६ ॥

१—सवन भरि=कान भरकर, अच्छी तरह। बिलास क बेरा=केलि का समय। २—गगन=आकाश। नखत=नक्षत्र, तारे। छल=थे। से=वह। अबेकत भेल=अव्यक्त हुए, छिप गये। करइछ फेरा=फेरा कर रही है, इधर-उधर पुकार रही है। ३—सोर कए=शोरगुल करके। चुप भेल=चुप हो गये। ४—धेनु=गौ। डगर=राह सचर=जो रही है। कुमुदनि बस मकरंदा=कुमुदनियों से मकरंद (पराग) का झरना (मध) बस (खतम) हो गया अर्थात् वे मुँद गईं। मुख केर=मुख का। सेहो=वह भी। ५—भल=भला, अच्छा। मन्दा=बुरा। निक=अच्छा, उचित। थिक=है।

(८६)

सुरत समापि सुतल वर नागर
पानि पयोधर आपी।
कनक-सभु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥ २ ॥
सखि हे माधव, केलि विलासे।
मालति रमि अलि ताहि अगोरसि
पुनु रति-रग क आसे ॥ ४ ॥
चदन मेराए धएल मुख-मडल
कमल मिलल जनि चन्दा।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल
पीवि अमिय मकरन्दा ॥ ६ ॥
भनइ अमीकर सुनह मधुरपति
राधा-चरित अपारे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सुकवि भनथि कठहारे ॥ ८ ॥

---

१ — सुरत = काम-क्रीड़ा। समापि = समाप्त कर। सुतल = सो गया। पानि = हाथ। पयोधर = कुच। आपी = अर्पित कर, रख। २—कनक-सभु = सोने का महादेव। सरोरुह = कमल। ४ — अलि = भौंरा। अगोरसि = अगोरे रहता है। ५ — मेराए = मिलाकर। धएल = रखा। वदन * मडल = कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख से सटाकर रखा। ६—दुअओ = दोनों। अरसाएल = अलसा गये। अमीकर = शिवसिंह के मन्त्री। सुकवि-कठहार = विद्यापति।

सखी-सम्भाषण

(६१)

सामरि हे झामरि तोर देह।
की कह के सयँ लाएलि नेह ॥ २ ॥
नींद भरल अछ लोचन तोर।
कोमल वदन कमल-रुचि चोर ॥ ४ ॥
निरस धुसर करु अधर पँवार।
कौन कुबुधि लुटु मदन भँडार ॥ ६ ॥
कोन कुमति कुच नख-खत देल।
हाय हाय सम्भु भगन भए गेल ॥ ८ ॥
दमन लता सम तनु सुकुमार।
फूटल वलय टुटल गृम हार ॥ १० ॥
केस कुसुम तोर, सिर क सिंदूर।
अलक तिलक हे सेउ गेल दूर ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति रति अवसान।
राजा सिवसिंघ ई रस जान ॥ १४ ॥

अनुपामिए = उपमा देते हैं। ६ — जितल परागे = पराग को जीत लिया
पीला पड़ गया। ७—चगिम = सुन्दर। ७— सामु = सामने।

१—सामरि = श्यामा, सुन्दरी। झामरि = मलिन। २-की = क्या
के सयँ = किससे। लाएलि = लाई। ३—अछ = है। ४—कोमल
मुख की कमल-सदृश आभा चोरी चली गई है—वह मंद पड़ गया है।
५—धुसर = धूसर, भूरा। पँवार = प्रवाल, मूंगा। ७—खत = घाव,
ाव। ९—दमन लता = द्रोण पुष्प की लता। १०— वलय = हाथ
ी चूड़ी। गृम = ग्रीवा, गला। ११— कुसुम = पुष्प। १२—अलक =
लता, महावर। १४—अवसान = समाप्त।

(९०)

आजु देखलिसि कालि देखलिसि
आज कालि कत भेद ।
सैसव बापुर सीमा छाडल
जऊवन बाँधल फेदु ॥ २ ॥
सुन्दर कनककेआ मुति गोरी ।
दिन दिन चाँद-कला सयँ बाढलि
जऊवन सोभा तोरी ॥ ४ ॥
बाल पयोधर गिरि क सहोदर
अनुपामिए अनुरागे ।
कओन पुरुष कर परसए पाओल
जे तनु जितल परागे ॥ ६ ॥
मन्द हास वकिम कए दरसए
चगिम भौंह विभगे ।
लाज वेआकुलि सामु न हेरए
आओल नयन तरगे ॥ ८ ॥
विद्यापति कविवर यह गावए
नव जौवन नव कन्ता ।
सिवसिंघ राजा एह रस जानए
मधुमति देवि सुकन्ता ॥ १० ॥

१—बापुर = बेचारा । फेद (अस्पष्ट) । ३—कनककेआ = कनकीया, स्वर्ण निर्मिता । मूर्ति = मूर्ति । ५—बाल पयोधर = छोटे छोटे कुच । गिरि क सहोदर = पहाड़ के भाई (पहाड़ के ऐसे) ।

(६५)

कि कहव हे सखि आजु क विचार।
से सुपुरुख मोहे कएल सिंगार ॥ २ ॥
हँसि हँसि पहु आलिंगन देल।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल ॥ ४ ॥
आँचर परसि पयोधर हेरु।
जनम पगु जनि भेंटल सुमेरु ॥ ६ ॥
जत निबि-बंध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान ॥ ८ ॥
रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि।
तोहर पुने जीअलि हम नारि ॥ १० ॥
कह कवि रंजन सहज मधु राई।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई ॥ १२ ॥

चोट। १६—केहरि = सिंह। गज कुम = हाथी का मस्तक। बिदार = फाड़ना। १८— चेतन = चतुर। लुबुध = लोभायमान।

२—कएल — किया। ३—पहु — प्रीतम। ४—मनमथ = कामदेव। कुसुमित = फूला हुआ। कामदेव रूपी अँकुर फूल उठा-काम का पूर्ण विकार हुआ। ५—आचर = अंचल। पयोधर = कुच। हेरु = देखना। ६—पगु = पगहीन। जनि = मानों। ७—खसाओल = (खोलकर) गिरा दिया। कान = कृष्ण। ९— रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़ा कठोर-हृदय है। १०—पुने = पुण्य से। जीअलि = जीती बची। ११-सहज मधु राई = राई (राधा) स्वभावत ही मधु (सदृश) है। १२-गेल चतुराई = चतुरता खतम हो गई।

(६४)

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध।
की कहव हमहु तकर परवोध ॥ २ ॥
अलप वयस हम कानु से तरुना।
अतिहु लाज डर अतिहू करुना ॥ ४ ॥
लोभे निठुर हरि कपलन्हि केलि।
की कहब जामिनि जन दुख देलि ॥ ६ ॥
हठ भेल रस मोर हरल गेआन।
निवि-बँध तोडल कखन के जान ॥ ८ ॥
देल आलिंगन भुज जुग चापि।
तखन हृदय मझु ऊठल कांपि ॥ १० ॥
नयन वारि दरसाओलि रोइ।
तवहु कान्हु उपसम नहिं होइ ॥ १२ ॥
अधर सुरस मझु कपलन्हि मन्द।
राहु गरासि निसि तेजल चन्द ॥ १४ ॥
कुच जुग देलन्हि नख-परहार।
केहरि जनि गज-कुम्भ विदार ॥ १६ ॥
भनइ विद्यापति रसवति नारि।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥ १८ ॥

२—तकर = उसका। ६—जामिनी = रात। जत = जितना। ८—कखन = कब। ६—भुज जुग = दोनों हाथ। चापि = दबाकर। १०—तखन = उस समय। १२—उपसम = शान्त, ठंढा। १३-अधर = ओष्ठ। १४—तेजल = छोड़ दिया। १५—नख-परहार = नखों की

(६५)

कि कहब हे सखि आजु क विचार।
से सुपुरुख मोहे कएल सिंगार ॥ २ ॥
हँसि हँसि पहु आलिंगन देल।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल ॥ ४ ॥
आँचर परसि पयोधर हेरु।
जनम पगु जनि भेंटल सुमेरु ॥ ६ ॥
जत निवि बंध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान ॥ ८ ॥
रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि।
तोहर पुने जीअलि हम नारि ॥ १० ॥
कह कवि रंजन सहज मधु राई।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई ॥ १२ ॥

चोट। १६—केहरि = सिंह। गज कुंभ = हाथी का मस्तक। विदार = फाड़ना। १८—चेतन = चतुरा। लुबुध = लोभायमान।

२—कएल—किया। ३—पहु—प्रीतम। ४—मनमथ = कामदेव। कुसुमित = फूला हुआ। कामदेव रूपी अँकुर फूल उठा-काम का पूर्ण विकास हुआ। ५—आंचर = अंचल। पयोधर = कुच। हेरु = देखना। ६—पगु = पगहीन। जनि = मानों। ७—खसाओल = (खोलकर) गिरा दिया। कान = कृष्ण। ९—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़ा कठोर-हृदय है। १०—पुने = पुण्य से। जीअलि = जीती बची। ११—सहज मधु राई = राई (राधा) स्वभावतः ही मधु (सदृश) है। १२—गेल चतुराई = चतुरता खतम हो गई।

(६४)

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध।
की कहब हमहु तकर परबोध ॥ २ ॥
अलप बयस हम कानु से तरुना।
अतिहु लाज डर अतिहू करुना ॥ ४ ॥
लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ॥ ६ ॥
हठ भेल रस मोर हरल गेआन।
निवि-बँध तोडल कखन के जान ॥ ८ ॥
देल आलिगन भुज-जुग चापि।
तखन हृदय मझु ऊठल कापि ॥ १० ॥
नयन बारि दरसाओलि रोइ।
तबहु कान्हु उपसम नहिं होइ ॥ १२ ॥
अधर सुरस मझु कएलन्हि मन्द।
राहु गरासि निसि तेजल चन्द ॥ १४ ॥
कुच जुग देलन्हि नख-परहार।
केहरि जनि गज-कुम्भ बिदार ॥ १६ ॥
भनइ विद्यापति रसवति नारि।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥ १८ ॥

२—तकर = उसका। ६—जामिनी = रात। जत = जितना। ८—कखन = कब। ९—भुज जुग = दोनों हाथ। चापि = दबाकर। १०—तखन = उस समय। १२—उपसम = शान्त, ठंढा। १३-अधर = ओठ। १४—तेजल = छोड़ दिया। १५—नख परहार = नखों की

(६७)

कि कहव हे सखि रातुक बात।
मानिक पड़ल कुबानिक हात ॥ २ ॥
काँच कचन न जानए मूल।
गुजा रतन करए समतूल ॥ ४ ॥
जे किछु कभु नहि कला रस जान।
नीर खीर दुहु करए समान ॥ ६ ॥
तन्हि सौं कहाँ पिरीत रसाल।
बानर कठ कि मोतिम माल ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति इह रस जान।
बानर-मुँह की सोभए पान ॥ १० ॥

१०—उगत = उगेगा। सूर = सूर्य। ११—मोयँ = मैं। तहि = उस। १२—बरु = भले ही। नहावथि = छोड़ दे। १४—आग जलाती है, किन्तु पुन आग ही की जरूरत होती है।

१—कि कहव = क्या कहूँ। रातु क = रात की। २—मानिक = माणिक, मणि। पड़ल = पड़ गया। कुबानिक = मपढ़ व्यापारी। हात = हाथ। ३—कचन = सोना। मूल = मूल्य, कीमत। ४—गुजा = एक प्रकार का लाल फल जो जगल में विशेष होता है, वनवासी इसकी माला बनाते है, घुँघची। रतन = रत्न, मणि। समतूल = समान। ६—नीर = पानी। खीर = क्षीर = दूध। ७—तन्हि सौं = उनसे। रसाल = रसमय। ८—बानर = बदर। कि = क्या। ९—इह = यह। १०—की = क्या। सोभए = शोभता है।

(६६)

दृढ परिरम्भन पीडलि मदने।
उवरि अएलहुँ सखि पुरब पुने ॥ २ ॥
टुटि छिडिआएल मोतिम हार।
सिंदुर लोटाएल सुरग पँवार ॥ ४ ॥
सुन्दर कुच जुग नख-खत भरी।
जनि गज कुभ विदारल हरी ॥ ६ ॥
अधर दसन देखि जिउ मोरा काँपे।
चाँद-मडल जनि राहु क झाँपे ॥ ८ ॥
समुद ऐसन निसि न पारिए ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर ॥ १० ॥
मोयँ न जाएब सखि तन्हि पिया-ठाम।
वरु जिय मारि नड़ाघथि काम ॥१२॥
भनइ विद्यापति तेजभय लाज।
आग जारिये पुनु आगि क काज ॥१४॥

१—परिरम्भन = गाढ आलिंगन। पीड़लि = पीड़ित हुई। मदने = काम द्वारा। २—उवरि अएलहुँ = मैं बच आई। पुने = पुण्य से। ३—छिड़िआएल = बिखर पड़ा। ४—सुरग = लाल। पँवार = प्रवाल। मूँगा। ५—कुच = स्तन। जुग = दो। नख खत = नखों द्वारा दिये गये घाव। ६—गज-कुंभ = हाथी का मस्तक। विदारल = विदीर्ण किया। चीर फाड़ डाला। हरी = सिंह। ७—ओष्ठ पर दाँतों का आक्रमण करते देख मेरे प्राण काँप उठे। ८—राहु क झाँपे = राहु का आक्रमण। ९—समुद = समुद्र, सागर। ऐसन = समान। ऊर = ओर, सीमा।

तखन विनय जत से सब कहब कत
कहए चाहल कर ओली ।
नव रस-रग भग भए गेल सखि
ओर धरि भेल न बोली ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वरजौवति
पहु अभिमत अभिमाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ बिरमाने ॥१०॥

७—तखन = उस समय। जत = जितना। से = वह। कहब = कहूँगी। कत = कितना। कहए चाहल = कहना चाहा। कर-ओली = हाथ जोड़कर। ८—नव = नवीन नया। भग भए गेल = भग हो गया। ओर = अन्त। ओर धरि भेल न बोली = अन्त तक कह भी न सके—साफ साफ बात भी नहीं कह सके। ७—८—इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनों हाथ जोड़कर उस समय उसकी प्रार्थना करने लगे। यों, ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिये जोड़े जाने के कारण रति रग में भंग हो गया। फिर तो कृष्ण के मुख से बोली तक न निकली। इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे। ९—पहु = प्रभु, प्रीतम। अभिमत = युक्तियुक्त। १०—बिरमाने = विरमण, प्रीतम, पति।

---

(९८)

पहिलुक परिचय पेम क संचय
रजनी आध समाजे।
सकल कला-रस सँभरि न भेले
वैरिनि भेलि मोरि लाजे ॥ २ ॥
साए साए अनुसए रहलि बहूते।
तन्हिहि सुबन्धु के कहिए पठाइअ
जौं भमरा होअ दूते ॥ ४ ॥
खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच-भंगे।
एकलि नारि हम कत अनुरंजब
एकहि बेरि सब रंगे ॥ ६ ॥

१—पहिलुक = प्रथम बार का। परिचय = जान पहचान। पेम क = प्रेम का। रजनी = रात। पहली बार का परिचय था—प्रथम प्रथम भेंट हुई थी, अत प्रेम के सचय में ही—प्रेमोत्पत्ति में ही—आधी रात बीत गई। २—सँभरि न भेले = सँभल कर न हुआ—अच्छी तरह नहीं हुआ। भेलि = हुई। ३—साए = सखि। अनुसए = अनु-ताँप, पछतावा। रहलि = रह गया। ४—तन्हिहि = उनके। कहिए पठाइअ = बोल पठाना, बुला भेजना। जौं = जिस प्रकार। भमरा = भ्रमर = भौंरा। ५—खनहि = क्षण। चीर = साड़ी। चिकुर = केश। गह = पकड़ना। कुच भंगे = कुच को विदीर्ण करना। ६—एकलि = अकेली। कत = कितना। अनुरंजब—अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी। बेरि = बार।

कौतुक

(६६)

उठ उठ माधव फि_सुतसि मद ।
गहन लाग देतु पुनिम क चद ॥ २ ॥
हार-रोमावलि जमुना गग ।
त्रिवलि त्रिवेनी विम्र अनग ॥ ४ ॥
सिंदुर-तिलक तरनि सम भास ।
धूसर मुख-ससि नहि परगास ॥ ६ ॥
एहन समय पूजह पँचवान ।
होश्र उगरास देह रतिदान ॥ ८ ॥
पिक मधुकर पुर कहइत बोल ।
अलपश्रो अवसर दान अतोल ॥१०॥
विद्यापति कवि एहो रस भान ।
राए सिवसिंघ सब रस क निधान ॥१२॥

---

१ — मद = असमय । २ — गहन = ग्रहण । ३—४ - रोमावलि = र के निकट के केशों की पंक्ति । त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन एँ । अनग = कामदेव । हार और रोमावली क्रमश गगा और ना है, त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है । ५— र तिलक = सिंदूर का टीका । तरनि = सूर्य । भास = प्रकाशित । —धूसर = धूमिल, प्रभाहीन । परगास = प्रकाश । ७—एहन = ऐसा । बान = कामदेव । ८—होश्र उगरास = उगरास होगा, ग्रहण छूटेगा । रतिदान = रति का दान दो । ९—पिक = कोयल । मधुकर = । पुर कहइत बोल = गाँव में कहता फिरता है । १०—अल- = थोड़ा ही । अतोल = अनन्त ।

(१०१)

अम्बर बदन झपाबह गोरी।
राज सुनइछिअ चाँद क चोरी॥ २॥
घर घर पहरि गेल अछ जोहि।
अबही दूखन लागत तोहि॥ ४॥
कतए नुकाएब चाँद क चोर।
जतहि नुकाओब ततहि उजोर॥ ६॥
हास-सुधारस न कर उजोर।
बनिक-धनिक धन बोलब मोर॥ ८॥
अधर क सीम सदनै कर जोति।
सिंदुर क सीम बैसाओलि मोति॥१०॥
भनइ विद्यापति होह निरसक। *
चाँदहु काँ थिक भेद कलक॥१२॥

१—अम्बर = वस्त्र। बदन = मुख। झपावह = ढाँप लो। २—चाँद क = चन्द्रमा को। ३—पहरि = पहरी, पहरुआ। गेल छन जोहि = ढूँढ गया है। ४—दूखन = दोष, कलंक। ५—कतए = कहाँ। नुकाएब = छिपेगा। ६—उजोर = प्रकाश। ७—१०—हास = हँसी। सुधारस = अमृत का रस। अधर क सीम = ओठ के निकट। दसन = दाँत। बैसाओलि = बैठाया। हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर बिन्दु मोती-से चमक रहे हैं। ११—होह = होओ। १२—थिक = है। चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है, क्योंकि उसमें कलक है।

(१००)

त्रिवलि-तरंगिनि पुर दुग्गम जानि
मनमथ पत्र पठाऊ।
जौवन-दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति दूत बढाऊ ॥ २ ॥
माधव, अब, देखु साजिए बाला।
तसु सैसव तोहें जे सतापल
से सब आओत पाला ॥ ४ ॥
कुंडल चक्र तिलक अंकुस कए
चँदन कवच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अछि बामा ॥६॥
सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
विद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ ८ ॥

१— त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। तरंगिनि = नदी। त्रिवली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २—दलपति = सेनापति। समर लागि = युद्ध के लिये। ऋतुपति = वसंत। ४—तसु = उसके। तोहें = तुमने। सतापल = दुख दिया। ५—कुंडल चक्र = कुंडल (कर्णफूल) चक्र है। तिलक अंकुस = टीका ही अंकुश है। चँदन कवच = चंदन का लेप ही शरीर त्राण है। ६—कमान = धनुष। ७—खेत = युद्धभूमि।

(१०१)

अम्बर बदन झपावह गोरी।
राज सुनइछिअ चाँद क चोरी ॥ २ ॥
घर घर पहरि गेल अछ जोहि।
अबही दूखन लागत तोहि ॥ ४ ॥
कतए नुकाएब चाँद क चोर।
जतहि नुकाओब ततहि उजोर ॥ ६ ॥
हास-सुधारस न कर उजोर।
बनिक-धनिक धन बोलब मोर ॥ ८ ॥
अधर क सीम दसन कर जोति।
सिंदुर क सीम बसाओलि मोति ॥१०॥
भनइ विद्यापति होइ निसंक।
चाँदहु काँ थिक भेद कलंक ॥१२॥

१—अम्बर = वस्त्र । बदन = मुख । झपावह = ढाँप लो । २—चाँद क = चन्द्रमा की । ३—पहरि = पहरी, पहरुआ । गेल छथ जोहि = ढूँढ़ गया है । ४—दूखन = दोष, कलंक । ५—कतए = कहाँ । नुकाएब = छिपेगा । ६—उजोर = प्रकाश । ७—१०—हास = हँसी । सुधारस = अमृत का रस । अधर क सीम = ओष्ठ के निकट । दसन = दाँत । बैसाओलि = बैठाया । हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओष्ठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर बिन्दु मोती-से चमक रहे हैं। ११—होइ = होओ । १२—थिक = है । चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है, क्योंकि उसमें कलंक है।

(१०२)

लोलुअ वदन-सिरी अछि धनि तोरि।
जनु लागिह तोहि चाँद क चोरि॥ २॥
दरसि हलह, जनु हेरह काहु।
चाँद-भरम मुख गरसत राहु॥ ४॥
धवल नयन तोर जनि तरुआर।
तीख तरल तेहि कटाख क धार॥ ६॥
निरखि निहारि फास गुन जोलि।
बाँधि हलब तोहि खजन बोलि॥ ८॥
सागर सार चोराओल चद।
ता लागि राहु करए वड दद॥१०॥
भनइ विद्यापति होउ निरसक।
चाँदहु की किछु लागु कलक॥१२॥

१—लोलुअ = आन्दोलित, चचल। वदन–सिरी = वदनश्री, मुख की शोभा। अछि = अस्ति, है। धनि = स्त्री। २—जनु = नहीं। ३–४—दरसि हलह = देखकर (झटपट) हट जाओ। "शृगार-तिलक" में यों ही लिखा है—"झटिति प्रविश गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण-समय-वेला वर्त्तते शीतरश्मे। तव मुखमकलक वीक्ष्य नून स राहु। ग्रसति तव मुखेन्दु पूर्णचन्द्र विहाय॥—" ५—धवल = उजला। जनि = ऐसा। तरुआर = तलवार। ६—तीख = तीक्ष्ण। कटाख क = कटाक्ष की। ७–८—निरखि = नीचे की ओर। फास गुन = गुण रूपी फाँस में। जोलि = जोड़कर, बाँधकर। हलब = ले जायगा। बोलि = समझकर। ९—सागर-सार = अमृत। १०—दद = द्वद्व। जोर–जुल्म।

साँझ क बेरि उगल नव ससधर
भरम विदित सबिताहु।
कुण्डल चक्र तरास नुकाएल
दूर भेल हेरथि राहु ॥ २ ॥
जनु वइससि रे वदन हाथ लाई।
तुअ मुख चगिम अधिक चपल भेल
कति खन धरब नुकाई ॥ ४ ॥
रक्तोपल जनि कमल वइसाओल
नील नलिनि दल तहु।
तिलक कुसुम तहु माझु देखि कहु
भमर आवथि लहु लहु ॥ ६ ॥
पानि-पलव-गत अधर विम्ब-रत
दसन दाडिम-विज तोरे।
कीर दूर भेल पास न आवए
भौंह धनुहि के भोरे ॥ ८ ॥

१—सन्ध्या के समय नवीन चन्द्र का उदय हुआ, जिससे सूर्य को भी भ्रम हुआ—मतलब यह है, सूर्यास्त हो रहा था, उसी समय नायिका घर से निकली। सूर्य अभी पूर्णतः अस्त नहीं हुए थे, उन्हें आश्चर्य हुआ कि मेरे अस्त होने के पहले ही यह कौन सा नवीन चन्द्रमा उदित हुआ। २—कुण्डल चक्र = कुंडल (कर्णफूल) रूपी चक्र। नुकाएल = छिपा हुआ। ३—वदन हाथ लाई = मुख हाथ पर रखकर। ४—चगिम = सुन्दर। कति खन = कब तक।

(१०४)

वड कौसलि तुअ राधे।
किनल कन्हाई लोचन आधे ॥२॥
ऋतुपति-हटवए नहिं परमादी।
मनमथ-मधुथ उचित मूलबादी ॥ ४ ॥
द्विज-पिक लेखक मसि मकरंदा।
काँप भमर-पद साखी चंदा ॥ ६ ॥
वहि रति-रंग लिखापन माने।
श्री सिवसिंघ सरस-कवि भाने ॥ ८ ॥

५—रक्तोपल=लाल कमल (हाथ)। कमल=(मुख)। नील नलिनी=नील कमल (आँखें)। तहु=वहाँ भी। ६—लहु लहु=धीरे धीरे। ७—पानि-पलव-गत=हाथ पल्लव के समान है। अधर=ओष्ठ। बिम्ब रत=बिम्ब फल के समान। दाड़िम बिज=अनार के दाने। ८—कीर=सुग्गा। भोरे=भ्रम में।

१—कौसलि=सुचतुरा। किनल=क्रय किया, खरीदा। ३=लोचन आधे=आधी आँख से एक कटाक्ष से। ऋतुपति=वसन्त। हटवए—व्यापारी। नहिं परमादी=प्रमादी नहीं, बुद्धिमान्। ४—मनमथ=कामदेव। मधथ=मध्यस्थ, दलाल। मूल=मूल्य। बादी=कहनेवाला। ५—द्विज पिक लेखक=कोयल-रूपी ब्राह्मण लेखक है। मसि=रोशनाई। मकरन्दा=पराग। ६—काँप=काँड़े का कलम। भमर पद=भौंरे का पैर। साखी=साक्षी, गवाह। वहि=बही, हिसाब की पुस्तक। रति-रंग=काम विलास। लिखापन माने=मान लिखा गया। इस पद का

(१०५)

कचन गढल हृदय-हथिसार ।
ते थिर थम्भ पयोधर भार ॥ २ ॥
लाज सिकर धर दृढ कए गोए ।
आनक वचन हलह जनु कोए ॥ ४ ॥
दूर कर अगे सखि चिन्ता आन ।
जओन हाथि करिय अवधान ॥ ६ ॥
मनसिज-मदजल जओ उमताए ।
धरिहसि पिअतम आकुल लाए ॥ ८ ॥
जाते न सुमत तारे अगोर ।
मुसहत मनिहसि मानस चोर ॥ १० ॥
भन विद्यापति सुन मतिमान ।
हाथि महत नव के नहि जान ॥ १२ ॥

संस्कृतानुवाद स्वय विद्यापति ने यों किया है—"रत्नाकरसुगा मायो मस्व कृष्णस्य राधिके । लोचनार्द्धेन स क्रीतस्त्वया ते कोशलम्महत ॥ हृष्टाविपो वस"तरसोऽप्रमादी विचक्षण । योग्यमूल्यार्थं वादी च मध्यस्थो म"मथोऽभवत् । भ्रमरस्य पद कर्पो लेखक कोकिलो द्विज । अभूत् कृष्ण क्रये राधे शरीपात्र मसी मधु ॥ बहिर्नेत्रि रति भीक्षा मानो मेदन लेखक । कृष्णस्य शिवसिंहेन वाणी विद्यापते कवे'।'

१—कचन = सोना । हथिसार = हस्ती शाला । २—थिर=स्थिर । थम्म = स्तम्भ, खम्भा । पयोधर = कुच । ३—सिकर = शृंखला, जञ्जीर । गोए = छिपाकर । ४—आनक = दूसरे के । हलह जनु कोए = कभी मत खोल दो । ६—अवानी को ही हाथी समझ लो ।

(१०७)

धनि धनि चलु अभिसार।
सुभ दिन आजु राजपन मनमथ
पाओर कि रीति बिथार ॥२॥
गुरुजन नयन अध करि आओल
बाधव तिमिर बिसेख।
तुअ उर फुरत बाम कुच लोचन
बहु मंगल करि लेख ॥४॥
कुलपति धरम करम भय अब सब
गुरु-मंदिर चलु गारि।
प्रियतम संग रंग करु चिर दिन
फलत मनोरथ साखि ॥६॥
नीरद बिजुरि बिजुरि सयँ नीरद
किंकिनि गरजन जान।
हरखए बरखए फुल सन साखी
सिखि कुल दुहु गुन गान ॥८॥

१—अभिसार = गुप्त मिलन। २—राजपन मनमथ = काम का राजत्व है। बिथार = विस्तार। ३—गुरुजन = बड़े लोग। बाधव = बंधु, मित्र। तिमिर = अंधकार। ४—फुरत = फड़कना। उर = हृदय। बाम = बायाँ। लेख = समझो। ६—साखि = साक्षी, वृक्ष। ७—नीरद = मेघ। सयँ = संग में। मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ) ८—सिखिकुल = मोर।

(१०८)

कह कह सुन्दरि न कर वेश्राज।
देखिअ आज अपूरुब साज॥ २॥
मृगमद पक करसि अँगराग।
कोन नागर परिनत होअ भाग॥ ४॥
पुनु पुनु उठसि पछिम दिसि हेरि।
कखन जाएत दिन कत अछि वेरि॥ ६॥
नूपुर उपर करसि कसि थीर।
दृढ कए पहिरसि तम सम चीर॥ ८॥
उठसि विहँसि हँसि तेजिए सार।
तोर मन भाव सघन अँधिआर॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनु वर नारि।
धैरज धर मन मिलत मुरारि॥१२॥

१—वेश्राज = बहाना। ३—मृगमद पक = कस्तूरी का लेप (जो काला होता है)। ४—कोन = कौन। किस नायक का भाग्य परिणत हुआ = किसका भाग्योदय हुआ है। ५—हेरि = देखना। ६—कखन = कब। कत = कितना। अछि—अस्ति = है। वेरि = समय। ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो। ८—तम-सम = अन्धकार के समान काला। ९—तेजिए सार = सार त्याग कर, अकारण ही। १०—तोर = तुम्हारे। भाव = अच्छा लगता है। अँधिआर = अन्धकार।

(१०६)

माधव, धनि आपलि कत भाँति।
प्रेम हेम परखाओल कसौटी
भादव कुहु तिथि राति ॥ २ ॥
गगन गरज घन ताहि न गन मन
कुलिस न कर मुख वका।
तिमिर-अजन जलधार धोए जनि
तैं उपजावति सका ॥ ४ ॥
भाग भुजग सिर कर अभिनय, कर-
झाँपल फनिमनि दीप।
जानि सजल घन से देइ चुम्बन
तैं तुअ मिलन समीप ॥ ६॥
नारि-रतन धनि नागर व्रज-मनि
रस गुन पहिरल हार।
गोविंद चरन मन कह कविरजन
सफल भेल अभिसार ॥ ८ ॥

२—हेम = सोना। कसौटी भादव कुहु तिथि राति = भादों की अमावस्या की रात रूपी कसौटी पर। ३—गगन = आकाश। कुलिस = वज्र, ठनका। मुख वका = मुख टेढ़ा करना, विमुख करना। ४—तिमिर अजन = अंधकार रूपी अजन का। जनि = नहीं। ५—भागते हुए सर्प के सिर पर मानो नृत्य करती है और सर्प के मणि को हाथ से ढाँप लेती है। ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में यों है—
विलसति चुम्बति जलधर कल्पम् हरिरुपगत इति तिमिर मन

(११०)

चन्दा जनि उग आजुक राति।
पिआ के लिखिअ पठाओब पाँति ॥ २ ॥
साओन सयँ हम करब पिरीत।
जत अभिमत अभिसार क रीत ॥ ४ ॥
अथवा राहु बुझाएब हँसी।
पिबि जनि उगिलह सीतल ससी ॥ ६ ॥
कोटि रतन जलधर तोहें लेह।
आजुक रयनि घन तम कए देह ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुभ अभिसार।
भल जन करथि पर क उपकार ॥१०॥

रूपम् ॥ ७—धनि = बाला (राधे)। नागर = नायक (कृष्ण) ८ = कविरञ्जन = विद्यापति का उपनाम।

१—जनि = नहीं । उग = उदय हो। पठाओब = पठाऊँगी, भेजूँगी। पाँति = पत्र। ३—साओन सयँ = श्रावण मास से। ४—अभिमत = मनोनीत। जो अभिसार करने की निश्चित रीति है—निश्चित काल है। ६—पिबि = पीकर। उगिलह = उगल दो। ससी चन्द्रमा। ७—जलधर = मेघ। लेह = लो। ८—रयनि = रजनी, रात। घन = घना, निबिड़। तम = अन्धकार। देह = दो। १०—करथि = करते हैं। पर क = दूसरे का।

Poetry is an emotion realized in tranquility
—Wordsworth.

(१११)

आजु मोयँ जाएब हरि समागम
कत मनोरथ भेल।
घर गुरुजन निंद निरुपद्दत
चन्द ऊदय देल ॥ २ ॥
चन्दा भलि नहि तुअ रीति।
एहि मति तोहँ कलँक लागल
किछु न गुनह भीति ॥ ४ ॥
जगत नागरि मुख जितल जब
गगन गेला हारि।
तहँओ राहु गरास पडला
देब तोह कि गारि ॥ ६ ॥
एक मास बिहि तोहि सिरिजए
दए सकलओ बल।
दोसर दिन पुनु पुर न रहसी
एही पाप क फल ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुन तोयँ जुवती
न कर चाँद क साति।
दिना सोरह चाँद क आइति
ताहि पर भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरुपद्दत = नींद का निरुपद्रव करते, सोते न सोते। ४—भीति = डर। ५—संसार में जब स्त्रियों ने तुम्हारे मुख को जीत लिया—अपनी मुखश्री से तुम्हें पराजित किया—तब तुम हारकर

(११२)

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई।
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर वलगई ॥२॥
सजनी, आजु दुरदिन भेल।
कत हमर नितांत अगुसरि सँकेत-कुञहि गेल ॥ ४ ॥
तरल जलधर बरिख झर झर, गरज घन घनघोर।
साम नागर एकले कइसन, पंथ हेरए मोर ॥ ६ ॥
सुमिरि मझु तनु अबस भेल जनि अथिर थर थर काँप।
इ मझु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाँप ॥ ८ ॥
तुरित चल अब किए विचारत, जीवन मझु अगुसार।
कवीसेखर वचन अभिसर, किए से विघिन-विथार॥१०॥

आकाश में भाग गये। ७—पुर = पूर्ण। ९—साति = शास्ति, निन्दा। १०—आइति = आयत्त, सीमा। ताहि पर = उसके बाद।

१—गगन = आकाश। घन = घना, निबिड़। दामिनि = बिजली। २—कुलिस पातन = वज्र का गिरना, ठनके की ठनक। खरतर वलगई = अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि = अग्रसर होकर, आगे जाकर। सकेत = गुप्त मिलन स्थान। ५—तरल = अस्थिर, चलायमान। जलधर = मेघ। बरिख = बरसता है। ६—साम = श्याम, श्रीकृष्ण। एकले = अकेले। ७—मझु = मेरा। अथिर = चचल। ८—ई = यह। गुरुजन = बड़े लोग, श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहि = अन्धकार। ९—तुरित = तुरत। किए = क्या। विचारत = विचारती हो। मझु = मध्य, में। अगुसार = अग्रसर होओ, बढ़ो। १०—अभिसर = अभिसार करो। विथार = विस्तार।

(११३)

रयनि काजर बम भीम भुजगम
कुलिस परए दुरबार।
गरज तरज मन रोस बरिस घन
संसअ पड़ अभिसार ॥२॥
सजनी, बचन छड़इत मोहि लाज।
होएत से होओ बरु सब हम अंगिकरु
साहस मन देल आज ॥४॥
अपन अहित लेख कहइत परतेख
हृदय न पारिअ ओर।
चाँद हरिन वह राहु कवल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१—रयनि = रात। बम = वमन करता है। रयनि काजर बम = रात अन्धकार पूर्ण है। भीम = विशाल, भयानक। भुजगम = सर्प। कुलिस वज्र, ठनका। दुरबार = जिससे बचना मुश्किल है। २—रोस = रोष, क्रोध। ४—होएत से होओ बरु = जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अंगिकर = अंगीकार करूँगी। ५—अहित = बुराई। लेख = गणना। परतेख = प्रत्यक्ष। ओर = सीमा, अन्त। ६—हरिन = चन्द्रमा में जो हरिन के आकार का काला धब्बा है। वह = धारण करना। कवल = कौर, ग्रास। सह = साथ, सहता है। पराभव = हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है, प्रेम में पराजय है ही नहीं—किसी विघ्नबाधा से प्रेम का नाश नहीं हो सकता।

चरन वेढ़िल फनि हित मानलि धनि
नेपुर न करए रोर।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेह क कत दुर ओर ॥८॥
ठामहि रहिअ घुमि परस चिन्हिअ भूमि
दिग मग उपजु सँदेह।
हरि हरि सिब सिब तावे जाइअ जिव
जावे न उपजु सिनेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह सुचेतनि
गमन न करह विलम्ब।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सकल कला अवलम्ब ॥१२॥

७—वेढ़लि = लपेटना, घेरना। फनि = सर्प। रोर = शब्द, झंकार। पैर में सर्प लिपट जाने पर बाला ने उसे अपना हित समझा, क्योंकि (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे। ८—सरुप = सत्य। ओर = अन्त। सुन्दरी, मैं तुमसे पूछती हूँ, सच सच बताओ, प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है? ९—दिग = दिशा। घूम घूमकर एक ही स्थान पर चली आती हूँ। स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अंधकार के कारण दीख नहीं पड़ती) दिशा और राह के विषय में सन्देह है—मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है, जिससे मैं राह भूल गई हूँ। १०—तावे = तब तक। जावे = जब तक। ११—सुचेतनि = बुद्धिमती, सुचतुरा। गमन = जाने में।

(११४)

सखि हे, आज जाएब मोहि।
घर गुरुजन डर न मानब
वचन चूकब नहि ॥ २ ॥
चानन आनि आनि अंग लेपब
भूषन कए गजमोति।
अंजन विहुन लोचन-जुगुल
धरत धवल जोति ॥ ४ ॥
धवल वसन तनु झपाएब
गमन करब मंदा।
जइओ सगर गगन उगत
सहस सहस चंदा ॥ ६ ॥
न हम काहुक डीठि निवारबि
न हम करब ओत।
अधिक चोरी पर सयँ करिअ
एहे सिनेह क सोत ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनह जुवती
साहस सकल काज।
बूझ सिवसिंघ इ रस रसमय
सोरम देवि समाज ॥१०॥

३—चानन = चंदन। आनि = लाकर। ३—विहुन = रहित। धवल—उजला। ५—मंदा = धीरे-धीरे। ६—सगर = समग्र = समूचे। गगन = आकाश। ७—निवारबि = बचा दूँगी। ओत = ओट। सोत = स्रोत।

(१६५)

प्रथम जउबन नव गरुग्र मनोभव
छोटि मधुमास रजनि।
जागे गुरुजन गेह राखए चाह नेह
संसग्र पड़ल सजनि ॥ २ ॥
नलिनी दल निर चित न रहए थिर
तत घर तत हो बहार।
चिहि मोर चड मदा उगि जनु जाए चदा
स्रुति उठि गगन निहार ॥ ४ ॥
पथहु पथिक सका पय पय धए पका
कि करति श्रो नव तरुनी।
चलए चाह धसि पुनु पड खसि खसि
जाल क छेकलि हरिनी ॥ ६ ॥
साए साए कश्रोन बेदन तसु जाने।
निकुज वनहि हरि जाइति कश्रोन परि
श्रनुदिन हन पचवाने ॥ ८ ॥
विद्यापति भन कि करल गुरुजन
नींद निरूपन लागी।
नयन नीर भरि धीर छपावए
रयनि गमावए जागी ॥ १० ॥

१-मधुमास = चैत्र। २ नलिनी दल निर = कमल के पत्ते पर के पानी के समान। बहार = बाहर। ४ स्रुति-सीकर। ५ पय-पग। पका = कीचड़। ६ जाल क छेकलि = जाल में घिरी हुई। ७ साए = साखी। ८ हन = मारना।

(११६)

अवहु राजपथ पुरजन जागि।
चाँद किरन नभमंडल लागि ॥२॥
सहए न पारए नव नव नेह।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि सदेह ॥ ४ ॥
कामिनि कएल कतहु परकार।
पुरुष क वेस कएल अभिसार ॥ ६ ॥
धम्मिल लोल झाँट कए बंध।
पहिरल वसन आन करि छन्द ॥ ८ ॥
अम्बर कुच नहि सम्बर भेल।
बाजन-यंत्र हृदय करि लेल ॥१०॥
अइसए मिलिलि धनि कुंज क माझ।
हेरि न चिन्हइ नागर राज ॥ १२ ॥
हेरइत माधव पड़लन्हि धंद।
परसइत भाँगल हृदय क दंद ॥१४॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
दूध समुद जनि राज-मरालि ॥ १६ ॥

२—सहए न पारए=सह नहीं सकती। नव=नया। ५—परकार=प्रकार, उपाय। ७-धम्मिल=केश, वेणी। लोल=चंचल। झाँट=झोंटा, खोंपा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि=दूसरी तरह से ९—अम्बर=कपड़ा। सम्बर=सँभलना। किंतु कपड़े से कसे जाने पर भी कुच सँभल न सके, छिप न सके। १०—बाजन-यन्त्र=सितार। हृदय करि

(११७)

चरन नूपुर उपर सारी।
मुखर मेखल कर निवारी ॥ २ ॥
अम्बर सामर देह झपाई।
चलहु तिमिर पथ समाई ॥ ४।
समुद — कुसुम, रभस, रसी।
अवहि उगत कुगत ससी ॥ ६ ॥
आपल चाहिअ सुमुखि तोरा।
पिसुन-लोचन भम चकोरा ॥ ८ ॥
अलक तिलक न कर राधे।
अग विलेपन करह बाधे ॥ १० ॥
कुसुमित कानन कालिन्दि तीर।
तहाँ चलि आओल गोकुल बीर ॥१२॥
तयँ अनुरागिनि ओ अनुरागी।
दूपन लागत भूपन लागी ॥ १४ ॥
भन विद्यापति सरस कवि।
नृपति-कुल-सरोरह रवि ॥१६॥

लेल = हृदय पर रख लिया। १२—धद = सदेह। १४—दद = द्वन्द, दुविधा। १६—समुद = समुद्र। राजमरालि = राजहंसिनी।

१—२ पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ा लो, और मुखरा (शब्द करने वाली) करधनी को हाथ से निवारण करो। २—अम्बर = वस्त्र। तिमिर-पथ = अन्धकार पूर्ण राह। समाई = घुमकर। ५ = समुद = समुद्र। कुसुम = फूल। रभस = भान द। रसी = रस-युक्त। ३—कुगत = जिसका

जागल घर पर निंद भेल भोर।
सेज तेजल उठि नंद किसोर ॥ २ ॥
सघन गगन हरि नखतर पाँ[illegible]
अवधि न पाओल छुटल राति ॥[illegible]
जलधर रुचिहर सामर काँति।
जुवति-मोहन वेस धरु कत भाँति ॥ ६ ॥
धनि अनुरागिनि जानि सुजान।
घोर आँधिआरे कएल पयान ॥ ८
परनारी पिरित क ऐसन रीति।
चलल निभृत पथ न मानए भीति ॥ १० ॥
कुसुमित कानन कालिन्दि तीर।
तहँ चलि आओल गोकुल बीर ॥ १२ ॥
कविसेखर पथ मीलल आई।
आएल नागर भेंटल राई ॥ १४ ॥

आगमन अशुभ हो। ससी = चन्द्रमा। ८-पिशुन = दुष्ट। भम = भ्रमण कर
रहे हैं। ६—मलक तिलक = महावर और टीका। अंग विलेपन = शरीर
। अंगराग लगाना। करह बाधे = बाधा कर दो, मत लगाओ।
१—घर पर जो जगे थे, सभी सो गये। २ — नखतर = नक्षत्र,
तारे। ४—रात कितनी बीती, इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर
= मेघ। रुचि हर = शोभा हरनेवाला। ६-जुवति मोहन = युवतियों को
मोहनेवाला। १०-निभृत = सुनसान पूर्ण, अन्धकार। १४-राई = राधा।

(११९)

तपन क ताप तपत भेल महि-तल
तातल बालू दहन समान।
चढल मनो-रथ भामिनी चलु पथ
ताप तपत नहि जान ॥ २ ॥
प्रेम क गति दुरवार।
नबिन जौबनि धनि चरन कमल जिनि
तइओ कएल अभिसार ॥ ४ ॥
कुल-गुन-गौरव सति-जस-अपजस
तृन करि न मानए राधे।
मन मधि मदन महोदधि उछलल
बूड़ल कुल मरजादे ॥ ६ ॥
कत कत बिघिन जितल अनुरागिनि
साधल मनमथ-तत।
गुरु जन नयन निवारहत सु-बदनि
पाठ करए मन मत ॥ ८ ॥
केलि कलावति कुसुम-सरसि-कुल
कौसल करल पयान।
जत छल मनोरथ पूरल मनमथ
इह कविसेखर भान ॥ १० ॥

१—तपन क = सूर्य के। ताप = गर्मी। तपत = तप्त, जलती हुई। तातल = गर्म हो गया। दहन = अग्नि। २—मनो-रथ = इच्छा-रूपी रथ। भामिनी = स्त्री। ३—दुरवार = अटल। ४—जिनि =

(१२०)

निअ मंदिर सयँ पग दुइ चारि ।
घन घन घरिस मही भर वारि ॥ २ ॥
पथ पीछर वड गरुअ नितम्ब ।
खसु कत वेरि नही अवलम्ब ॥ ४ ॥
विजुरि-छटा दरसाअए मेघ ।
उठए चाह जल धारक थेघ ॥ ६ ॥
एक गुन तिमिर लाख गुन भेल ।
उतरहु दखिन भान दुर गेल ॥ ८ ॥
ए हरि जानि करिअ मोयँ रोस ।
आजुक विलम्ब दइव दिअ दोस ॥१०॥

समान । तइओ = तो भी । ४—सति = सती स्त्रियों का । ६—मधि = मध्य, में । महोदधि—महा समुद्र । उछलल = उछलने लगा, तरंगित होने लगा । ७—मनमथ = कामदेव । तत = तन्त्र । ८—निवारइत = बचती हुई । मन्त = मन्त्र । ९—कुसुम = फूल । सरसि—सरसी, तालाब । कुल = किनारे । कौसल = छल से । १०—टल = था ।

१—निअ = अपना । सयँ = से । पग = डेग । २—घन घन = घने बादल । मही भर वारि = पृथ्वी जल से भर गया । ३—पीछर = जिसपर पैर फिसल जायँ । गरुअ = भारी । नितम्ब = चूतड़ । ४—खसु कत वेरि = कितनी बार गिर पड़ी । ६—जल धारा बाँध कर—मूसलधार—बरसना चाहता है । ७—तिमिर = अन्धकार । ८—उत्तर और दक्षिण का ज्ञान ही दूर हो गया, दिशा-ज्ञान नहीं रहा ।

(१२१)

माधव, करिअ सुमुखि समधाने ।
तुअ अभिसरि कएलि जत सुन्दरि
कामिनि करु के आने ॥ २ ॥
वरिस पयोधर धरनि वारि भरि
रयनि महा भय भीमा ।
तइओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा ॥ ४ ॥
देखि भवन-भित लिखित भुजँग-पति
तसु मन परम तरासे ।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
विहुसि आएलि तुअ पासे ॥ ६ ॥
निअ पहु परिहरि अइलि कमल-मुखि
परिहरि निअ कुल गारी ।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि वर नारी ॥ ८ ॥
ई रस-रसिक विनोद क विन्दक
कवि विद्यापति गावे ।
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे ॥ १० ॥

२—के = कौन । आने = दूसरा । पयोधर = बादल । भीमा = डरावनि । ५—भिति = दीवाल । भुजग = सर्प । ७—कर = हाथ । फनिमनि = सर्प के मणि को । ७—पहु = प्रभु, प्रीतम । गारी—

(१२२)

राहु मेघ भए गरसल सूर।
पथ परिचए दिवसहि भेल दूर ॥ २ ॥
नहि बरिसए अवसन नहि होए ॥
पुर परिजन सचर नहि कोए ॥ ४ ॥
चल चल सुन्दरि कर गए साज।
दिवस समागम सपजत आज ॥ ६ ॥
गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर ॥८॥
एहि ससार सार वधु एक।
तिला एक सगम, जाव जिव नेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति कविकंठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस-अभिसार ॥१२॥

गाली, शिकायत। १०—कखने =कब क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ परिचय=राह की पहचान। दिवसहि=दिन में ही। ३—अवसन=अवसान समाप्त। मेघ न बरसता है, न खुल जाता है। ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज=जाकर साज करो—शृंगार करो। ६—दिवस-समागम=दिन का मिलन। सपजत=सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत=मनोवाञ्छा। ९—सार=तत्त्व, सत्य। वधु=वस्तु। १०—एक क्षण के लिये रति क्रीड़ा और जीवन भर प्रेम करना। ११—कोटिहुँ=करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट=न घट सकता, न हो सकता।

(१२३)

आज पुनिम तिथि जानि मोयँ अएलिहुँ
उचित तोहर अभिसार।
देह-जोति ससि-किरन समाइति
के बिभिनावए पार ॥ २ ॥
सुन्दरि अपनहु हृदय विचारि।
आँख पसारि जगत हम देखलि
के जग तुअ सम नारि ॥ ४ ॥
तोहँ जनि तिमिर हीत कए मानह
आनन तोर तिमिरारि।
सहज विरोध दूर परिहरि धनि
चलु उठि जतए मुरारि ॥ ६ ॥
दूती वचन हीत कए मानल
चालक भेल पँचवान।
हरि-अभिसार चललि वर कामिनि
विद्यापति कबि भान ॥ ८ ॥

१—पुनिम = पूर्णिमा। अएलिहुँ = मैं आई। २—देह जोति = शरीर की कांति। ससि किरन = चन्द्रमा की किरण (में)। समाइति = घुस जायगी, मिल जायगी। के = कौन। बिभिनावए पार = विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है। ५—जनि = नहीं। तिमिर = अन्धकार। हीत = मित्र। आनन = मुख। तिमिरारि = अन्धकार का शत्रु, चन्द्र। ६—जतए = जहाँ। ७—चालक = प्रेरक। पँचवान = काम। हरि अभिसार = कृष्ण से गुप्त मिलन करने को।

(१२४)

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीपक सिखा मलिन भए गेल ॥ २ ॥
हठ तज माधव जएबा देह।
राखए चाहिअ गुपुत सनेह ॥ ४ ॥
दुरजन जाएत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान ॥ ६ ॥
भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि वेकत करए निअ चोरि ॥८॥
अपनयँ धन हे धनिक धर गोए।
परक रतन परगट कर कोए ॥ १० ॥
फाव चोरि जौं चेतन चोर।
जागि जाए पुर परिजन मोर ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति सरि कह सार।
से जीवन जे पर उपकार ॥ १४ ॥

१—अरुन-किरन = सूर्य की किरण। अम्बर = आकाश। २—सिखा = लौ, टेम। ३—तज = छोड़ो। जएबा देह = जाने दो। ४—गुपुत = गुप्त, छिपा हुआ। ६—सगर = सब। मलान = म्लान, मलिन। ७—भमर = भौंरा। रमि = रमण कर, विहार कर। अगोरि = अगोरकर रहना। ८—वेकत = व्यक्त, प्रकट। ९—१०—धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है? ११—फाव = फबना, शोभना। चेतन = चतुर। १३—सार = सत्य।

दुहु रुप-लावनि मनमथ मोहनि (१२५)
निरखि नयन भुलि जाय।
रजनि-जनित रति विशेष अलापन
अलस रहल दुहु गाय ॥ २ ॥
चाँचर कुन्तल ताहे कुसुम-दल
लोलत आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय बाढ़ए सुख
घोलत भूलत पाँति ॥ ४ ॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
बिरह-विपानल दुहु तनु जारल
लोचन लागल धन्द ॥ ६ ॥
भीतक-चीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल विदायक वेला।
प्रेम-पयोनिधि उछलि उछलि पड
चेतन अचेतन भेला ॥ ८ ॥
दुहु जन चीत-रीत हेरि सहचरि
छन छन गगनहि चाय।
रजनि पोहाओल सब जन जागल
से उर अधिक डराय ॥ १० ॥
सेखर बुझि तब करि कत अनुभव
दुहु संग भंग कराव।
निज निज मन्दिर गमन करल दुहु
गुरुजन भेद न पाव ॥ १२ ॥

मन्दिर अछलौं सहचरि मेलि।
परसंगे रजनि अधिक भइ गेलि॥ २॥
जब सखि चललहु अप्पन गेह।
तब मभु नींद भरल सब देह॥ ४॥
सूति रहल हम करि एक चीत।
दैव-विपाक भेल विपरीत॥ ६॥
न बोल सजनि सुन सपन सम्बाद।
हँसइत केहु जनि कर परिवाद॥ ८॥
विपाद पडल मभु हृदयक माँझ।
तुरित धोंचायलौं नीविक काज॥ १०॥
एक पुरुप पुनु आओल आगे।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे॥१२॥
से भय चिकुर चीर आनहि गेल।
कपाल काजर मुख सिंदुर भेल॥ १४॥
अतर कहव केह अपजस गाव।
विद्यापति कह के पतिआव॥ १६॥

—अछलौं = मैं थी। सहचरि = सखी। २—परसंगे =
में। रजनि = रात। ४—सूति रहल = सो रही। चीत
= चित्त एकाग्र करके। ६—विपाक = फल। ७—सपन
। ८—परिवाद = प्रवाद, शिकायत। १०—धोंचायलौं =
दिया। नीविक काज = नीवी का बंधन। १२—अधर
। अधरक दागे = ओष्ठ पर चिह्न बना दिया।

(१२७)

कुसुम - तोरए गेलहुँ जाहाँ
भमर - अधर खडल ताहाँ ॥ २ ॥
तेँ चलिएलहुँ जमुना तीर।
पवन हरल हृदय - चीर ॥ ४ ॥
ए सखि सरुप कहल तोहि।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि ॥ ६ ॥
हार मनोहर बेकत भेल।
उजर उरग ससअ लेल ॥ ८ ॥
तेँ धसि मजूर जोडल झाँप।
नखर गाडल हृदय काँप ॥ १० ॥
भन विद्यापति उचित भाग।
वचन-पाटव कपट लाग ॥ १२ ॥

१३—से भय = उस डर से। चिकुर = केश। चीर = साड़ी। आनहि भेल = दूसरे ही ढंग का हो गया। १४—कपाल = मस्तक। १५—मरम = हृदय की बात। १६—पतिआव = विश्वास करेगा।

१—कुसुम = फूल। गेलहुँ = मैं गई। २—भमर = भौरा। अधर = ओष्ठ। ३—तेँ = वहाँ से। ४—हृदय चीर—वक्ष स्थल की साड़ी, अंचल। ५—सरुप = सत्य। आनु = अन्य। ७—बेकत = व्यक्त, प्रकट। उजर = उज्ज्वल। उरग = सर्प। ९—झाँप जोडल = झपट पड़ा। १०—नखर गाडल = नख गड़ा गया। १२—पाटव = पटुता, चतुरता।

(१२८)

सखि हे तोहे हमर बहु सेवा।
पेसनि घानि कथहु जनि बोलबि
जाति कुल किए मोर लेवा ॥ २ ॥
गोकुल नगर कान्हु रति लम्पट
जौबन सहज हमारा।
तुहु सखि रभसि मोहे जनि बोलबि
लोक करब पतिआरा ॥ ४ ॥
केसर कुसुम हेरि हम कौतुक
भुज जुग मेटल ताहि।
दाड़िम भरम पयोधर ऊपर
पड़लहु कीर लोभाहि ॥ ६ ॥
चकित उभय भुज इति-उति पेखल
तैं बेस भए गेल आन।
इथे परिवाद कहसि मोहे वैरिनि
इह कवि सेखर भान ॥८॥

१—हे सखि, मैं तुम्हारी बहुत सेवा करूँगी। २—घानि = बोली। जाति कुल = मेरा जाति-कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि = दिल्लगी में। पतिआरा—विश्वास। ५—केसर के फूल देखकर, कौतुकवश, उसे दोनों हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगे दीख पड़ते हैं]। ६—अनार समझकर सुग्गे मेरे कुचों पर झुका गये [उनकी चोंचों के आघात से कुछ क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख रेखा समझ रही हो]। ७—उभय =

(१२६)

खरि नरि-वेग भासलि नाई।
धरए न पारथि वाल कन्हाई ॥ २ ॥
ते घसि जमुना भेलहुँ पार।
फूटल वलश्रा टूटल हार ॥ ४ ॥
: सखि ए सखि न वोल मद।
बेरह वचन वाढ़ए दद ॥ ६ ॥
कुडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइत पडलि साँझ ॥ ८ ॥
अलक तिलक तें वहि गेल।
सुध सुधाकर वदन भेल ॥
तरिनि तट न पाइश्र घाट।
तें कुच गडल कठिन काँट ॥१२॥
भन विद्यापति निश्र अपसाद।
वचन-कश्रोसल जितिश्र वाद ॥१४॥

दोनों। सुध = हाथ। तैं = इससे। वेप = रूप। आन = दूसरा।

१—खरि = तीव्र। नरि = नदी। भासलि = भस गई, व चली। नाइ = नाव, नौका। ३—घसि = तैरकर। ४—वलश्रा = चूड़ी। ५—मद = बुरी बात। ६—विरह = विरस, कठोर दद = झगड़ा। ७—खसल = गिर पड़ा। ८—जोहइत = खोजने में ९—अलक = आलता, महावर। तिलक = टीका। १०—सुध = शुद्ध, निष्कलंक। सुधाकर = चंद्रमा। ११—तरनि = नदी। घाट = राह। १२—गड़ल = गड़ गया। १३—अवसाद = पराजय

ननदी सरुप निरूपह दोसे।
बिनु बिचार बेभिचार बुझओयह
सासू करतन्हि रोसे ॥ २ ॥
कौतुक कमल नाल सयँ तोरल
करए चाहल अवतंसे।
रोष कोप सयँ मधुकर आओल
तेँहि अधर करु दसे ॥ ४ ॥
रखर-घाट बाट कँटक-तरु
देखहि न पारल आगू।
साँकरि बाट उबटि कहु चललहु
तैं कुच कटक लागू ॥ ६ ॥

१४—बचन कमोसल = वचन चातुरी। बाद = मुकदमा।
१—सरुप = स्वरूप, आकृति। निरूपह = निरूपण करती
हो। मेरी ननद, तुम आकृति देखकर मुझे दोष लगाती हो।
२—बेभिचार = व्यभिचार, पाप कर्म। बुझओयह = समझाओगी।
रोसे = क्रोध। ३—नाल सयँ = मृणाल से। अवतंसे = सिर का
आभूषण। ४—रोष = क्रोधित होकर। कोप = कमल का भीतरी भाग।
मधुकर = भौंरा। तेँहि = उसीने। दसे करु = काट लिया (जिससे
ओठ मलिन हो गया) ५—सरखर = गाखाव। बाट = राह। कटक
= काँटों के पेड़। देखहि न पारल = देख न सकी। आगू =
...। ६—साँकरि = सकीर्ण, पतली। तैं = इसमें। कुच = स्तन।

से चलि गेल ताहि लए चललिहु
तें पथ भेल अनेआई ॥ ६ ॥
सकर-बाहन खेडि खेलाइत
मेदिनि-बाहन आगे ।
जे सब अछलि सँग से सब चललि भँग
उबरि अपलहुँ अति भागे ॥ ८ ॥
जाहि दुहु खोज करइछथि सासुन्हि
से मिलु अपना सगे ।
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
गुपुत नेह रति-रगे ॥ १० ॥

६—से = वह (जल वृष्टि) चली गई तब उसे (बल)
चली । तें = इस कारण । पथ = राह । अनेआई = अन्याय । ७—स
वाहन = बैल । खेडि खेलाइति = खेल कर रहा था, आपस में
रहा था । मेदिनि वाहन = सर्प । आगे = आगे था । ८—अछलि
थी । भँग = छिटककर । उबरि अपलहुँ = उबर आई, बच आ
भागे = भाग्य से ही । ९—जिन दोनों (जल और घड़ा) की
सासुजी कर रही हैं, वे दोनों अपने साथियों से मिल गये—(वर्षा
रही थी कि घड़ा फूट गया घड़े का पानी वर्षा के पानी में मिल गय
और मिट्टी का घड़ा मिट्टी में मिल गया) । १०—जौवति = युवत
गुपुत नेह = गुप्त प्रेम । रति रगे = रति क्रीड़ा ।

When passion and philosophy meet in a sing
individual, we have a great poet —Browin

मान

(१३२)

खनहि खन महँघि भइ   किछु अरुन नयन कइ
कपट धरि मान सम्मान लेही।
कनक जयँ प्रेम कसि   पुलु पलटि बाँक हसि
आधि सयँ अधर मधु-पान देही ॥ २ ॥
अरेरे इन्दुमुखि अुद्ध न कर   पिअ हृदय खेद हर
कुसुम सर रंग ससार सारा ॥ ३ ॥
वचन वस होसि जनु   ससरि भिन्न होइत तनु।
सहज वरु छाडि देव सयन-सीमा।
प्रथमे रस भंग भेल   लोभे मुख सोभ गेल
बाँधि भुज पास पिय धरए गीमा ॥ ५ ॥
जदि नयन-कमल-वर   मुकल कल कान्ति धर
खर-नखर-घात कइ सेहे बेला।
परम पद लाभ सम   मोद चिर हृदय रम
नागरी सुरत-सुख अमिअ मेला ॥ ७ ॥
सरसकवि सुरस भन   चारु तर चतुरपन
नारि आराहिअइ पचबाना।
सफल जन सुजन गति   रानि लखिमाक पति
रूपनारायन सिवसिंघ जाना ॥ ९ ॥

[मान शिक्षा] १—महँघि = महँगा। ३—सर = शतपट्टल। कुसुम सर = कामदेव। ८—गीमा = ग्रीवा, गरदन। ९—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—मानों छिपने लगे—तो उस समय नख का विकट प्रहार करना।

(१२३)

लोचन अरुन बुझल बड भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥ २ ॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥ ४ ॥
कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग राँगि करु गोर ॥ ६ ॥
आनक भूषण तोर कलङ्क।
बड ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥ ८ ॥
चिटि-गुड चुपडलि राडक पोरि।
लओले लाथ वेकत भेल चोरि ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति वजबहु वाद।
बड अपराध मौन पए साध ॥ १२ ॥

१—२—उजागर = जागरण। निवेद = जनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रकट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायितमलस निमेषम्—गीतगोविन्द।' ३—ततहि जाह = वहीं जाओ। लाथ = बहाना। ५—६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानो अनुराग के रंग में रँग कर (काले वक्षस्थल को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक = दूसरे का। ८—परसंग = प्रसंग, संगति। ९—चिटि गुड = गुड़ चींटी। राड़ = शूद्र की एक उपजाति। पोरि = घर। १०—लाथ लओले = बहाना पर। वेकत = व्यक्त। १०—वजबहु = बोलना। बाद = व्यर्थ।

कुङ्कुम लओलह नख-खत गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥ २ ॥
तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लोचन अरुन बेक्त भेल चोरि ॥ ४ ॥
चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥ ६ ॥
जानओ प्रकृति बुझओ गुनसीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज लीला ॥ ८ ॥
वचन नुकाबह बेक्तओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय बड़ लाज ॥१०॥
अपथहु सपथ बुझाबह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥१२॥
भनइ विद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से बकोटकर तुम्हारे वक्षस्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओठ का। अएलह = आये हो। ३—छपल—छिप सका। ४—अरुन = लाल। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकावह = छिपाते हो। १०—तुम हँस कर (मेरी ओर) देखते हो, किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जाने पर भी। १२—कौन परि = किस प्रकार। खेमोम = क्षमा करूँगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = इच्छा।

(१३५)

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
बचन बोलत आध आधे ।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ॥२॥
माधव, चल चल चल तन्हि ठाम ।
जसु पद-जावक हृदयक भूषन
अबहु जपत तसु नाम ॥४॥
कत चदन कत मृगमद कुकुम
तुअ कपोल रहु लागि ।
देखि सौति-अनुरूप कएल विहि
अतए मानिए बहु भागि ॥६॥

१—मुदित = मुँदे हुए । २—रति-आलस = काम-क्रीड़ा-जनित थकावट । सामर = श्यामला । झामर = मलिन । हेरि = देखकर । साधे = हौसला ३—चल = जाओ । तन्हि ठाम = उसी जगह । ४—जसु = जिसके । पद जावक = पैर का महावर । जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय का आभूषण हुआ है, उसीका नाम तुम अब भी जप रहे हो [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस नायिका का नाम निकल गया था] । ५—कत = कितना । मृगमद = कस्तूरी । कुंकुम = केशर । कपोल = गाल । ६—अनुरूप = समान । ६—मैं तो इसीमें अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है ।

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥
पुजलौं पसुपति जामिनि जागि।
गमन विलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥
लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ॥६॥
रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥
नवकविसेखर कि कहब तोय।
सपथ करह तब परतीत होय ॥१०॥

१—अवधान = मनोयोग ध्यान देना। कहसि काहे आन = दूसरी बात क्यों कह रही हो। पसुपति = महादेव। जामिनि = रात। ४—गमन = जाने में, चलने में। तेहि लागि = इसी लिये। ५—६—उचरइत = उच्चारण करने। राग = लालिमा। कस्तूरी और केशर से शिर की पूजा की शरीर पर उन्हीं के चिह्न हैं। बार बार मंत्र उच्चारण करने के कारण ओठ की ललाई नष्ट हो गई। ७—रजनि = रात। उजागर = जागरण। घोर = भयानक (लाल)। ८—इसी लिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९—१०—विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

(१३७)

ए धनि माननि करह सञात।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजगिनि
ताक उपर धर हात ॥ २ ॥
तोहे छोडि जदि हम परसब कोय।
तुअ हार-नागिनि काटब मोय ॥४॥
हमर बचन यदि नहि परतीत।
बुझि करह साति जे होय उचीत ॥ ६ ॥
भुज-पाश बाँधि जघन-तर तारि।
पयोधर-पाथर हिय दह भारि ॥८॥
उर-कारा बाँधि राख दिन-राति।
बिद्यापति कह उचित इह साति ॥१०॥

१—धनि = बाला। करह सजात = संयत करो, क्रोध छोड़ो। २—हेम घट = सोने का घड़ा। भुजगिनि = सर्पिणी। ताक = उसके। [यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच रूपी सोने के घड़े तथा हार रूपी सर्पिणी के ऊपर हाथ रखकर मैं शपथ खाता हूँ। ३—छोड़ि = छोड़कर। परसब = स्पर्श करूँगा। कोय = किसी को। ६—साति = शास्ति, दंड। ७—भुज पाश = भुजा रूपी जंजीर। जघन तर = जाँघों के बीच में। तारि = ताड़ना करके, खूब ठोक-पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उर कारा = हृदय रूपी जेलखाने में। राख = रखो। १०—इ = यह। साति = शास्ति, दंड।

(१२८)

अरुन पुरुब दिसा बितलि सगरि निसा
गगन मगन भेला चंदा।
मूंदि गेलि कुमुदिन तइयो तोहर धनि
मूंदल मुख अरविंदा ॥२॥
चांद वदन कुवलय दुहु लोचन
अधर मधुरि निरमान।
सगर सरीर कुसुम तोंय सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ॥४॥
अस कति करह कंकन नहिं पहिरह
हार हृदय भेल भार।
गिरि सम गरुअ मान नहि मुँचसि
अपरुब तुअ बेवहार ॥६॥
अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि बिहान।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—अरुन = लाल । बितलि = बीत गई । सगरि = समग्र, समूची । मगन = मग्न डूब जाना । २—अरविंदा = कमल । ३—वदन = मुख । कुवलय = कमल । मधुरि = एक लाल फूल । ४—कुसुम = फूल । सिरिजल = बनाया । किए दहु = क्यों दिया । पखान = पत्थर । ५—अस = ऐसा । कति = क्यों । कंकन = कँगन । ६—गरुअ = भारी । मुँचसि = छोड़ती हो । ७—बिहान = प्रात काल ।

(१३६)

मदन-कुञ्ज पर वइसल नागर
वृन्दा सखि मुख चाहि।
जोड़ि जुगुल कर विनति करए कत
तुरित मिलावह राहि ॥ २ ॥
हम पर रोखि विमुख भइ सुन्दरि
जबहु चललि निज गेहा।
मदन-हुतासन मझु मन जारल
जीव न बाँधइ थेहा ॥ ४ ॥
तुअ अति चतुर सिरोमनि नागर
तोहे कि सिखाओव वानि।
तुहु विनु हमर मरम कोन जानत
कइसे मिलाएब आनि ॥ ६ ॥
चन्दन चाँद पवन भेल रिपु सम
वृन्दावन घन भेल।
कोकिल मयूर झंकार देत कत
मझु मन मनमथ सेल ॥८॥
छल छल नयन वयन भरि रोअत
चरन पकड़ि गहि जाव।
हा हा से धनि हमए न हेरथ
सिंह भूपति रस गाव ॥१०॥

१—चाहि = देखना। २—राहि = राधा। ४—मदन हुतासन = कामदेव रूपी अग्नि। जीव न बाँधइ थेहा = जीव स्थैर्य

(१४०)

माधव, इ नहि उचित विचार।
जनिक पहन धनि काम-कला सनि
से किए करु व्यभिचार ॥ २ ॥
प्रानहु ताहि अधिक कए मानय
हृदयक हार समान।
कोन परजुगति आन के ताकव
की धिक तोहर गेआन ॥ ४ ॥
कृपन पुरुष के केओ नहिं निक कह
जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहि उपभोगव
केवल परहिक आस ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
इ थिक अनुचित काज।
माँगि लायब वित से जदि हो नित
अपन करब कोन काज ॥ ८ ॥

नहीं बाँधते, भाव स्थिर नहीं होते। ८—मनमथ = कामदेव।

२—जनिक = जिसको। पहन = ऐसी। सनि = समान।
४—परजुगति = प्रयुक्ति। आन के ताकव = दूसरे को देखना। की = क्या। धिक = है। ५—कृपन = सूम। निक = नीक, अच्छा। उपहास = हँसी,। ६—अछइत = रहते। परहिक = दूसरे की। ८—यदि माँगा हुआ धन नित्य रहता—यदि मँगनी की चीज से ही काम चल जाता—तो लोग अपने धन के लिये क्यों कष्ट उठाते?

(१४७)

मानिनि आब उचित नहि मान।
एखनुक रंग एहन सन लगइछ
जागल पए पँचबान ॥ २ ॥
जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनि
एहन समय नहि आन।
एहि अवसर पिय-मिलन जेहन सुख
जकरहि होए से जान ॥ ४ ॥
रभसि-रभसि अलि बिलसि-बिलसि करि
करए मधुर मधु पान।
अपन-अपन पहु सबहु जेमाओलि
भूखल तुअ जजमान ॥ ६ ॥
त्रिबलि तरंग सितासित संगम
उरज सम्भु निरमान।
आरति पति मंगइछ परतिग्रह
करु धनि सरबस दान ॥ ८ ॥
दीपक दिप सम थिर न रहए मन
दृढ़ करु अपन गेआन।
संचित मदन वेदन अति दारुन
विद्यापति कवि भान ॥१०॥

२—इस समय का समा (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है, मानों कामदेव सोने से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि = शीतल। ४—जेहन = जैसा। जेकरहि = जिसको। ६—रभसि = उमंग में आकर।

(१४६)

मानिनि हम कहिए तुअ लागी।
नाह निकट पाइ जे जन वचए
तेकर बडहि अभागी ॥ २ ॥
दिनकर-बन्धु कमल सब जानए
जल तेहि जीवन होई।
पङ्क विहिन तनु भानु सुखावए
जल पड़ाव बरु कोई ॥ ४ ॥
नाह समीप सुखद जत वैभव
अनुकुल होएत जोई।
तेकर विरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोई ॥ ६ ॥
तुहु धनि गुनमति बूझि करह रति
परिजन पेसन भास।
सुनइत राहि हृदय भेल गदगद
अनुमति कएल प्रगास ॥ ८ ॥

ँदोवा। १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर तथा कोयल को खदेड़ दिया। १३—चिकुर=केश। मुकुर=आईना। १४—सत चूर=सौ टुकड़े। १५—गाम=समूह। सुक=सुग्गा। रोसाइ=क्रोधित होकर। फटिक=स्फटिक पत्थर। १७—रेनु=धूल।

१—तुम लागी=तुम्हारे लिये। २—नाह=पति। ३—दिनकर=सूर्य। ४—विहिन=हीन। भानु=सूर्य। पड़ाव=छिड़कना। ६—दगधए=जलाता है।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जश्रो नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥ ८ ॥
खन खन सकल कुसुम मन तोषए
निसि रहु कमलिनि संगे।
चम्पक एक जइश्रो नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ॥१०॥
पाँच पंच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे।
विद्यापति कान्हु आकुल तो बिनु
बिषाद न पावसि लाजे ॥ १२ ॥

७—स्थावर = वृक्ष आदि अचल जीव। जंगम = मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट = कीड़े। पतंगम = पतंगे आदि। ८—कागद पत्र = कागज के पन्ने। परस = स्पर्श। जश्रों = यदि। नीर = पानी। ९—खन = क्षण। कुसुम = फूल। तोषए = संतुष्ट करता है। निसि—रात। १०—चम्पक = चम्पा। जइश्रो = यदि। भृंग = भौंरे को। ११—(५ × ५ × १० × ४ × ८ × २) = १६००० सखियों के मध्य में। १२—कान्हु = श्रीकृष्ण। बिषाद = दुख। पावसि = पाती हो।

"सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति॥"

(१४८)

अखिल लोचन तम ताप विमोचन
उदयति आनन्द कन्दे।
एक नलिनि-मुख मलिन करए जनि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥ २ ॥
सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति।
गुन गन तेजि दोष एक घोषसि
अन्त अहीरनि जाति ॥ ४ ॥
सकल जीव-जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुसीते।
दीपक जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते ॥ ६ ॥

अलि = भौंरा। ६—पहु = प्रीतम। जेमाओलि = खिलाया। ७—त्रिवली की संगम में गंगा-यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच रूपी शिव की भी स्थापना है। ८—आरति = आर्त, व्याकुल। परतिग्रह = प्रतिग्रह = दान। ९—दीपक दिप = दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन = कामदेव।

१—अखिल = समूचा (संसार)। तम = अंधकार। ताप = गर्मी, ज्वाला। विमोचन = नाश करनेवाला। उदयति = उगता है। कंद = मूल, जड़। २—नलिनि = कमलिनी। इथे = इसलिये। निन्दह = निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति = बुद्धि। ४—घोषसि = बार बार कहना। ५—जीव जन = प्राणी। जीव = प्राण। समीरन = वायु। ६—परस = स्पर्श। नीन्द = निंदा करना। मारुते = पवन को।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥ ८ ॥
खन खन सकल कुसुम मन तोषए
निसि रहु कमलिनि संगे।
चम्पक एक जइओ नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ॥१०॥
पाँच पंच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे।
बिद्यापति कान्हु आकुल तो बिनु
बिषाद न पावमि लाजे ॥ १२ ॥

७—स्थावर = वृक्ष आदि अचल जीव। जंगम = मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट = कीड़े। पतंगम = पतंगे आदि। ८—कागद पत्र = कागज के पन्ने। परस = स्पर्श। जओं = यदि। नीर = पानी। ९—खन = क्षण। कुसुम = फूल। तोषए = संतुष्ट करता है। निसि—रात। १०—चम्पक = चम्पा। जइओ = यदि। भृंग = भौंरे को। ११—(५ × ५ × १० × ४ × ८ × २) = १६००० सखियों के मध्य में। १२—कान्हु = श्रीकृष्ण। बिषाद = दुख। पावमि = पाती हो।

"सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति॥"

(१४९)

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरत सब मन काम।
कंटक दरस परस भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥ २ ॥
एकहि नगर बसु माधव सजनी
पर-भामिनि बस भेल।
हम धनि पहुनि कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥ ४ ॥
अभिनव एक कमल फुल सजनी
दौना नीमक डार।
सेहो फुल ओतहि सुखायल छथि सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥ ६ ॥
विधि बस आज आएल सजनी
एत दिन ओतहि गमाय।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहिं पतिआय ॥ ८ ॥
भनई विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठ बधाव करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन = चदन। भरम = भ्रम से। सेवलि = सेवा की।
२—कंटक = काँटा। सीमर = सेमल। ३—पर-भामिनि =

(१५०)

सजनी अपुद न मोहि परबोध ।
तोड़ि जोडिअ जहाँ गाँठ पडए तहाँ
तेज तम परम विरोध ॥ २ ॥
सलिल सनेह सहज थिक सीतल
इ जानए सब कोई ।
से जदि तपत कए जतने जुडाइअ
तइओ विरत रस होई ॥ ४ ॥
गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग ।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पडए हुतास पतंग ॥ ६ ॥

दूसरे की स्त्री । ४—एहनि = ऐसी । दुर गेल = दूर हो गया । ५—एक
रपे कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया,
ह वहीं सूख गया, और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला । ७—
धि = है । मोतहि = वहीं । ८—समागम = भेंट । १०—आओत—आवेगा ।

१—अपद = अयथा, अनुचित रूप से । परबोध = समझाओ ।
३—सहज सीतल थिक = स्वभावतः ही ठंढा है । ४—तपत
कए = गर्म करके । जतने = यत्न पूर्वक । जुडाइअ = ठंढा कीजिये ।
तइओ = तोभी । विरत रस = रसहीन । ५—कुल रूपी चन्द्रमा में
नीला धब्बा पड़ जाने पर तथा कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें
स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है । ६—अनुभवि = अनुभव
करके । पुनु = पुनः । अनुभवए = अनुभव करता है । हुतास = अग्नि ।

(१५१)

कबहु रसिक सयँ दरसन होए जनु
दरसन होय जनु नेह
नेह बिछोह जनु काहुक उपजए
बिछोह धरए जनु देह ॥ २ ।
सजनी दुर करु ओ परसङ्ग ।
पहिलहि उपजइत प्रेमक अंकुर
दारुन बिधि देल भङ्ग ॥ ४ ।
दैवक दोष प्रेम जदि उपजए
रसिक सयँ जनु होय ।
कान्ह से गुपुत नेह करि अब एक
सबहु सिखाओल मोय ॥ ६ ॥
एहन ओषध सखि कहि नहि पाइअ
जनि जौवन जरि जाव ।
असमजस रस सहए न पारिअ
इह कबि सेखर गाव ॥ ८ ॥

१—सयँ = से । जनु = नहीं । २—बिछोह = जुदाई । काहुक = किसीको । ३—दुर करु = अलग करो, बंद करो । परसग = विषय, बातचीत । ४—दारुन = कठोर । भंग देल = तोड़ डाला, कुचल डाला । ५—दैवक दोष = विधि विडम्बना से । ६—कृष्ण से गुप्त प्रेम करके मैं यही एक शिक्षा लोगों को देती हूँ । ७—ऐसी दवा मैं कहीं भी नहीं पाती, जिसके खाने से ये जवानी जल जाती । ८—असमजस = दुविधा । सहए न पारिअ = सहा नहीं जाता ।

(१५२)

जनम होश्रए जनु, जों पुनि होई
जुश्रती भए जनमए जनु कोई ॥ २ ॥
होइ जुगति जनु हो रसमति।
रसश्रो बुझए जनु हो कुनमति ॥ ४ ॥
ई धन माँगश्रों बिहि एक पए तोहि।
थिरता दिहह श्रवसानहु मोहि ॥ ६ ॥
मिलि सामी नागर रसधार।
परवस जनु होए हमर पिश्रार ॥ ८ ॥
होए परवस कुछ बुझए विचारि।
पाए विचार हार कश्रोन नारि ॥१०॥
भनइ विद्यापति श्रछ परकार।
दंद समुद होश्र जीव दए पार ॥१२॥

१—जों=यदि। जनु=नहीं। २—जुवती=यौवना स्त्री। ३, ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो रसिका न हो, और यदि रसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो। ५—ई=यह। धन=(यहाँ) वरदान। बिहि=ब्रह्मा। एक पए=एक ही। ६—थिरता=स्थिरता। दिहह=देना। अवस नहु=अन्तिम अवस्थाओं में भी। ७—सामी=स्वामी, पति। नागर=चतुर। रसधार=रसिक। ८—परवस=दूसरे के वश। ९-१०—यदि परवश भी हो जाय, तो कुछ समझ बूझ रक्खे, क्योंकि समझ-बूझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है। ११—अछ=है। परकार=उपाय। दंद=कलह। समुद=समुद्र। प्राण देकर कलह रूपी समुद्र से पार हो जाओ।

(१५३)

चरन नखर-मनि-रंजन छांद ।
धरनि लोटायल गोकुलचाद ॥ २ ॥
ढरकि ढरकि परु लोचन नोर ।
कतरुप मिनति कएल पहु मोर ॥ ४ ॥
लागल कुदिन कएल हम मान ।
अवहु न निकसए कठिन परान ॥ ६ ॥
रोस तिमिर श्रत बेरि किए जान ।
रतनक मैं गेल गेरिक भान ॥८॥
नारि जनम हम न कएल भागि ।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥१०॥
विद्यापति कह सुनु धनि राइ ।
रोअसि काहे,कह भल समुभाइ ॥१२॥

१-२—मेरे चरण के नख रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुलचन्द (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया । ३—नोर =आँसू । ४—कतरुप = कितने प्रकार से । मिनति = विनती । पहु = प्रीतम । ६-निकसए = निकलता है । ७-८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई रत्न को मैंने गेरू मिट्टी समझा । ९—भागि = भाग्य । १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी । ११—राइ = राधा । १२—रोअसि = रोती है । काहे = किस लिये । भल समुझाई = अच्छी तरह समझाकर ।

---

(१५४)

धनि भलि मालिनि सखि गन माँझ।
अनुनय करइत उपजए लाज ॥ २ ॥
पिरितक आरति निरति न सतई।
इंगित भगिए दुहु सब कहई ॥ ४ ॥
राहि सुचेतनि कान्हु सयान।
मनहि समाधल मन अभिमान ॥ ६ ॥
अधर मुरलि जौं धएल मुरारि।
फोइ कबरि धरि बाँधि समारि ॥ ८ ॥
जौं निज पुर-पथ धएल मुरारि।
सखि लखि अनतए चलु वर नारि ॥१०॥
हरि जब छाया कर धनि पाय।
धनि सम्भ्रम बइसलि कर लाय ॥१२॥
कह कवि-सेखर बुझय सयान।
इंगित रस पसारल पचवान ॥१४॥

१—धनि = बाला। ३-आरति = आतुरता शीघ्रता। प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं सहती। ४—इंगित भगिए = इशारे से। ५—राहि = राधा। सुचेतनि = सुचतुरा। ६—समाधल = समाधान किया। ८-फोई = खुले हुए। कबरि = केश। धनि = बाला। समारि = सँभालकर। ९—पुर पथ = गाँव का रास्ता। १०—अनतए = अन्यत्र। सखियों की ओर देखकर वह चतुर स्त्री दूसरी ओर चली। ११—जब श्रीकृष्ण (रास्ते में) राधा को पाकर उसपर छाया की तो राधा झटपट उनका हाथ पकड़ बैठ गई।

(१५५)

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधव रतनहि मंदिर
निवसय सयनक सुख ।
रस-रस दारुन दंद उपजल
कान्ह चलल तब रूस ॥ २ ॥
नागर-अंचल कर धरि नागरि
हसि मिनती करु आधा ।
नागर-हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥ ४ ॥
देख सखि झूठक मान ।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तब काहे रोखल कान ॥ ६ ॥
रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मधथ पचबान ।
अवसर जानि मनावथि राधा
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—रतनहि = रत्न का बना । निवसय = निवास करते हैं । सयनक सुख = शय्या के सुख में—मिलनानन्द में । २—रस रस = धीरे धीरे । दारुन = कठोर । दंद = कलह । रूस = रूठकर । ३—अंचल = चादर की खूँट । कर = हाथ । ४—पाँचसर = कामदेव । हनलक = मारा । उरज = कुच । दरसि = देखकर । मन-बाँधा = मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा । ६—रोखल = क्रुद्ध

(१५६)

पत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे॥२॥
एकहि वचन बीच भेल रे।
हँसि पहु उतरो न देल रे॥४॥
एक हि पलँग पर कान रे।
मोर लेख दूर देस भान रे॥६॥
जाहि वन केओ नहि डोल रे।
ताहि वन पिया हँसि बोल रे॥८॥
धरब योगिनिया के भेस रे।
करब मैं पहुक उदेस रे॥१०॥
भनइ विद्यापति मान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे॥१२॥

हुआ। ७—समापि = समाप्त कर। रहस = पसारल = काम क्रीड़ा में
लगा। भषप = मध्यस्थ, पञ्च। ८—सब समय जानकर राधा मानवती
बन गई। मान = कहते हैं।
१—एत = इतने। छलि था। नव = नवीन। २—मीन =
मछली। जेहन = जैसा। ३—बीच भेल = अंतर पड़ गया। ४—
पहु = प्रीतम। उतरो = उत्तर भी। ५—कान = कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर
लेख = मेरे लिये। भान = मालूम होता है। ७—केओ = कोई।
डोल = आता जाता है। ९—धरब = धरूँगी। जोगिनिया = योगिनी।
१०—पहुक = प्रीतम का। उदेश = तलाश। ११—निदान = अंत।

(१५७)

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त ।
पुन कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥ २ ॥
सबतहु सुनिये अइसन वेवहार ।
पुनु टूटए पुनु गाँथिए हार ॥ ४ ॥
ए कन्हु कन्हु तोहहि सयान ।
बिसरिए कोप करए समधान ॥ ६ ॥
प्रेमक अंकुर तोहे जल देल ।
दिन दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥ ८ ॥
तुअ गुन न गुनल सउतिन आछ ।
रोपि न काटिए बिषहुक गाछ ॥१०॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल ।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
जगत बिदित भेल तोह हम नेह ।
एक परान कएल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास ।
बडक बचन करिए बिसवास ॥१६॥

१-२—जहाँ प्रेम रस है, वहीं दौरात्म्य-प्रेम कलह भी है। अत गुणवान् एक बार टूटने पर पुन प्रीति करते हैं। ३—सबतहु = सर्वत्र ही। ६-समधान = समाधान। ७—तोहे = तुम ने। ९—तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन कर लाये। १०—बिषहुक गाछ = विष का भी वृक्ष। ११—प्राणक ओल = प्राणों की ओर अन्तरतल में। १२—दुर = दूर, भिन्न। १३—तोह हम = तुम्हारा और मेरा।

(१५८)

की हम साँझक एकसरि तारा
भादव चौठिक ससी।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हँसी ॥ २ ॥
साए साए कहह कहह कन्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे॥
न मोयँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ
वचन न बोलल मदा।
सामि समाज प्रेम अनुरञ्जिए
कुमुदिनि सन्निधि चदा ॥ ५ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
मेदिनि मदन समाने।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देवि रमाने ॥ ७ ॥

१—२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँ (जिसे लोग देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है!) ३—साए = सखि। कहह = कहो। कन्हु = श्रीकृष्ण। ४—अनुगति = पीछे जाना—आज्ञा मानना। सामि = स्वामी, पति। अनुरञ्जिए = अनुरंजन किया, निभाया। सन्निधि = निकट। ६—मेदिनि मदन = पृथ्वी में कामदेव स्वरूप।

(१५६)

करतल कमल नयन ढर नीर।
न चेतए सभरन कुतल चीर॥२॥
तुअ पथ हेरि-हेरि चित नहि थीर।
सुमिरि पुरुब नेहा दगध सरीर॥४॥
कत परि माधव साधब मान।
विरही जुबति माँग दरसन दान॥६॥
जल-मध कमल गगन-मध सूर।
आँतर चान कुमुद कत दूर॥८॥
गगन गरज मेघ सिखर मयूर।
कत जन जानसि नेह कत दूर॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित मान।
राधा वचन लजाएल कान॥२१॥

१—करतल = हथेली। कमल = (मुख)। नीर = आँसू। २—चेतय = सँभालती है। सभरन = आभरण, गहने। कुन्तल = केश। चीर = वस्त्र। ३—तुअ पथ = तेरी राह। हेरि-हेरि = देख देख कर। थीर = स्थिर। ४—पुरुब = पहला। दगध = जलता है। ५—कत परि = कब तक। साधब मान = मान किये रहोगे। ७—मध = मध्य। सूर = सूर्य। ८—आँतर = अन्तर, बीच। चान = चन्द्रमा। कुमुद = कोईं। कत = कितना। ०—गरज = गरजता है। सिखर = पहाड़ की चोटी। १०—जन — आदमी। जानसि = जानते हैं। ११-१२—यह विपरीत मान कैसा? [मान स्त्रियाँ करती हैं, पुरुष नहीं] राधा का यह वचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

(१६०)

बड़ई चतुर मोर कान।
साधन बिनहि भाँगल मकु मान ॥ २ ॥
जोगी वेस धरि आओल आज।
के इह समुझब अपरुब काज ॥ ४ ॥
सास बचन हम सीख लइ गेल।
मकु मुख हेरइत गदगद भेल ॥ ६ ॥
कह तब—'मान-रतन दह मोय।'
समझल तब हम सुकपट सोय ॥ ८ ॥
जें किछु कहल तब कहइत लाज।
कोई न जानल नागर-राज ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि राई।
किए तुहु समुझबि से चतुराई ॥१२॥

२—भाँगल = तोड़ा। मकु = मेरा। ३—आओल = आया। ४—के = कौन। अपरुब = अपूर्व। ५—सास बचन = सास के कहने से। लइ गेल = ले गई। ६—हेरइत = देखते। ७—तब कहा—'मुझे मान रूपी रतन दो।' ८—सोय = वह। १०—जानल = जाना। नागर राज = चतुरों का बादशाह। ११—राई = राधा। १२—किए = कैसे।

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
मनो न भिद्यते यस्य स योगी ह्यथवा पशुः ॥"

(१६१)

जटिला सास फुकरि तहि बोलल
वहुरि वेरि काहे ठाढ़ि।
ललिता कहल अमंगल सूनल
सति पतिभय अवगाढ़ि ॥ २ ॥
सुनि कह जटिला घटल की अकुसल
घर सयँ वाहर होय।
वहुरिक पानि धरि हेरह जोगी
किये अकुसल कह मोहि ॥४॥
जोगेश्वर फेरि वहुरिक पानि धरि
कुसल करब वनदेव।
इहे एक आक वक विसकओ
वन मधि पसुपति सेव ॥ ६ ॥

१—फुकरि = चिल्ला कर। बहुरि = बहुरिया, पतोहू। बेरि = विलम्ब। २—अवगाढ़ि = निश्चय। जटिला सास चिल्लाकर बोली बहुरिया, इतनी देर से वहाँ क्यों खड़ी हो? ललिता ने कहा—कुछ अमंगल सुना जा रहा है। सती को पतिभय निश्चित है। ३—घटल की अकुसल = कौन-सा अमंगल घटा है। ४—वहुरिक पानि = बहुरिया के हाथ। हेरह = देखो। ५-६—'क = रेखा। बक = टेढ़ा। बिसकओ = शंकायुक्त। मधि = में। तब योगेश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर कहा—वन देवता कुशल करें, यही हाथ की एक रेखा कुछ टेढ़ी है, जिससे अकुशल की आशंका है। इसके निवारण के लिये वन में पशुपति की सेवा करनी होगी।

पुजतक तन-मंन बहु आउए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओव
तुहु बीज कर इह दान ॥८॥
एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन मेल एक ठाम।
मनमथ मंत्र पढ़ाओल दुहु जन
पूरल दुहु मन काम ॥१०॥
पुनु दुहु जन मंदिर सयँ निकसल
जटिला सयँ कह भाखी।
जब इह गौरि अराधन जाओब
विधवा जन घर राखो ॥१२॥
एक कहि सबहु चललि निज मंदिर
जोगी चरन प्रनाम।
विद्यापति कह नटवर सेखर
साधि चलल मन काम ॥१४॥

---

७ ८—पूजा के बहुत-से मन्त्र-तन्त्र हैं हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा—तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा—तुम इसे बीजमन्त्र दो—झाड़ फूँक कर दो। ९—पइसल = प्रवेश किया। ११—सयँ = से। १२—जब यह गौरी की आराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख लेना—विधवा इसके साथ न जाय। [बेचारी सास विधवा थी, अत बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा होगी] १४—मनकाम = मन कामना, इच्छा।

(१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरहि ऐसे पुकारि।
अरुन बसन पेन्हि जटिल वेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ॥ २ ॥
सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर बधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मदिर लइ गेल ॥ ४ ॥
देवदेयासिनि कान।
जटिला बचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ बयान ॥ ६ ॥
कइ तव अतनु देव इथे पाओल
हृदि-मधि पइसल कान्ह।

१—देवदेयासिनि = वह स्त्री जो झाड फूँक करती है। आओल = आई। नगरहि = नगर में। २ अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिल = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकित = आश्चर्यित। ४—बधुक = वधू को, पतोहू को। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही तरह की। लइ गेल = (श्री कृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि = चन्द्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट ही। एक-दीठि = एकटक। बयान = मुख। ७—अतनु देव = कामदेव। इथे = इसे। हृदि मधि = हृदय में। पइसल = प्रवेश किया।

निरजन सोइ मन्त्र जर झाडिए
तब इह होएब भाल ॥ ८ ॥
एत सुनि जटिला घर दोइ लेअल
निरजन दुहु एक ठाम ।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ॥१०॥
बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब से हो देवा ।
देवदेयासिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझए केवा ॥१२॥
जटिला बहुत भकति करि हरखित
कतक भीख आनि देल ।
कँह कवि सेखर भीख लिए तब
से हो देयासिनी गेल ॥१४॥

८—निरजन = एकान्त में । झाडिये = झाड़ फूँक करूँ । इह = वह । भाल = अच्छी । ९—एत = ऐसा । जटिला = सास । घर दोइ लेअल = दोनों को घर में ले आई । ठाम = जगह । १०—निकसल = निकल गई । बइसल = बैठी । मनकाम = मन कामना, इच्छा । ११—भागल = भाग गया । से हो = वह । १२—केवा = किसने अर्थात् किसीने नहीं । १३—भकति = भक्ति । कतक = कितना (बहुत) । आनि देल = ला दिया । १४—गेल = गई ।

"कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता है।"

(१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरहि ऐसे पुकारि।
अरुन बसन पेन्हि जटिल वेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ॥ २ ॥
सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर बधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मदिर लइ गेल ॥ ४ ॥
देवदेयासिनि कान।
जटिला वचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ बयान ॥ ६ ॥
कह तब अतनु देव इथे पाओल
हृदि-मधि पइसल काल।

१—देवदेयासिनि = वह स्त्री जो झाड़ फूँक करती है। आओल = आई। नगरहि = नगर में। २ अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिल = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकित = आश्चर्यित। ४—बधुक = बधू की, पतोहू की। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही तरह की। लइ गेल = (श्री कृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि = चन्द्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट ही। एक-दीठि = एकटक। बयान = मुख। ७—अतनु देव = कामदेव। इथे = इसे। हृदि मधि = हृदय में। पइसल = प्रवेश किया।

निरजन सोइ मंत्र जप झाड़िए
तय इह होएव भाल ॥ ८ ॥
एत सुनि जटिला घर दोहँ लेअल
निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ॥१०॥
बहु रतन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब से हो देरा।
देयदेयासिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझए केरा ॥१२॥
जटिला बहुत भकति करि हरखित
कतक भील आनि देल।
बहु करि सेखर भील लिए तब
से हो देयासिनी गेल ॥१४॥

८—निरजन = एकान्त में । झाड़िये = झाड़ फूँक करें । भइ = भई । भाल = अच्छी । ६—एत = ऐसा । जटिला = सास । घर दोहे लेअल = दोनों को घर में ले आई । ठाम = जगह । १०—निकसल = निकल गई । बइसल = बैठी । मनकाम = मन'कामना, इच्छा । ११—भागल = भाग गया । से हो = वह । १२—केरा = किसने अर्थात् किसी ने नहीं । १३—भकति = भक्ति । कतक = कितना (बहुत) । आनि देल = ला दिया । १४—गेल = गई ।

"कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता है।"

(१६३)

वर नागर साजइ नागरि वेसा ।
मुकुट उतारि सीमत सँवारल
बेनी बिरचित केसा ॥ २ ॥
चदन धोइ सिंदुर भाल रजल
लोचन अजन अका ।
कुण्डल खोलि कर्नफूल पहिरल
भरि तनु केसर पका ॥ ४ ॥
वेसर खचित सुतेसरि पहिरल
चूरि कनक कर कजे ।
चरन-कमल पास जावक रंजन
तापर मजिर गंजे ॥ ६ ॥
कंचुकि माँझ कदम्ब-कुसुम भरि
आरम्भन कुच आभा ।
अरुनाम्बर वर साडी पहिरल
चक्ष बिलोकन सोभा ॥ ८ ॥

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे है। २—सीमत = माँग। बिरचित = बनाया। ३—रजल = अनुरजित करते हैं, लगाते हैं। अका = रेखा। ४—केसर पका = केशर का लेप। ५—चुरि कनक कर कजे = कमल रूपी हाथ में सोने की चूड़ी। ६—जावक = महावर। गजे = गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर आभायुक्त कुच बनाये। ८—अरुनाम्बर = लाल कपड़ा।

धरि परियादिनि स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने।
पहिलहि वाम चरन तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन भाने ॥१०॥
ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठारि।
कर धरि यत्र तंत्र सँवारत
को इह लखइ न पारि ॥१२॥
राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भइ गेल साधा।
ए नव जौवनि नविन विदेसिनि
आओ पुकारइ राधा ॥१४॥
सुनइत स्याम हरखि चित आओल
उठि धनि आदर देल।
बाँह पकडि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ॥१६॥

—परिआदिनि = वीणा। पयान = जाना। १०—पहले बायाँ
र बढ़ाया, क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है। ११—एकलि =
केली। १२—कर = हाथ। यत्र = वीणा। तंत्र = तार। को इह =
ोई भी। लखइ न पारि = देख नहीं सकती। १३—राइक =
धा के। साधा = इच्छा। १५—धनि = बाला। १६—बाँह =
प। कत कत = = कितना।

× × ×

जबहि बजाओल बीन सुमाधुरि
रीझि देहल मनि माल।
अइसे बजावए हमर जतरिया
मोहन जन्न रसाल ॥२०॥
नाम गाम कह कुल अवलम्बन
व्रज आगम किए काजा।
सुखमइ नाम, मथुरापुर, जदुकुल
गुनीजन पीडइ राजा ॥२२॥
धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
माँगह मानस जोय।
मनोरथ कर्म जाँचलि जदि सुन्दरि
मान रतन देह मोय ॥२४॥
हँसि मुख मोडि पीठि देइ बइसल
कान्ह कपल धनि कोर।
टूटल मान बढल कत कौतुक
भूपति के करु ओर ॥२६॥

१०—देहल = दिया। २०—बजावए = बजाता है। जतरिया = वीणा बजानेवाला। यँत्र = वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयी है, गाँव मथुरा, कुल यदुवश, वहाँ के राजा गुणियों को पीड़ा देते हैं, इसीलिये भाई हूँ। २३—मानस = हृदय। २४—मान रतन = मान रूपी रत्न। देह = दो। २५—कोर = गोद। २६—भूपति = शिवसिंह।

(१६४)

आजुक लाज तोहे कि कहब माई।
जल देइ धोइ जदि तबहु न जाई ॥ २ ॥
नहाइ उठल हम कालिंदी तीर।
अगहि लागल पातल चीर ॥ ४ ॥
तेँ वेकत भेल सकल सरीर।
तहि उपनीत समुख जदुबीर ॥ ६ ॥
विपुल नितम्ब अति वेकत भेल।
पालटि तापर कुतल देल ॥ ८ ॥
उरज उपर जब देहल दीठ।
उर मोरि बैसल हरि करि पीठ ॥१०॥
हँसि मुख मोड़ए ढीठ कन्हाई।
तनु तनु झाँपइते झाँपल न जाई ॥१२॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
पुनु काहे पलटि न पेसलि पानि ॥१४॥

१—आजुक = आज का। माई = मरी दैया। २—जल
देइ = जल से। ३—नहाइ = स्नान कर। ४—पतली साड़ी शरीर से
सट गई। ५—तँ = इससे। वेकत = व्यक्त, प्रकट। ६—तहि =
ही। उपनीत = बैठा हुआ। जदुबीर—कृष्ण। ७-८ पालटि = उलट
। तापर = उसपर। कुतल = केश। ९—देहल दीठ = (श्रीकृष्ण
) दृष्टि डाली। १०—मोरि = मुड़कर। बइसल = मैं बैठ गई।
पीठ करि = कृष्ण की ओर पीठ करके। १२—तनु तनु = अग
। १४—पुन लौटकर पानी में क्यों न पैठ गई ?

(१६७)

हरि धरि हार चऔंकि पए राधा ।
आध माधव कर गिम रहु आधा ॥ २ ॥
कपट कोप धनि दिठि धए फेरी ।
हरि हँसि रहल बदन-विधु हेरी ॥ ४ ॥
मधुरिम हास गुपुत नहि भेला ।
तखने सुमुखि मुख चुम्बन देला ॥ ६ ॥
कर धए कुच, आकुल भेलि नारी ।
निरखि अधर मधु पिबए मुरारी ॥ ८ ॥
चिकुर-चमर भरु कुसुमक धारा ।
पिथि कहु तम जनि बम नव तारा ॥१०॥
बिद्यापति कह सुन्दरि बानी ।
हरि हँसि मिललि राधिका रानी ॥१२॥

का । १३—फुगइत = खोलते । पहु = प्रीतम । भोर = बेसुध । १५—मान = कहते हैं ।

१—२—राधिका सोई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया । राधिका चौंक पड़ी । हार टूट गया । आधा हार कृष्ण के हाथ में रहा और आधा राधिका के गले में । ३—कपट कोप = झूठमूठ का क्रोध । दिठि धए फेरी = आँखें फेर लीं । ४—बदन विधु = मुखचन्द्र । हेरी = देखना । ५—६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी, उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया । ८—अधर = नीचे का ओठ । ९—चिकुर = केश । १०—मानों अंधकार तारे को निगलकर पुन उसे उगल रहा हो ।

सासु सुतल छलि कोर अगोर।
तहि अति ढीठ पीठ रहु चोर॥ २॥
कत कर आखर कहब बुझाई।
आकुल चातुरि कहल कि जाई॥ ४॥
नहि कर आरति ए अबुझ नाह।
अब नहि शोपत वचन निरवाह॥ ६॥
पीठ आलिंगन कत सुख पाब।
पानिक पिआस दूध किए जाए॥ ८॥
कत मुख मोरि अधर, रस लेल।
कत निसबद कए कुच कर देल॥१०॥
समुख न जाए सघन निसोआस।
किए कारन भेल दसन विकास॥१२॥
जागल सास चलल तब कान।
न पूरल आस विद्यापति भान॥१४॥

१—सुतल छलि=सोई थी। कोर अगार=अपनी गोद में लेकर। २—तहि=वहाँ भी। ३—शब्दों में इसे कहाँ तक समझा कर कहूँ। ४—कहल कि जाई=क्या कही जाती है? ५—आरति=आतुरता, शीघ्रता। नाह=प्रीतम। ७—८—मेरी पीठ के आलिंगन से तुम्हें क्या सुख मिलेगा—पानी की प्यास कहीं दूध से जाती है। ९—मोरि=मोड़कर। १०—निसबद कए=निःशब्द कर, चुपचाप। ११—निसोआस=निश्वास, साँस। ऊँची साँस खींचने नहीं छोड़ता कि कहीं उस साँस के स्पर्श से मेरी सास न

(१६६)

कि कहब हे सखि आजुक रंग।
सपन हि सूतल कुपुरुख संग ॥ २ ॥
बड सुपुरुख चलि आओल धाई।
सूति रहल मुख आँचर झँपाई ॥ ४ ॥
काँचलि खोलि आलिंगन देल।
मोहे जगाए आपु निंद गेल ॥ ६ ॥
हे विहि हे विहि बड़ दुख देल।
से दुख रे सखि अबहु न गेल ॥ ८ ॥
भनए विद्यापति इह रस धंद।
भेक कि जान कुसुम-मकरंद ॥१०॥

जग जाय। १२—न मालूम क्यों, उसी समय दाँत चमक उठे। १३—कान = कृष्ण। १४—न पूरल आस = आशा नहीं पूरी हुई।

१—रंग = रस-वार्त्ता। २—आज मैं स्वप्न में—भ्रम में आकर—कुपुरुष के साथ सोई। ३—चलि—समझकर। आओल धाई = दौड़कर आई। आँचर झँपाई = अंचल से ढँककर। ५—काँचलि = चोली। आलिंगन देल = छाती से लगाया। ६—मुझे जगाकर पुन आप सो रहा। ७—विहि = ब्रह्मा। ९—रस धंद = रस की विचित्रता। १०—भेक = मेढ़क, बेंग। कि = क्या। कुसुम-मकरंद = फूल का पराग।

"भ्रमरहिता सा कचवरलग्नां कुचवच्च सरसहिता।
ललदधरपीयूषाधरवरकविता महात्मना जीयाद् ॥"

(१७०)

आकुल चिकुर बेढ़लि मुख सोभ।
राहु कपल ससि-मडल लोभ ॥ २ ॥
बड अपरुब दुइ चेतन मेलि।
बिपरित रति कामिनि कर केलि ॥ ४ ॥
कुच विपरीत विलम्बित हार।
कनक कलस वम दूधक धार ॥ ६ ॥
पिय मुख सुमुखि चूम तजि ओज।
चाँद अधोमुख पिबए सरोज ॥ ८ ॥
किंकिनि रटत नितम्बिनि छाज।
मदन-महारथ बाजन बाज ॥१०॥
फूजल चिकुर माल धरु रग।
जनि जमुना मिलु गग तरग ॥१२॥
वदन सोहाओन स्रम-जल-विन्दु।
मदन मोति लए पूजल इन्दु ॥१४॥
भनइ विद्यापति रसमय बानी।
नागरि रम पिय अभिमत जानी ॥१६॥

१—आकुल=व्यग्र, चचल, छिटके हुए। चिकुर=केश। बेढ़लि=घेर लिया। ३—दुइ चेतन=दो चतुर (राधा-कृष्ण)। ५—बिलम्बित=लटका हुआ। ६—वम=वमन करता है, उगलता है। ७—ओज=(यहाँ) लाज। ९—रटत=बजती हुई। नितम्बिनि=स्त्री। छाज=शोभती है। ११—फूजल=छुटे हुए। १६—रम=रमती है। अभिमत=इच्छा।

(१७१)

विगलित चिकुर मिलित मुखमडल
चाँद वेढ़ल घनमाला।
मनिमय कुण्डल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक वहि गेला ॥ २ ॥
सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल दाता।
रति-विपरीत समर जदि राखबि
कि करब हरि-हर-धाता ॥ ४ ॥
किंकिनि किनिकिनि ककन कनकन
घनघन नूपुर वाजे।
रति-रन मदन पराभव मानल
जय-जय डिमडिम बाजे ॥ ६ ॥
तिल एक जघन सघन रव करइत
होअल सैनक भग।
विद्यापति कवि इ रस गावए
जामुन मिलली गग ॥ ८ ॥

१—विगलित = बिखरे हुए। घनमाला = मेघसमूह। २—स्रवन = कान। दुलित = डोलता हुआ। ४—समर = युद्ध। राखबि = रखा करोगी। धाता = ब्रह्मा। ६—आज रति युद्ध में कामदेव हार गया है, उसीकी जय भेरी बज रही है। ७—तिल एक = एक क्षण के लिये। सघन जघन = पुष्ट जाँघ। रव = शब्द। होअल = हो गया। ८—जामुन = यमुना।

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर।
सपन कि परतेख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥ २ ॥
तडित लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पडु तारा ॥ ४ ॥
अम्बर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले।
खरतर वेग समीरन सचरु
चचरिगन करु रोले ॥ ६ ॥
प्रलय-पयोधि-जले तन झाँपल
इ नहि जुग अवसान।
के विपरीत कथा पतिआयत
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—किछु नहि फूर = कहने की स्फुर्ति नहीं होती। २—पर-तेख = प्रत्यक्ष। किए = क्या। नियरे = निकट। ३—तडित लता = बिजुली (राधा)। तल = नीचे। जलद = मेघ (कृष्ण)। आँतर = बीच में। सुरसरि धारा = गंगा (हार)। ४—तरल तिमिर = चंचल अंधकार (केश)। ससि = चन्द्रमा (मुख)। सूर = सूर्य। (सिंदूर बिंदु)। खसि पडु = गिर पड़े। तारा (माथे पर के फूल)। ५—अम्बर = (१) आकाश (

(१७३)

दुहुक सजुत चिकुर फूजल।
दुहुक दुहु बलाबल बूझल ॥ २ ॥
दुहुक अधर दसन लागल।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥ ४ ॥
दुअओ अधर करए पान।
दुहुक कठ आलिंगन दान ॥ ६ ॥
दुअओ केलि सयँ सयँ भेलि।
सुरत सुखे विभावरि गेलि ॥ ८ ॥
दुअओ सअन चेल न चीर।
दुअओ पियासल पीवए नीर ॥१०॥
भन विद्यापति ससय गेल।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

घराधर = धराधर = (१) बादल (२) कुच। उलटल = उलट पड़ा। धरनी = (१) पृथ्वी (२) नितम्ब। ६—खरतर = तीव्र। समीरन = (१) हवा (२) निश्वास। चंचरिगन = (१) भ्रमर (२) किंकिणी आदि। रोले = शोर। ७—प्राय-पयोधि = प्रेम का समुद्र। जुग अवसान = युग का अंत (विपरीत-रति का वर्णन है)

१—सजुत = साथ ही साथ। चिकुर = केश। फूजल = खुल गया। २—बलाबल = ताकत और कमजोरी। ३—अधर = नीचे का ओठ। दसन = दाँत। ७—केलि = कामक्रीड़ा। सयँ सयँ = साथ ही साथ। ८—विभावरि = रात। ९—दोनों ही शय्या पर अपने-अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते। १०—पियासल = प्यासा।

माघ मास सिरि पंचमी गँजाइलि
नवम मास पचम हरुआई।
अति घन पीड़ा दुख बड़ पाओल
बनसपति भेलि धाई हे॥ २॥
सुभ खन बेरा सुकुल पक्ख हे
दिनकर उदित-समाई।
सोरह सम्पुन बतिस लखन सह
जनम लेल ऋतुराई हे॥ ४॥
नाचए जुवतिजना हरखित मन
जनमल बाल मधाई हे।
मधुर महारस मङ्गल गावए
मानिनि मान उड़ाई हे॥ ६॥

१—सिरिपंचमी = माघ शुक्ल पंचमी। गँजाइलि = पूर्णगर्भा हुई। नवम मास = बैसाख में बरस का अंत होता है, जेठ से माघ तक नौ महीने हुए। पचम हरुआइ = पाँचवाँ दिन होने पर। (वैद्यक के अनुसार नौ महीने पाँच दिन पर पुष्ट बालक पैदा होता है)। २—घन = अधिक। ३—खन = क्षण। बेरा = बेला, समय। सुकुल पक्ख = शुक्लपक्ष। दिनकर = सूर्य। उदित समाई = उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन = सोलह अंगों से सम्पूर्ण। बतिस लखन = बत्तिस लक्षण। ऋतुराइ = वसन्त। ५—जनमल = जन्म लिया। मधाई = माधव, वसंत। ६—उड़ाई = उड़ा ले गया, नष्ट किया।

वह मलयानिल ओत उचित हे
नव घन भओ उजियारा।
माधवि फूल भेल मुकुता तुल
ते देल वृन्दनबारा ॥ ८ ॥
पीअरि पाँडरि महुअरि गावए
काहरकार धतूरा।
नागेसर—फलि सख धूनि पूर
तकर ताल समतूरा ॥ १० ॥
मधु लए मधुकर बालक दएहलु
कमल-पंखरी-लाई।
पओनार तोरि सूत बाँधल कटि
केसर कएलि बधनाई ॥ १२ ॥
नव नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदम्बक माला।
वैसलि भमरी हुरउद गावए
चक्का चन्द निहारा ॥ १४ ॥

७—मलय पवन बह रहा है, उससे ओट करना उचित है (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है) अतः नवीन मेघ छा गये। ८—मुकुता तुल = मुक्ता के समान। पीअरि-पाँडरि = फूल विशेष। महुअरि = गीत-विशेष। काहरकार = तुरही। तकर = उसका। समतूरा = समान। ११ = (जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दएहलु = ला दिया। १२—पओनार = पद्मनाल। कटि = कमर में। (लड़के की कमर में सूत बाँधा जाता है)। बधनाई =

सोना पलास जन्मपत्र

कनअ केसुअ सुति पत्र लिखिए हलु
रासि नछत कए लोला।
कोकिल गनित-गुनित भल जानए
रितु बसंत नाम थोला ॥ १६ ॥

\+ + + + +

बाल बसंत तरुन भए धाओल
बढ़ए सकल संसारा ॥ १८ ॥
दखिन पवन घन अंग उगारए
किसलय कुसुम-परागे।
सुललित हार मंजरि घन कज्जल
अखितौं अंजन लागे ॥ २० ॥
नव बसंत रितु अनुसर जौवति
बिद्यापति कबि गावे।
राजा सिव सिंघ रूप नरायन
सकल कला मनभावे ॥ २२ ॥

बाघास (लड़के की कमर में पहनाया जाता है)। १३—मोछामोल = बिछाया। सिर = कदम्ब की माला सिरहाने (तकिया के रूप में) रखी। १४—हरखद = पलने का गीत। भमरी = भ्रमरी। १५—कनअ = सोना। केसुअ = पलास। सुति-पत्र = जन्मपत्र। नछत = नक्षत्र। १६—कोकिला गणित की गणना खूब जानती थी, उसीने वसंत नाम रक्खा। १८—बीच की एक पंक्ति गायब है। १९-२०—दक्षिण पवन किसलय और पुष्प पराग लेकर उसके शरीर में उबटन लगाता है। मंजरी का सुन्दर हार गले में है, मेघ ने उसकी आँखों में काजल लगा दिया।

(१७५)

आएल रितुपति-राज वसंत।
धाओल अलिकुल माधवि-पथ ॥ २ ॥
दिनकर किरन भेल पौगंड।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ॥ ४ ॥
नृप-आसन नव पीठल पात।
काँचन कुसुम छत्र धरु माथ ॥ ६ ॥
मौलि रसाल मुकुल भेल ताय।
समुख हि कोकिल पञ्चम गाय ॥ ८ ॥
सिखिकुल नाचत अलिकुल यन्त्र।
द्विजकुल आन पढ आसिख मन्त्र ॥ १० ॥
चन्द्रातप उडे कुसुम पराग।
मलय पवन सह भेल अनुराग ॥ १२ ॥

१—आएल = आया। २—धाओल = दौड़ा। अलिकुल = भ्रमर समूह। माधवि पंथ = माधवी की ओर। ३—दिनकर = सूर्य। भेल = हुआ। पौगण्ड = किशोरावस्था, कुछ कुछ तेज। हेमदण्ड = सोने का डण्डा, आसा। "मदन महीपति कनक दण्ड रुचि केसर कुसुम विकाशे—गीतगोविन्द।" ४—पीठल = वृक्ष विशेष, पिठवा। पात = पत्ता। काँचन कुसुम = चम्पा। ७—मौलि = किरीट। रसाल मुकुल = आम की मंजरी। ताय = उसके। ९—सिखि = मोर। अलिकुल यन्त्र = भौंरे बाजा बजा रहे हैं। १०—द्विजकुल = (१) पक्षी (२) ब्राह्मण (पक्षी को द्विज इस लिये कहा जाता है कि उसका जन्म भी दो बार होता है, एक बार अण्डे के रूप में, पुन

कुदवल्ली तरु धयल निसान।
पाटलतून असोक दलवान ॥ १४ ॥
किंसुक लवँग लता एक संग।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥१६॥
सैन साजल मधु-मखिका कूल।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥ १८ ॥
उधारल सरसिज पाओल प्रान।
निज नव दल कर आसन दान ॥२०॥
नव वृन्दावन राज विहार।
विद्यापति कह समयक सार ॥ २२ ॥

पक्षी के रूप में।) आन = आकर। आसिख मंत्र = आशीर्वादात्मक श्लोक। ११—चन्द्रातप = चँदोवा। फूलों के पराग ही चँदोवा से उड़ रहे हैं। १२—मलय पवन = मलयाचल से आनेवाली हवा, दक्षिण पवन। सह = साथ। कुदवल्ली = वृक्ष विशेष। निसान = पताका। पाटल तून = पाटल के पत्ते ही तूण (तरकश) हैं। अशोक दलवान = अशोक के पत्ते बाण हैं। १५—किंसुक = पलास। (धनुष की समान) लवँगलता = (ताँत के समान)। १६—आगे दल भंग = पहले ही सैन्यभंग हो गया। १७—कूल = कुल। १९—उधारल = उद्धार किया। पाओल = पाया। २०—दल = पत्ता।

अर्थो गिरामपिहित पिहितश्च कश्चित्।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभ ॥
नान्ध्रीपयोधर इवातितरां प्रकाशो।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढ ॥

(१७६)

नव वृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव विकसित फूल।
नवल वसत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कूल ॥ २ ॥
विहरइ नवल किसोर।
कालिंदि पुलिन-कुंज वन सोभन
नव नव प्रेम-बिभोर ॥ ४ ॥
नवल रसाल मुकुल-मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय।
नवजुवती गत चित उमताअई
नव रस कानन धाय ॥ ६ ॥
नव जुवराज नवल वर नागरि
मीलए नव नव भाँति।
निति निति ऐसन नव नव खेलन
बियापति मति माति ॥ ८ ॥

१—नव = नवीन। विकसित = खिले हुए। २—मलयानिल = मलय पवन। मातल = पागल बना। अलिकुल = भौंरे। ३—विहरइ = विहार करता है। नवल किसोर = युवक कृष्ण। ४—कालिंदि = यमुना। पुलिन = किनारे। सोभन = सुशोभित। प्रेम विभोर = प्रेम में बेसुध। ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी नई कोयल गा रही है। ६—उमताअई = उन्मत्त हो जाता है। ८—ऐसन = इस प्रकार का। खेलन = क्रीड़ा। माति = मत्त बनी।

लता तरुअर मंडप जीति।
निरमल ससधर धवलिए भीति ॥ २ ॥
पउँअ नाल अइपन भल भेल।
रात परीहन पल्लव देल ॥ ४ ॥
देखह माइ हे मन चित लाय।
बसन्त बियाह कानन-थलि आय ॥ ६ ॥
मधुकरि रमनी मंगल गाव।
दुजवर कोकिल मन्त पढ़ाव ॥ ८ ॥
करु मकरंद हथोदक नीर।
बिधु बरिआती धीर समीर ॥ १० ॥
कनअ किंसुक सुति तोरन तूल।
लावा बिथरल बेलिक फूल ॥ १२ ॥
केसर कुसुम करु सिंदुर दान।
जओतुक पाओल मानिनि मान ॥ १४ ॥
खेलए कौतुक नव पँचबान।
बिद्यापति कवि दृढ़ कए भान ॥ १६ ॥

१—लता और वृक्ष ने मानो मंडप को जीत लिया—लता और वृक्ष ही मंडप है। २—निरमल = स्वच्छ। ससधर = चन्द्रमा। धवलिए = उज्ज्वल कर दिया (चूना पोत दिया)। भीति = दीवाल। ३—पउँअ नाल = पद्मनाल, कमल का नाल। अइपन = अरिपन (जमीन पर का मांगलिक चित्र)। ४—रात = लाल। परीहन = परिधान = वस्त्र। ५—माइ हे = अरी मैया। ६—कानन थलि = वनस्थली। ७—मधुकरि रमनी =

(१८१)

अभिनव कोमल सुन्दर पात।
सगरे बने जनि पहिरल रात ॥ २ ॥
मलय-पवन डोलए बहु भाँति।
अपन कुसुम रस अपने माति ॥ ४ ॥
देखि देखि माधव मन हुलसत।
बिरिंदाबन भेल बेकत बसंत ॥ ६ ॥
कोकिल बोलए साहर भार।
मदन पाओल जग नव अधिकार ॥ ८ ॥
पाइक मधुकर कर मधु पान।
भमि भमि जोहए मानिनि मान ॥ १० ॥
दिसि दिसि से भमि विपिन निहारि।
रास बुझाबए मुदित मुरारि ॥ १२ ॥
भनइ बिद्यापति ई रस गाव।
राधा-माधव अभिनव भाव ॥ १४ ॥

१—अभिनव = नवीन। पात = पत्ते। २—सगरे = सम्पूर्ण। रात = लाल (वस्त्र)। मानों समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया हो। ३—डोलए = बह रहा है। ४—माति = मत्त होकर। फूल अपने रस में आप ही पागल है। ५—हुलसत = हुलसित हुआ। ६—बेकत भेल = प्रकट हुआ। ७—साहर = आम्रमंजरी। ८—मदन = कामदेव। ९—पाइक = पायक, दूत। मधुकर = भौंरा। १०—भमि भमि = भ्रमण कर। जोहए = खोजता है। ११—बिपिन = वन। निहारि = देखकर। १२—प्रसन्नचित्त कृष्ण रासलीला कर रहे हैं।

(१८२)

चल देखए जाऊ रितु बसत।
जहाँ कुद-कुसुम केतकि हसत ॥ २ ॥
जहा चदा निरमल भमर कार।
जहा रयनि उजागर दिन अँधार ॥ ४ ॥
जहा मुगुधलि मानिनि करए मान।
परिपथिहि पेखए पचबान ॥ ६ ॥
भनइ सरस कवि कठ-हार।
मधुसूदन राधा वन विहार ॥ ८ ॥

(१८३)

मधुरितु मधुकर पाँति। मधुर कुसुम मधुमाति ॥
मधुर वृ दावन मांझ। मधुर मधुर रसराज ॥
मधुर जुवति जन सग। मधुर मधुर रसरग ॥
मधुर मृदग रसाल। मधुर मधुर करताल ॥
मधुर नटन गति भंग। मधुर नटिनी नट संग ॥
मधुर मधुर रस गान। मधुर विद्यापति भान ॥

३—निरमल = स्वच्छ। भमर = भ्रमर, भौंरा। कार = काला। ४—जहाँ रात उजली प्रकाशमय (फूलों और चंद के कारण) और दिन अधकार पूर्ण (भौंरों और गुल्म लताओं के कारण)। ६—परिपथिहि = पथिकों को, विरोधियों को। पेखए = देखता है। पंचबान = कामदेव।

मधुरितु = बसंत। मधुकर = भौंरा। मधुमाति = मधु से मात। मांझ = में। रसराज = शृगार। मधुर नृत्य का गति भग ... और मधुर नाचनेवाली के साथ (मधुर) नट का (ग...

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति कलावति माति श्याम सँग
कर करताल प्रबन्धक ध्वनिया ॥२॥
डम डम डफ डिमिक डिम मादल
रुनु झुनु मंजीर बोल।
किंकिनि रनरनि वलआ कनकनि
निधुबन रास तुमुल उतरोल ॥४॥
बीन, रबाब, मुरज स्वरमंडल
सा रि ग म प ध नि सा बहु विधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदग गरजनि
चंचल स्वरमंडल करु राव ॥६॥
स्रम भर गलित लुलित कबरीयुत
मालति माल बिथारल मोति।
समय बसंत रास रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ॥८॥

२—नटनि = नाच रही हैं। माति = मस्त होकर। ध्वनिया = आवाज। ३—मादल = एक बाजा। ४—वलआ = कँगना। निधुबन .. = निधुबन में रासलीला जोरों के साथ हो रही है। ५—रबाब = सारंगी के ढंग का एक बाजा। स्वरमंडल = बीणा का एक भेद। ६—राव = स्वर। ७—परिश्रम के कारण पसीने चल रहे हैं, केश चंचल हो इधर-उधर छिटके हैं और मालती की माला मोती-बखेर रही है। ८—छोभित = क्षोभित, चंचल।

(१८५)

रितुपति-राति रसिक रसराज।
रसमय रास रभस रस मांझ ॥२॥
रसमति रमनि-रतन धनि राहि।
रास रसिक सह रस अवगाहि ॥४॥
रंगिनि गन सब रँगहि नटई।
रनरनि कंकन किंकिनि रटई ॥६॥
रहि रहि राग रचय रसवंत।
रतिरत रागिनि रमन बसंत ॥८॥
रटति रवाब महतिक पिनास।
राधारमन करु मुरलि विलास ॥१०॥
रसमय विद्यापति कवि भान।
रूपनारायन भूपति जान ॥१२॥

(१८६)

मलय पवन बह। बसंत विजय कह॥
भमर करइ रोर। परिमल नहि ओर॥
रितुपति रँग हेला। हृदय रभस भेला॥
अनंग मंगल मेलि। कामिनि करथु केलि॥
तरुन तरुनि संगे। रयनि खेपवि रंगे॥
बिहरि विपदि लागि। केसु उपजल आगि॥
कवि विद्यापति भान। मानिनी जीवन जान॥
नृप रुद्रसिंह वरु। मेदिनि कलप तरु॥

महतिक = बड़ी वीणा। पिनास = एक बाद्ययन्त्र। खेपवि = बितायेगा।

(१८७)

सखि हे बालुम जितब बिदेस ।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेस ॥ २ ॥
ई न बिदेसक बेलि ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तेँ तोहे पिया लग मेलि ॥४॥
किछु दिन करथु निवास ।
हम पूजल जे से हे पए भुजब
राखथु पर उपहास ॥६॥
होयताह किए बध भागी ।
जेहि खन हुन मन जापब चितब
हमहु मरब धसि आगी ॥८॥
विद्यापति कवि भान ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥१०॥

१—जितब=जीतेंगे । (अपशकुन समझकर 'जाएँगे' ऐसा नहीं कहती)। २—तोहहुँ=तुम्हीं। हुनि=उनको)। ३—बेलि=बेला, समय। ४—अनुमापब=समझेंगे। तें तोहे पिया लग मेलि=इसीलिये तुम्हें प्रीतम के निकट भेज रही हूँ। ५—करथु=करें। ६—जैसी पूजा की होगी, वैसा फल मैं भोगूँगी, वे मुझे केवल दूसरे की निन्दा से बचा ले। ७—होयताह=होयेंगे। किए=क्यों। बध भागी=हत्या का भागी ८—जापब चितब=जाने को सोचेंगे।

(१८८)

माधव, तोहें जनु जाह बिदेस।
हमरा रंग-रभस लए जएबह
लएबह कौन सँदेस ॥२॥
बनहि गमन करु होएति दोसर मति
बिसरि जाएब पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब
फेरि माँगब पहु तोरा ॥४॥
जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा।
एकहि नगर बसि पहु भेल परबस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥
पहु सँग कामिनि बहुत सोहागिनि
चन्द्र निकट जइसे तारा।
भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाह = मत जाओ। २—रंग-रभस = आमोद-प्रमोद। ३—मोरा बिसरि जाएब = मुझे भूल जाओगे। ५—नीर = आँसू। पहु ओरा = प्रीतम की ओर। ६—पुरत = पूरा होगा। ८—सारा = (यहाँ) धैर्य।

"सत्सूत्रसंनिधानं सदलंकारं सुवृत्तमच्छिद्रम्।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्यं माल्यमध्यं च॥"

(१८६)

कालि कहल पिश्रा ए साझहि रे
जाएब मोयँ मारुश्र देस।
मोयँ श्रभागलि नहि जानलि रे
सँग जइतश्रों जोगिन वेस ॥२॥
हृदय मोर वड दारुन रे
पिया विनु विहरि न जाए ॥३॥
× × × ×
एक सयन सखि सूतल रे
श्राछल वालमु निसि भोर।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
बिछुरल चकेवा जोर ॥५॥
सून सेज हिय सालए रे
पिया बिनु घर मोयँ श्राजि।
बिनति करश्रों सहलोलिनि रे
मोहि देह श्रगिहर साजि ॥७॥
विद्यापति कवि गाश्रोल रे
श्रावि मिलव पिय तोर।
लखिमा देइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहि भोर ॥८॥

१—मारुम = मथुरा। २—जइतश्रों = जाती। ३—दारुन = कठोर। विहरि = फट जाना। ४—भइल = था। जोर = जोड़ा। ६—सालए = पीड़ा देती है। ७—सहलोलिन = सहेली। मोहि.... = मुझे अग्निचिन्ता साज दो, जिसमें जल जाऊँ।

(१९०)

मधुपुर मोहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती।
गोपी सकल बिसरलनि रे
जत छल अहिवाती ॥२॥
सुतल छलहुँ अपन गृह रे
निन्दइ गेलउँ सपनाइ।
करसौं छुटल परसमनि रे
कोन गेल अपनाइ ॥४॥
कत कहवो कत सुमिरब रे
हम भरिए गरानि।
आनक धन सौं धनवती रे
कुबजा भेल रानि ॥६॥

१—मधुपुर = मथुरा। गेल = गया। मोरा = मेरा। बिहरत = फटती है। २—बिसरलनि = विस्मरण हो गये, भूल गये। जत = जितनी। छल = थी। अहिवाती = सौभाग्यवती। ३—सुतलि = सोई। छलहुँ = (मैं) थी। अपन = अपने। निन्दइ गेल सपनाइ = नींद में स्वप्न देखने लगी। ४—कर = हाथ। छुटल = छूट गया। परसमनि = स्पर्श मणि, पारस। कोन—कौन। गेल अपनाइ = अपना गया। ५—कत = कितना। कहबो = कहूँगी। सुमिरब = स्मरण करूँगी। भरिए गरानि = ग्लानि से भर गई हूँ। ६—आनक = दूसरे का। सौं = से। भेल = हुई।

गोकुल चान चकोरल रे
चोरी गेल चन्दा।
बिछुडि चललि दुहु जोडी रे
जीव दइ गेल धदा॥८॥
काक भाख निज भाखहु रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड भोजन देव रे
भरि कनक कटोरा॥१०॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धर नारी।
गोकुल होयत सोहाओन रे
फेरि मिलत मुरारी॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर बन गया—जो यहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार हजार गोपियाँ चकोरी की तरह देखती थीं—वही आज स्वयं चकोर बनकर दूसरी को—कुब्जा को देख रहा है। हाय! मेरा चन्द्र चोरी चला गया। ८—बिछुडि = बिछुडकर। चललि = चली। दुहु जोडी = दोनों (राधा कृष्ण) की जोडी। जीव दइ गेल धदा = प्राणों में संदेह दे गया। ६—काक = काग, कौआ। भाउ = बोली। भाखहु = बोलो। पहु = प्रीतम। आओत = आयेगा। १०—खीर = दूध। देव = दूँगी। कनक = सोना। १२—सोहाओन = शोभायमान।

"सुभाषितरसास्वादबद्धरोमाञ्चकञ्चुका।
विनापि कामिनीसंग कवय सुखमासते॥"

(१६१)

सरसिज विनु सर सर विनु सरसिज
की सरसिज विनु सूरे।
जौवन विनु तन तन विनु जौवन
की जौवन पिय दूरे ॥२॥
सखि हे मोर बड़ दैव विरोधी।
मदन वेदन बड पिया मोर बोलछड
अबहु देहे परबोधी ॥ ४ ॥
चौदिस भमर भम कुसुम कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीवइ।
मद पवन चल पिक कुहु कुहु कह
सुनि विरहिन कइसे जीवइ ॥६॥
सिनेह अछल जत हम भेव न टूटत
बड बोल जत सब थीर।
अइसन के बोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिध नीर ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुन गाहक पिया तोरा।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सहजे एको नहि भोरा ॥ १० ॥

१—की = क्या। सूरे = सूर्य। ४—बोलछड = प्रतिज्ञाभग करनेवाला। देहे = देती हो। ५—भमर भम = भौरे भ्रमण कर रहे हैं। ७—अछल = था। भेव = समझना। बड बोल जत सब

(१६३)

लोचन धाए फेधाएल
    हरि नहि आयल रे।
सिव सिव जिवओ न जाए
    आस अरुझाएल रे॥ २॥
मन करे तहाँ उडि जाइअ
जहाँ हरि पाइअ रे।
पेम-परसमनि जानि
    आनि उर लाइअ रे॥४॥
सपनहु सगम पाओल
    रग बढ़ाओल रे।
से मोरा विहि विघटाओल
    निन्दओ हेराएल रे॥ ६॥
भनइ विद्यापति गाओल
    धनि धइरज धर रे।
अचिरे मिलत तोहि बालमु
    पुरत मनोरथ रे॥ ८॥

१—धाए = दौड़कर। फेधाएल = फेन सहित हो गये, फूल गये। २—जिवओ = प्राण भी। अरुझाएल = उलझ पड़े हैं। ३—मन करे = इच्छा होती है। ४—उर लाइअ = छाती से लगा लूँ। ५—सगम = मिलन, भेंट। पाओल = पाया। ६—विहि = ब्रह्मा। विघटाओल = नष्ट किया। निन्दओ हेराएल = नींद भूल गई, जाती रही। ८—अचिरे = शीघ्र ही। पूरा होगा।

(१९४)

सखि मोर पिया।
अबहु न आओल कुलिस हिया ॥ २ ॥
नखर खोआओलु दिवस लिखि लिखि।
नयन अँधाओलुँ पिआपथ देखि ॥ ४ ॥
जब हम बाला परिहरि गेला।
किए दोस किए गुन बुझइ न भेला ॥ ६ ॥
अब हम तरुनि बुझब रस भास।
हेन जन नहि मोर कहे पिआ पास ॥ ८ ॥
आएब हेन करि पिया मोर गेला।
पुरबक जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥
भनइ बिद्यापति सुन बर राइ।
कानु समुझाइत अब चलि आइ ॥१२॥

२—आओल = आया। कुलिस हिया = वज्र जैसा कठोर हृदय। ३—नखर = नहँ। खोआओलु = नष्ट कर दिया। प्रीतम के आने का दिन लिखते लिखते मेरे नख घिस गये। ४—अंधाओलुँ = अंधा बना लिया। पियापथ = प्रीतम की राह। ५—बाला = भोली भाली किशोरी। परिहरि गेला = छोड़कर चले गये। ६—किये = क्या। बुझइ न भेला = कुछ न जान सके। ७—तरुनि = युवती। रस भास = रस की बातें। हेन = इस समय। १०—पुरबक = पूर्व का। बिसरित = विस्मरण। ११—राई = राधा। १२—कानु = कृष्ण।

(१६५)

आसक लता लगाओल सजनी
नयनक नीर पटाय।
से फल अब तरुनत भेल सजनी
आँचर तर न समाय ॥ २ ॥
फांच सांच पहु देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह भान।
दिन दिन फल तरुनत भेल सजनी
अहुखन न करु गेआन ॥ ४ ॥
सब कर पहु परदेश बसि सजनी
आयल सुमिरि सिनेह।
हमर पहुन पति निरदय सजनी
नहि मन बाढय नेह ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओल गुनसाह।
उठि बधाब करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह ॥ ८ ॥

१-२—सखि, आँखों के पानी से सींचकर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) जवानी में आ गया, पुष्ट हो चला, वह अंचल के नीचे समाता नहीं। ३—साच=सच मुच में। पहु=प्रीतम। तसु=उसके। कुह=कुहेसा, (निराशा)। अहुखन=इस समय भी। ६—पहन=ऐसा। ७—आओत=आयेगा। गुनसाह=गुनवान्। ८—बधाव=बधैया। नाह=पति।

(१८६)

फोन गुन पहु परवस भेल सजनी
बुझलि तनिक भल मद।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निसि चद॥२॥
कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहिं आन।
फनेक जतन सौं मेटिए सजनी
मेटए न रेख पखान॥४॥
जे दुरजन कटु भाखए सजनी
मोर मन न होए विराम।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तज हिमधाम॥६॥
जतओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तेजए पाक।
जे जन रतल जाहि सौं सजनी
कि करत बिहि भए वाक॥८॥
विद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमत।
राजा सिवसिंघ मन दए सजनी
मोदवती देह कत॥१०॥

१—तनिक=उनका। २—मनमथ मन मथ—कामदेव मन का मथन—कर-रहा है। तनि=उनके। ३—दुष्ट लोग भले ही उनके

(१६७)

माधव हमर रटल दुर देस।
केओ न कहइ सखि कुसल सनेस ॥ २ ॥
जुग-जुग जीवथु बसथु लाख कोस।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ॥ ४ ॥
हमर करम भेल बिहि बिपरीत।
तेजलनि माधब पुरुबिल पिरीत ॥ ६ ॥
हृदयक वेदन बान समान।
आनक दुःख आन नहिं जान ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति कवि जयराम।
दैव लिखल परिनत फल बाम ॥१०॥

सैकड़ों अवगुण मुझसे कहें, किन्तु मेरे लिये उनके समान दूसरा कोई नहीं है। ४—पखान = पत्थर। ५—बिराम = उदासीनता (कृष्ण के प्रति)। राहु पराभव = राहु द्वारा हराये जाने पर, ग्रस लिये जाने पर। हिमधाम = चन्द्रमा। ७—तरनि = सूर्य। ८—रतल = अनुरक्त। कि करत = ब्रह्मा विमुख होकर क्या करेगा?

१—रटल = चला गया। २—केओ = कोई। सनेस = संदेश। ३—जीवथु = जीयें। बसथु = बसें। ४—हुनक = उनका। ५—बिहि = ब्रह्मा। ६—तेजलनि = छोड़ दिया। पुरुबिल = पूर्व का। ७—वेदन = वेदना, दुःख। ८—आनक = दूसरे का। १०—बाम = विपरीत।

"कुवलन्ददलदामा विकचश्रीश्वाखराब्दमगवती।
कस्य न कम्पयते क जरेव जीर्णस्य स कनेर्वाणो॥"

(१६८)

जौवन रूप अछल दिन चारि।
से देखि आदर कएल मुरारि ॥२॥
अब भेल झाल कुसुम रस छूछ।
वारि विहुन सर केओ नहि पुछ ॥४॥
हमरि ए विनती कहब सखि रोय।
सुपुरुष बचन अफल नहिं होय ॥६॥
जावे रहइ धन अपना हाथ।
तावे से आदर कर सग साथ ॥८॥
धनिकक आदर सब तहँ होय।
निरधन बापुर पुछए न कोय ॥१०॥
भनइ विद्यापति राखब सील।
जो जग जीविए नवओ निधि मील ॥१२॥

१—अछल = थे। २—से = वह। कएल = किया। ३—झाल = कडु, गंधहीन। रस छूछ = रस से हीन। ४—वारि विहुन = पानी से रहित। सर = तालाब। केओ—कोई। ५—रोय—रोकर। ६—अफल = व्यर्थ। ७—जावे—जबतक। ८—सग साथ = संगी-साथी, मित्र कुटुम्ब। ९—धनिकक = धनियों का। सब तहँ = सर्वत्र। १०—बापुर = बेचारा। ११—सील = मर्यादा। १२—यदि जग में जीवित रहो, तभी नौ निधियाँ प्राप्त हों।

Poetry is at bottom a criticism of life. The greatness of a poet lies in his powerful and beautiful application of ideas to life.—Mathew Arnold.

(१६६)

सखि हे हमर दुखक नहिं ओर।
ई भर बादर माह-भादर
सून मन्दिर मोर ॥ २ ॥
झपि घन गरजति सतत
भुवन भरि बरसतिया।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हतिया ॥ ४ ॥
कुलिस कत सत पात मुदित
मयूर नाचत मातिया।
मत्त दादुर डाक डाहुक
फाटि जायत छातिया ॥ ६ ॥
तिमिर दिग भरि घोर जामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन-रातिया ॥ ८ ॥

२—(इस पद का यह चरण अत्यन्त प्रसिद्ध है। स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है)। भर = भरा हुआ। बादर = मेघ। ३—सतत = सदा। ४—पाहुन = प्रवासी। खर सर = तेज वाण। हतिया = मारता। ५—कत सत = कई सौ। पात = गिरता है। मातिया = मत्त होकर। ६—डाक = पुकारता है। डाहुक = एक बरसाती पक्षी। ७—दिग = दिशा। अथिर—चञ्चल। ८—कइसे = किस प्रकार। गमाओब = बिताऊँगी।

(२००)

मोर वन घन सोर सुनइत
वढ़त मनमथ पीर।
प्रथम छार असाढ आओल
अवहु गगन गँभीर॥२॥
दिवस रयना अरे सखी
कइसे मोहन बिनु जाए॥३॥
आवए साओन वरिख भाओन
घन सोहाओन वारि।
पचसर सर छुटत रे, कइसे
जीअए विरहिन नारि॥५॥
आवए भादो वेगर माधो
काँसो कहि एहि दूख।
निडर डर डर डाक डाहुक
छुटत मदन धनुक॥७॥
अछूह आसिन गगन भासि न
घनन धन धन रोल।
सिह भूपति भनइ ऐसन
चतुर मास कि बोल॥८॥

२—भाओन = जो मन को भावे। ४—पचसर = कामदेव। ६—वेगर = विना। काँसो = किससे। ७—निडर डाहुक (पक्षी विशेष) डर डर शब्द से पुकार रहा है—मानो कामदेव की बन्दूक छूट रही हो। ८—अछूह = (अछ = अस्ति) आया। भासि = मालूम पड़ता है।

(२०१)

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर वन
कोकिल पंचम गावे रे।
मलयानिल हिम सिखर सिधारल
पिया निज देश न आवे रे ॥ २ ॥
चनन चान तन अधिक उतापए
उपवन अलि उतरोले रे।
समय वसत कत रहु दुर देस
जानल विधि प्रतिकूले रे ॥ ४ ॥
अनमिख नयन नाह मुख निरखइत
तिरपित न भेल नयाने रे।
ई सुख समय सहए पल सकट
अबला कठिन पराने रे ॥ ६ ॥
दिन दिन खिन तनु हिम कमलिनि जनि
न जानि कि जिव परजत रे।
विद्यापति कह धिक धिक जीवन
माधव निकरुन कत रे ॥ ८ ॥

१—फुटल = प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिम सिखर सिधारल = मलय पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण पवन बहने लगा। ३—चनन = चन्दन। चान = चन्द्रमा। उतापए = उत्तप्त कर देता है, जलाता है। अलि उतरोले रे = भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनमिख = बिना पलक गिरे हुए। हिम = बर्फ। परजत = शेष। ८—निकरुन = करुणा रहित, कठोर।

(२०२)

सजनी कानुक कहयि बुझाई ।
रोपि पेमक विज अकुर मूडलि
बाँचब कोन उपाई ॥ २ ॥
तेल विन्दु जैसे पानि पसारिए
ऐसन मोर अनुराग ।
सिकता जल जैसे छनहि सूखए
तैसन मोर सुहाग ॥ ४ ॥
कुल कामिनि छलौं कुलटा भए गेलौं
तिनकर वचन लोभाई ।
अपने कर हम मूँड मुडाएल
कानु से प्रेम बढाई ॥ ६ ॥
चोर रमनि जनि मन मन रोअई
अम्बर बदन छिपाई ।
दीपक लोभ सलभ जनि धाएल
से फल भुजइत चाई ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति इह कलजुग रित
चिन्ता करह न कोई ।
अपन करम दोप आपहि भुजइ
जे जन पर-बस होई ॥१०॥

१—कानुक = कृष्ण को । २—मूडलि = तोड़ दिया । पसारिए = फैलता है । ४—सिकता = बालू । तैसन = वैसा । सुहाग = सौभाग्य । ५—छलौं = थी । कुलटा = व्यभिचारिणी । तिनकर = उनके । ६—मूँड

(२०३)

के पतिश्रा लए जाएत रे
मोरा पियतम पास।
हिय नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ॥ २॥
एकसरि भवन पिया बिनु रे
मोरा रहलो न जाय।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआय ॥ ४॥
मोर मन हरि हरि लय गेल रे
अपनो मन गेल।
गोकुल तजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ॥ ६॥
विद्यापति कबि गाओल रे
धनि धरु पिय आस।
आओत तोर मनभावन रे
एहि कातिक मास ॥ ८॥

मुद्दापल = बदनाम हुई। ७—चोर-रमनि = चोर की स्त्री। अम्बर = वस्त्र। ८—सलभ = पतंग। जनि = ऐसा। भुगइत चाई = भोगना ही चाहिये। १०—भुगइ = भोगता है।

१—के = कौन। २-भेल = हुआ, आया। ३-एकसरि = अकेली ४—अनकर = दूसरे का। पतिअय—विश्वास करता है। ५—हरि लय गेल = हरकर ले गये। अपनो = स्वय भी। ८—आओत = आवेगा।

सजनी, के कह आओब मधाई।
विरह पयोधि पार किए पाओब
मझु मन नहिं पतिआई ॥ २ ॥
एखन-तखन करि दिवस गमाओल
दिवस दिवस करि मासा।
मास-मास करि वरस गमाओल
छोडलू जीवन आसा ॥ ४ ॥
वरस-वरस करि समय गमाओल
खोयलू कानुक आसे।
हिमकर किरन नलिनि जदि जारव
कि करव माधव मासे ॥ ६ ॥
अकुर तपन ताप जदि जारव
कि करव वारिद मेहे।
इह नव जौवन विरह गमाओब
कि करव से पिया गेहे ॥ ८ ॥
भनई विद्यापति सुन वर जौवति
अव नहि होइ निरासे।
से व्रजनन्दन हृदय अनन्दन
झटित मिलव तुअ पासे ॥१०॥

१—आओव = आवेंगे। २—पयोधि = समुद्र। ३—एखन-तखन = यह क्षण, वह क्षण। ५—खोयलू = भुला दिया। कानुक = कृष्ण का। ६—हिमकर = चन्द्रमा। नलिनि = कमलिनि। जारव = जलायेगा।

कातिक कत दिगन्तर बास।
पिय पथ हेरि हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहु का भेल।
हमे दुख साल सोआमि दय गेल॥ ६॥
अगहन मास जीव के अंत।
अबहु न आएल निरदए कंत॥
एकसरि हम धनि सूतआें जागि।
नाहक आओत खाएत मोहि आगि॥ ७॥
पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिआ परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरआें चौदिस झँखआें रोय।
नाह बिछोह काहु जन होय॥ ८॥
माघ मास घन पडए तुसार।
झिलमिल फेचुआँ उनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पिअतम कोर।
विधि बस दैव बाम भेल मोर॥ ९॥

६—दिगन्तर = दूर देश। बास = रहना। सुखराति = दीवाली की रात। सोआमी = स्वामी। ७—सूतआें जागि = जागकर सोती हूँ। जब मुझे आग खा जायगी, जब मैं विरह ज्वाला में मर जाऊँगी, तब प्रीतम व्यर्थ आवेंगे। ८—दीघरि = दीर्घ, बड़ी। झँखआें = झँखती हूँ। तुसार = बर्फ। झिलमिल • बारीक चोली में उभड़े हुए कुच हैं, जिनके ऊपर हार है। बाम भेल = विमुख हुआ।

फागुन मास घनि जीव उचाट।
बिरह-बिछिन भेल हेरओ बाट॥
आयल मत्त पिक पंचम गाव।
से सुनि कामिनि जीवहु सताव॥१०॥
चैत चतुरपन पिय परवास।
माली जाने कुसुम बिकास॥
भमि भमि भमरा करु मधुपान।
नागरि भइ पहु भेल असयान॥११॥
बैसाख तवे खर मरन समान।
कामिनि कत हृनय पँचबान॥
नहि जुडि छाहरि न बरसि बारि।
हम जे अभागिनि पापिनि नारि॥१२॥
जेठ मास उजर नव रंग।
कत चहए खलु कामिनि संग॥
रूपनारायन पूरथु आस।
भनइ विद्यापति बारह मास॥१३॥

१०—घनि जीव उचाट = बाला का जी उचट गया। बिछिन = बिछोह, आयत हुआ। पिक = कोयल। से = वह। सताव = सताता है। ११—प्रवास = विदेश में। कुसुम बिकास = फूल का खिलना। भमि = भ्रमण कर। भमरा = भौंरा। नागर = चतुर। पहु = प्रीतम। १२—तवे = तप जाता है, गरम हो उठता है। खर = रौद्र। जुडि = ठंढा। छाहरि = छाया। बरिस = बरसता है। बारि = पानी। उजर नवरंग = नये रंग उमड़ गये। खलु = निश्चय। पूरथु = पूरा करें।

कातिक कत दिगन्तर बास।
पिय पथ हेरि हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहु का भेल।
हमे दुख साल सोआमि दय गेल॥ ६॥

अगहन मास जीव के अत।
अबहु न आएल निरदए कत॥
एकसरि हम धनि सूतओ जागि।
नाहक आओत खाएत मोहि आगि॥ ७॥

पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिआ परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरओ चौदिस झँखओं रोय।
नाह बिछोह काहु जन होय॥ ८॥

माघ मास घन पड़ए तुसार।
झिलमिल केचुआँ उनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पिअतम कोर।
बिधि बस दैव बाम भेल मोर॥ ९॥

-दिगतर = दूर देश। बास = रहना। सुखराति = दीवाली की । सोआमी = स्वामी। ७—सूतओं जागि = जागकर सोती जब मुझे आग खा जायगी, जब मैं विरह ज्वाला में मर गी, तब प्रीतम व्यर्थ आवेंगे। ८—दीघरि = दीर्घ, बड़ी। ओं = झँखती हूँ। तुसार = बर्फ। झिलमिल बारीक चोली उमड़े हुए कुच हैं, जिनके ऊपर हार है। बाम भेल = विमुख हुआ।

फागुन मास धनि जीव उचाट।
विरह-बिखिन भेल हेरओं बाट॥
आयल मत्त पिक पचम गाव।
से सुनि कामनि जीवहु सताव॥१०॥
चेत चतुरपन पिय परवास।
माली जाने कुसुम बिकास॥
भमि भमि भमरा करु मधुपान।
नागरि भइ पहु भेल असयान॥११॥
बैसाख तवे खर मरन समान।
कामिनि कत हनय पँचबान॥
नहि जुड़ि छाहरि न बरसि बारि।
हम जे अभागिनि पापिनि नारि॥१२॥
जेठ मास उजर नव रंग।
कत चहए खलु कामिनि सग॥
रूपनारायन पूरथु आस।
भनइ विद्यापति बारह मास॥१३॥

१०—धनि जीव उचाट = बाला का जी उचट गया। बिखिन = विशेष, अत्यन्त कड़ा। पिक = कोयल। से = वह। सताव = सताता है। ११—प्रवास = विदेश में। कुसुम बिकास = फूल का खिलना। भमि = भ्रमण कर। भमरा = भौंरा। नागर = चतुर। पहु = प्रीतम। १२—तवे = तप जाता है, गरम हो उठता है। खर = तीव्र। जुड़ि = ठंडाना। छाहरि = छाया। बरिस = बरसता है। बारि = पानी। उजर नवरंग = नये रंग उजड़ गये। खलु = निश्चय। पूरथु = पूरा करें।

(२१०)

अकामिक मन्दिर भेलि बहार।
चहुँदिस सुनलक भमर-झकार ॥२॥
मुरछि खसल महि न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ॥ ४ ॥
केओ सखि बेनि धुन केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओं सँभार ॥ ६ ॥
केओ बोल मन्त्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद डाकिनि बोलि ॥ ८ ॥
अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन-भुजँग डसु बालहि तोरि ॥१०॥
भनइ विद्यापति एहो रस भान।
एहि विष-गारुड एक पए कान ॥१२॥

१—अकामिक=अकस्मात्। भेलि बहार=बाहर हुई। २—भमर=भौंरा। ३—खसल=गिर पड़ी। थीर=थिरता। ४—चेतए=सँभालती है। चिकुर=केश। चीर=साड़ी। ५—केओ=कोई। बेनि धुन=वेणी गूँथती है, वेणी सँभालती है। धुरि झार=धूल झाड़ती है। ६—अरगजओं=कस्तूरी आदि के लेप से। सँभार=सँभालती है। ७—कान तर=कान के निकट। जोलि=जोर से। ८—खेद=खदेड़ती है। ९—कि रभसि बोरि=क्या रभस कर बोल रहे हो। १०—तुम्हारी प्रेमिका को (बालहि) कामदेव रूपी सर्प ने काट लिया है। १२—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गरुड़ हैं।

(२११)

माधव, कठिन हृदय परवासी।
तुअ पेअसि मोयँ देखल बियोगिनि
अबहु पलटि घर जासी ॥ २ ॥
हिमकर हेरि अवनत कर आनन
करु करुना पथ हेरी।
नयन काजर लए लिखए विधुन्तुद
भय रह ताहेरि सेरी ॥ ४ ॥
दखिन पवन बह से कइसे जुवति सह
कर कवलित तनु अगे।
गेल परान आस दए राखए
दस नख लिखए भुजगे ॥ ६ ॥
मीनकेतन भय सिव सिव सिव कय
धरनि लोटावए देहा।
करे रे कमल लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा ॥ ८ ॥
परभृत के डर पायस लए कर
वायस निकट पुकारे।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
करथु बिरह उपचारे ॥१०॥

१—परवासी=प्रवासी विदेश में रहनेवाला। २—पेअसि=प्रेयसी, प्रेमिका। जासी=जाओ। ३—हिमकर=चन्द्रमा। अवनत=नीचे। विधुन्तुद=राहु। ताहेरि सेरी=उसीकी शरण में।

(२१०)

अकामिक मन्दिर भेलि वहार।
चहुँदिस सुनलक भमर-झकार ॥ २ ॥
मुरुछि खसल महि न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ॥ ४ ॥
केओ सखि वेनि धुन केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओं सँभार ॥ ६ ॥
केओ बोल मत्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद डाकिनि बोलि ॥ ८ ॥
अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन-भुजँग डसु बालहि तोरि ॥१०॥
भनइ विद्यापति एहो रस भान।
एहि विष-गारुड एक पए कान ॥१२॥

१—अकामिक = अकस्मात्। भेलि बहार = बाहर हुई। २—भमर = भौंरा। ३—खसल = गिर पड़ी। थीर = स्थिरता। ४—चेतए = सँभालती है। चिकुर = केश। चीर = साड़ी। ५—केओ = कोई। वेनि धुन = वेणी गूँथती है, वेणी सँभालती है। धुरि झार = धूल झाड़ती है। ६—अरगजओं = कस्तूरी आदि के लेप से। सँभार = सँभालती है। ७—कान तर = कान के निकट। जोलि = जोर से। ८—खेद = खदेड़ती है। ९—कि रभसि बोरि = क्या रभस कर बोल रहे हो। १०—तुम्हारी प्रेमिका को (बालहि) कामदेव रूपी सर्प ने काट लिया है। १२—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गरुड़ हैं।

(२१३)

सरदक ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिन के लोचन लीला।
केसपास लए चमरि के सोंपलक
पाए मनोभव पीला॥ २॥
माधव, जानल न जिवति राही।
जतवा जकर ले ले छलि सुन्दरि
से सव सोंपलक ताही॥ ४॥
दसन दसा दालिम के सोंपलक
बन्धु अधर रुचि देली।
देह दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर सनि सखि भेली॥ ६॥
भौंहक भग अनग-चाप दिहु
कोकिल के दिहु वानी।
केवल देह नेह अछ लओले
एतना अपलहुँ जानी॥ ८॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
चित झँवह जनु आने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने॥१०॥

उठ नहीं सकती। ७—दिन=गरीब, असहाय। चौदसि=चतुर्दशी।
१—ससधर=चन्द्रमा। मुखरुचि=मुख की शोभा। सोंपलक=समर्पण किया। २—चमरि=जिस गाय की दुम का चँवर होता है।

(२१४)

आएल उनमद समय वसंत।
दारुन मदन निदारुन कंत ॥टेक॥
ऋतु राज आज विराज हे सखि
नागरी जन वंदिते।
नव रंग नव दल देखि उपवन
सहज सोभित कुसुमिते।
आरे, कुसुमित कानन कोकिल साद।
मुनिहुक मानस उपजु विसाद ॥ १ ॥
अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु संचिते।
समय कंत उदंत नहिं किछु
हमहिं विधि-बस-वंचिते ॥
वंचित नागर सेह संसार।
एहि रितुपतिसौं न करए बिहार ॥ २ ॥

मनोभव = कामदेव। पीला = पीड़ा। ४—जतवा = जितना। जकर = जिसका। ले ले छलि = लिये हुए थी। ५—दालिम = दाड़िम = अनार। बन्धु = बन्धुली फूल। ६—सौदामिनि = बिजली। सनि = समान। ७—अनुग-चाप दिहु = कामदेव के धनुष को दिया। ८—अछ = है। एतवा = इतना। ९—झँखइ = झीखना।

१—उनमद = उन्मत्त, पागल। दारुन = कठिन। निदारुन = करुणाहीन। नागरी जन वंदिते = नागरी स्त्रियों द्वारा पूजित। नव = नवीन। दल = पत्ता। कुसुमित = खिले हुए। कानन = वन।

अति हार भार मनोज मारए
चंद रवि सनि भानए।
पुरुब पाप सताप जत हो
मन मनोभव जानए॥
जारए मनसिज मार सर साधि।
चानन देह चौगुन हो धाधि॥ ३॥
सब धाधि आधि वेआधि जाइति
करिए धैरज कामिनी।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनी॥
जामिनि सुफल जाइति अवसान।
धैरज धरु विद्यापति भान॥ ४॥

साद = ध्वनि। विसाद = विषाद, दुख। २—मधुकर = भौंरा। रव = आवाज। उदत = वार्ता। सेह = वही। ऋतुपतिसौं = वसंत में। ३—मनोज = कामदेव। चंद रवि सनि भानए = चन्द्रमा सूर्य के समान मालूम होता है। जत = जितना। मनसिज = कामदेव। मार = मारता है। चानन = चन्दन। धाधि = जलाना। ४—आधि वेआधि = शोक और पीड़ा। जाइति = जायगी। सुपहु = सुप्रभु, प्यारे प्रीतम। आओत = आवेगा। जामिनि = रात। अवसान = अन्त। भान = कहते हैं।

"स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विना यदनुग्रहम्।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्यै नमः कविकर्मणे॥"

(कृष्ण का विरह)

(२१७)

रामा हे, से किए विसरल जाई ।
कर धरि माथुर अनुमति मगइत
ततहि पडल मुरुछाई ॥ २ ॥
किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे
जे किछु कहल वर रामा ।
कठिन कलेवर तेई चलि आओल
चित्त रहलि सोइ ठामा ॥४॥
से विनु रात दिवस नहि भावए
ताहि रहल मन लागी ।
आन रमनि सयँ राज सम्पद मोयँ
आछिए जइसे विरागी ॥६॥
दुइ एक दिवस निचय हम आओब
तुहु परवोधवि राई ।
विद्यापति कह चित्त रहल तहिं
प्रेम मिलापब जाई ॥ ८ ॥

व्याकुल हो उठती है । यों दोनों अवस्थाओं में मर्म व्यथा सहती है ।

१—रामा = सुन्दरी (सखि) । से = वह । किए—क्यों । विसरल = भूलना । २—सरे = स्वर में । लहु लहु आखरे = मधुर शब्दों में । जे किछु = जो कुछ । ४—तेई = उसीसे । ५—से = वह (राधा) । ६ – आन = अन्य । आछिए = हूँ । ७—निचय = निश्चय । ८—तहिं = वहीं ।

(२१८)

तिल एक सयन ओत जिउ न सहए
न रहए दुहु तनु भीन।
माँझे पुलक गिरि अतर मानिए
अइसन रहु निसि-दीन ॥ २ ॥
सजनी कोन परि जीवए कान।
राहि रहल दुर हम मथुरापुर
एतहु सहए परान ॥ ४ ॥
अइसन नगर अइसन नव नागरि
अइसन सम्पद मोर।
राधा विनु सब बाधा मानिए
नयनन तेजिए नोर ॥ ६ ॥
सोइ जमुना जल सोइ रमनीगन
सुनइत चमकित चीत।
कह कविसेखर अनुभवि जनलों
चडक बडई पिरीत ॥ ८ ॥

१—तिल एक = एक क्षण के लिये भी। ओत = ओट। भीन = भिन्न। माँझे = मध्य में। २—मिलन के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किंचित् नाम मात्र का-व्याघात हो जाता था, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड़ के समान मालूम पड़ता था, इस प्रकार हम दिन रात मिले हुए थे। ३—कोन परि = किस प्रकार। ५—अइसन = ऐसा। ६—नोर = आँसू। ८—अनुभवि = अनुभव कर के। जनलों = जान गया।

(२१६)

रस बसत समय भल पाओलि
दछिन पवन बहु धीरे।
सपनहुँ रूप बचन एक भाखिए
मुख सौं दूरि करु चीरे ॥२॥
तोहर वदन सम चान होअथि नहि
जइओ जतन विहि देला।
कए बेरि काटि बनाओल नव कए
तइओ तुलित नहि भेला ॥४॥
लोचन तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए लुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ॥६॥
भनहि विद्यापति सुनु बर जोवति
ई सभ लछमी समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥८॥

१—पाओलि = पाया। २—स्वप्न मे एक आदमी ने आकर कहा—अरी, मुख से अचल हटाओ। ३—वदन = मुख। चान = चन्द्रमा। जइओ = यद्यपि। बिहि = विधाता। ४—कए = कितने। कए = काया, शरीर। तइओ = तो भी। तुलित = तुल्य, समान। ५—तूल = तुल्य। भए सक = हो सकता। लुकाएल = छिप गया। जल भए = जल में। पंकज = कमल। ई सभ = यह सब।

(२२०)

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार ॥२॥
कर कौसल कर कपइत रे
हरवा उर टार।
कर पंकज उर थपइत रे
मुख-चन्द निहार ॥ ४ ॥
केहनि अभागलि वैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देख पाओल रे
गुनमय गोविन्द ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धरु धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतबो सिंचु नीर ॥ ८ ॥

१—सुतलि छलहुँ = सोई थी। गरवा = गले में। २—जखनि = जिस समय। भिनुसरवा = भोर, उषःकाल। आएल = आया। ३—चतुराई करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटाया। ४—कर पंकज = कमल रूपी हाथ। थपइत = स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुँह देखने लगे। ५—केहनि = कैसी। अभागलि = अभागिनी। ६—भल कए = अच्छी तरह। ८—पाए =

(२२०)

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार ॥२॥
कर कौसल कर कपइत रे
हरवा उर टार।
कर-पंकज उर थपइत रे
मुख-चंद निहार ॥ ४ ॥
केहनि अभागलि वैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देख पाओल रे
गुनमय गोविन्द ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धरु धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतबो सिंचु नीर ॥ ८ ॥

१—सुतलि छलहुँ = सोई थी। गरवा = गले में। २—जखनि = जिस समय। भिनुसरवा = भोर, उष काल। आएल = आया। ३—चतुराई करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटाया। ४—कर पंकज = कमल रूपी हाथ। थपइत = स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुँह देखने लगे। ५—केहनि = कैसी। अभागलि = अभागिनी। ६—भल कए = अच्छी तरह। ८—फर =

(२२१)

मोरा रे अँगनवाँ चनन केरि गछिआ
ताहि चढि कुररय काग रे।
सोने चोंच बाँधि देब तोयँ बायस
जओं पिया आओत आज रे ॥ २ ॥
गावह सखि सब झूमर लोरी
मयन-अराधन जाऊँ रे ॥ ३ ॥
चओदिस चम्पा मओली फूलति
चान इजोरिया राति रे।
कइसे कए मोयँ मयन अराधव
होइति बाड रति-साति रे ॥ ५ ॥
विद्यापति कवि गावए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राओ भोगीसर सब गुन आगर
पदमा देइ रमान रे ॥ ७ ॥

फलता है। कतबो सिंचु नीर = कितना भी पानी पटाओ।

१—अँगनवाँ = आँगन में। चनन केरि = चन्दन का। गछिया = वृक्ष। कुररए = बोल रहा है। २—सोने = स्वर्ण से। तोयँ = तुझे। बायस = काग। ३—गावह गाओ। मयन-अराधन = कामदेव की अराधना करने। ४—मओली = मल्लिका। चान = चन्द्रमा। इजोरिया = चाँदनी। ५—कइसे कए = किस प्रकार। होइत = होयगी। रतिसाति = रति जनित पीड़ा। ६—पहु = प्रीतम। अछ = है। ७—रमान = पति।

(२२२)

अँगने आओब जब रसिया।
पलटि चलब हम इषत हँसिया॥ २॥
रस-नागरि रमनी।
कत कत जुगति मनहिं अनुमानी॥ ४॥
आवेसे आँचर पिया धरबे।
जाएब हम न जतन बहु करबे॥ ६॥
कँचुआ धरब जब हठिया।
करे कर बाँधब कुटिल आध दिठिया॥ ८॥
रभस माँगब पिआ जब ही।
मुख मोडि बिहँसि बोलब नहि नहि॥१०॥
सहजहि सुपुरख भमरा।
मुख-कमलक मधु पीअब हमरा॥१२॥
तखन हरब मोर गेआने।
विद्यापति कह धनि तुअ धेयाने॥१४॥

१—अँगने = आँगन में। आओब = आयँगे २—इषत = थोड़ा थोड़ा। ३—रसनागरी = रस में चतुरा, सुरसिका। ४—कत = कितनी। जुगति = युक्ति। ५—आवेसे = आवेश में, उत्तेजित होकर। ६—वे बहुत यत्न करेंगे, किन्तु मैं न जाऊँगी। ७—कँचुआ = कँचुकी, चोली। हठिया = हठकर। ८—(अपने) हाथ से (उनके) हाथ को बाँधा दूँगी और तिरछी एवं आधी चितवन से देखूँगी। ९—रभस = रति क्रीड़ा। बिहँसि = हँसकर। ११—भमरा = भौंरा। १२—पीअब = पीयेगा।

पिया जब आओत ह मझु गेहे।
मंगल जतहु करब निज देहे ॥ २ ॥

कनक कुम्भ करि कुच जुग राखि।
दरपन धरब काजर देइ आँखि ॥ ४ ॥

वेदि बनाओब हम अपन अंगमे
झाड करब ताहे चिकुर बिछौने ॥ ६ ॥

कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब।
आम पल्लव ताहे किंकिन सुझम्प ॥ ८ ॥

दिसि दिसि आनब कामिनि ठाट।
चौदिसि पसारब चाँदक हाट ॥१०॥

विद्यापति कह पूरब आस।
दुइ एक पलक मिलब तुअ पास ॥१२॥

१३—तखन = उस समय। (काम गाथा के समय) गेल प्राण घर लेल।

१—आओत = आवेंगे। ह = घर। मझु = मेरे। गेहे = घर में। जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर से ही करूँगी। ३—कनक-कुम्भ = सोने के घड़े। कुच जुग = दोनों कुच। ४—आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण रूप में धरूँगी = मेरी आँखों में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५—वेदि = चौका। अंगने = गोद। ६—केश को विच्छिन्न कर (खोलकर) उससे झाड़ू करूँगी। ७—कदलि = केला। गरुअ = विशाल। सुझम्प = [illegible], [illegible]। ९—आनब = लाऊँगी। ठाट = समूह। हाट = बाजार (स्त्रियों के [illegible] [illegible]

(२२४)

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल।
बिरह जनित दुख सब दुर गेल ॥ २ ॥
कर धरि बइसाओल विचित्र आसन।
रमन-रतन-स्याम रमनी रतन ॥ ४ ॥
बहु विधि विलसए बहु विधि रग।
कमल मधुप जनि पाओल सग ॥ ६ ॥
नयन नयन दुहु वयन बयान।
दुहु गुन दुहु गुन दुहुजन गान ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति नागरि भोर।
त्रिभुवन विजयी नागर चोर ॥१०॥

(२२५)

चिर दिन से बिहि भेल अनुकुल रे।
दुहु मुख हेरइत दुहु से आकुल रे ॥ २ ॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धरु रे।
दुहु अधरामृत दुहु मुख भरु रे ॥ ४ ॥
दुहु तनु कॉपइ मदन उछल रे।
किन किन किन खरि किकिनि रुचल रे ॥६॥
जाइतेहि स्मित नव बदन मिलल रे।
दुहु पुलकावलि ते लहु लहु रे ॥ ८ ॥
रस मातल दुहु बसन खसल रे।
विद्यापति रस-सिन्धु उछलल रे ॥१०॥

दुलह = दुलभ । बइसाओल = बिठलाया । भोर = बेसुध । स्मित =

(२२६)

सुनु रसिश्रा,
श्रब न बजाऊ बिपिन बँसिश्रा ॥ २ ॥
बार बार चरनारबिंद गहि
सदा रहब बनि दसिया।
कि छलहुँ कि होएब से के जाने
वृथा होएत कुल हँसिया ॥ ४ ॥
अनुभव ऐसन मदन—भुजंगम
हृदय मोर गेल डसिया।
नद नदन तुश्र सरन न त्यागब
बलु जग होए दुरजसिश्रा ॥ ६ ॥
बिद्यापति कह सुनु बनितामनि
तोर मुख जीतल ससिश्रा।
धन्य धन्य तोर भाग गोश्रारिनि
हरि भजु हृदय हुलसिश्रा ॥ ८ ॥

हँसते हुए। पुलकावलि = रोमांच। मतल = मत्त बना। खसल = गिर पड़ा।

१—रसिश्रा = रसिक। २—बँसिया = बँसी। ३—दसिश्रा = दासी। ४—कि = क्या। छलहुँ = थी। होएब = होऊँगी, बनूँगी। से = यह बात। के = कौन। कुल हँसिश्रा = कुल की निंदा। ५—ऐसन = इस प्रकार। मदन भुजगम = काम रूपी सर्प। गेल डसिया = डँस गया, काट गया। ६—बलु = भले ही, बरन। दुरजसिश्रा = अपयश, कलंक। ७—बनितामनि = स्त्रियों में रत्न समान। जीतल = जीत लिया। ससिश्रा = चन्द्रमा।

(२२७)

सखि, कि पुछसि अनुभव मोय।
से हो पिरिति अनुराग बखानिए
तिल तिल नूतन होय॥ २॥
जनम अवधि हम रूप निहारव
नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति पथ परस न भेल॥ ४॥
कत मधु-जामिनि रभस गमाओल
न बूझल कइसन केल।
लाख लाख जुग हिय हिय राखल
तइओ हिय जुडल न गेल॥ ६॥
कत विदगध जन रस अनुमोदई
अनुभव काहु न पेख।
बिद्यापति कह प्राण जुडाएत
लाखे न मिलल एक॥ ८॥

१—कि पुछसि = क्या पूछती हो ? मोय = मुझसे। २—से हो = वही। तिल तिल = क्षण क्षण। ३—निहारल = देखा। ४—स्रवनहि = कानों से। परस = स्पर्श। ५—मधु जामिनि—वसंत की रात। रभस = काम क्रीड़ा। गमाओल—बिता दी। केल = केलि। ६—तइओ = तो भी। जुडल न गेल = न जुड़ाया, ठंढा न हुआ। ७—विदगध = विदग्ध, रसिक। रस अनुमोदई = रस का उपभोग करते हैं। पेख = देखना। ८—लाख में एक न मिला।

प्रार्थना और नचारी

आदेश (२२८)

बिदिता देवी बिदिता हो
अविरल केस सोहन्ती ।
एकानेक सहस को धारिनि
अरि रंगा पुरनन्ती ॥ २
कज्जल रूप तुअ काली कहिए
उजल रूप तुअ बानी ।
रवि मंडल परचंडा कहिए
गंगा कहिए पानी ॥ ४ ।
ब्रह्मा घर ब्रह्मानी कहिए
हर-घर कहिए गौरी ।
नारायन-घर कमला कहिए
के जान उनपत तोरी ॥६ ॥
विद्यापति कविवर एहो गाओल
जाचक जन के गति ।
हासिनि देइ पति गरुड़नरायन ।
देवसिंघ नरपति ॥८॥

(२२९)
कनक-भूधर-सिखर बासिनि
चन्द्रिका चय चारु हासिनि
दसन कोटि विकास, बंकिम-
तुलित चन्द्रकल ।

क्रुद्ध सुररिपु बलनिपातिनि
महिष शुम्भ-निशुम्भ-घातिनि
भीत-भक्त-भयापनोदन—
पाटल प्रबले ॥ २ ॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणी
दुर्ग मारि विमर्द्द हारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे ।

गगन मंडल गर्भगाहिनि
समरभूमिषु सिंहवाहिनि
परसु पाश कृपाण-सायक—
शंख-चक्र धरे ॥ ४ ॥

अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित वर्द्धित-
पारणा रभसे ।

संसारबंध निदानमोचिनि
चन्द्र-भानु कृशानु-लोचिनि
योगिनी गण गीत शोभित-
नृत्यभूमि रसे ॥ ६ ॥

जगतिपालन-जनन मारण
रूप कार्य सहस्र कारण
हरि विरंचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे।
सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति कृतस्तुति
तोषिते शिवसिंह भूपति
कामना फल दे॥ ८॥

(२३०)

जय जय संकर जय त्रिपुरारि।
जय अध पुरुष जयति अध नारि॥ २॥
आध धवल तनु आधा गोरा।
आध सहज कुच आध कटोरा॥ ४॥
आध हड़माल आध गजमोती।
आध चानन सोहे आध विभूती॥ ६॥
आध चेतन मति आधा भोरा।
आध पटोर आध मुँज डोरा॥ ८॥
आध जोग आध भोग विलासा।
आध पिधान आध नग वासा॥१०॥
आध चान आध सिंदुर सोभा।
आध विरूप आध जग लोभा॥१२॥
भने कविरतन विधाता जाने।
दुइ] कए बाँटल एक पराने॥१४॥

भन विद्यापति सुनह महेसर
इ लागि कपलि तुअ सेवा।
एतए जे वर से वर होअल
ओतए जाएत्र जनि देवा ॥ ८ ॥

(२३४)

हम नहि आज रहव यहि आँगन
जो वुढ होएत जमाई, गे माई।
एक त बइरि भेला वीध विधाता
दोसरे धिया कर बाप।
तीसरे बइरि भेला नारद बाभन
जे बूढ आनल जमाई, गे माई ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोरब
दोसरे तोरब रुँडमाला
बरद हाँकि बरिआत बेलाइब
धिआले जाएब पराई, गे माई ॥
धोती लोटा पतरा पोथी
एहो सभ लेबन्हि छिनाई।
जौं किछु बजता नारद बाभन
दाढी धए घिसिआएब, गे माई ॥
भन विद्यापति सुनु हे मनाइन
दृढ करु अपन गेआन।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी विआहू
गौरी हर एक समान, गे माई ॥

(२३५)

नाहि करब वर हर निरमोहिया।
वित्ता भरि तन वसन न तिन्हका
वघछल काँख तर रहिया ॥ २ ॥
वन वन फिरथि मसान जगावथि
घर आँगन ऊ वनोलनि कहिया॥
सासु ससुर नहि ननद जेठौनी
जाए वैठति धिया केकरा ठहिया ॥ ४ ॥
वृद्ध वडद ढकपोल गोल एक
सम्पति भाँगक झारिया।
भनइ वियापति सुनु हे सुनाइन
सिव सन दानी जनत के कहिया ॥६॥

(२३६)

कतए गेला मोर वुढ़वा जती।
पीसल भाँग रहल सेइ गती ॥ २ ॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती।
आज लगाइ देल कौन उदगती ॥ ४ ॥
एकसर जोहए जाएब कौन गती।
ठेसि खसब मोरि होत दुरगती ॥ ६ ॥
नदनयन विच मिलल महेस।
गौरी हरखित मेल छुटल कलेस ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति सुनु हे सती।
इहो जोगिया थिक त्रिभुवन पती ॥ १० ॥

(२३७)

जोगिया एक हम देखलौं गे माई ।
अनहद रूप कहलो नहि जाई ॥ २ ॥
पच वदन तिन नयन विसाला ।
वसन विहुन ओढन वघछाला ॥ ४ ॥
सिर वहे गग तिलक सोहे चदा ।
देखि सरुप मेटल दुखददा ॥ ६ ॥
जाहि जोगिया लै रहलि भवानी ।
मन आनलि वर कौन गुन जानी ॥ ८ ॥
कुल नहि सिल नहि तात महतारी ।
वयस दिनक थिक लछु जुग चारी ॥ १० ॥
भन वियापति सुनु ए मनाइनि ।
एहो जोगिया थिक त्रिभुवन दानि ॥ १२ ॥

(२३८)

सिव हो, उतरब पार कओन विधि ।
लोढ़ब कुसुम तोरब वेलपात ।
पुजब सदासिब गोरिक सात ॥
वसहा चढ़ल सिव फिरहू मसान ।
भँगिया जरठ दरदो नहि जान ॥
जप तप नहि कैलहु नित दान ।
वित गेला तिन पन करइत आन ॥
भन वियापति सुनु हे महेस ।
निरधन जानिके हरहु कलेस ॥

(२३९)

जखन देखल हर हो गुननिधी।
पुरल सकल मनोरथ सब बिधी ॥२॥
बसहा चढल हर हो बुढ़ जती।
काने कुंडल सोभे गले गजमोती ॥४॥
वइसल महादेव चौका चढी।
जटा छिरिआओल माओल भरी ॥६॥
विधिकरु विधिकर विधिकरु करू।
विधि न करइ से हर हो हठ धरू ॥८॥
विधिए करइत हर हो घुमि खसु।
सँसरि खसल फनि सिरि गौरी हँसु ॥१०॥
फेओ नहि किछु कहइन्हि हिनकहुँ।
पुरखित लिखल छला मोर पहुँ ॥१२॥
कवि विद्यापति गाओल।
गोरी उचित वर पाओल ॥१४॥

(२४०)

हर जनि विसरब मो ममिता,
हम नर अधम परम पतिता।
तुअ सन अधम उधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता ॥२॥
जम के द्वार जवाब कओन देब
जखन बुझत निजगुन कर बतिया।

जब जम किंकर कोपि पठाएत
तखन के होत धरहरिया ॥४॥
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
संकर विपरित वानी।
असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करु दिअ सुलपानी ॥६॥

(२४१)

एत जपन्तप हम किअ लागि कैलहु
कथिला कएलि नित दान।
हमरि धिया के एहो वर होएता
अब नहि रहत परान ॥२॥
हर के माय बाप नहि थिकइन
नहि छइन सोदर भाय।
मोर धिया जो सासुर जैती
बइसति ककर लग जाय ॥४॥
घास काटि लौती वसहा चरौती
कुटती भाँग धतूर।
एको पल गौरा बैसहु न पौती
रहती ठाढि हजूर ॥ ६ ॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दृढ़ करु अपन गेआन।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ॥ ८ ॥

(२४२)

कखन हरब दुख मोर
हे भोलानाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाएब
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ।
आछत चानन अवर गँगाजल
बेलपात तोहि देब, हे भोलानाथ।
यहि भव-सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु कर आए, हे भोलानाथ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ।

(२४३)

यहि विधि ब्याहन आयो
पहुन बाउर जोगी।
टपर टपर कए बसहा आयल खटर खटर रुँडमाल॥
भकर भकर सिव भाँग भकोसथि डमरू लेल कर लाय॥
ऐपन मेंटल पुरहर फोरल बर किमि चौमुख दीप॥
धिआ ले मनाइनि मडप बइसलि गाविए जनु सखि गीत॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस॥

(२४४)

आजु आथ एक बत्त माहि सुख लागत हे।
तोहें सिव धरि नट बेप कि डमरू बजाएब हे॥

भल न कँहल गउरा, रउरा आजु त्तु नाचब हे
सदा सोच मोहि होत कवन विधि बाँचब हे॥
जे जे सोच मोहि होत कहा समुझाएब हे।
रउरा जगत के नाथ कवन सोच लागए हे॥
नाग ससरि भुमि खसत पुहुमि लोटायत हे।
गनपत पोसल मजूर सेहो धरि खायत हे॥
अमिय चूइ भुमि खसत बघम्बर जागत हे।
होत बघम्बर बाघ बसह धरि खायत हे॥
टूटि खसत रुद्राछ मसान जगावत हे।
गौरी कँद दुख होत विद्यापति गावत हे॥

(२४५)

आगे माइ, जोगिया मोर जगत सुखदायक
दुख ककरो नहि देल।
दुख ककरो नहि देल महादेव
दुख ककरो नहि देल।
यहि जोगिया के भाँग भुलेलक
धतुर खोआइ धन लेल॥
आगे माइ, कातिक गनपति दुइजन बालक
जग भरि के नहि जान।
तिनका अभरन किछुओ न थिकइन
रति यक सोन नहि कान॥
आगे माइ, सोना रुपा अनका सुत अभरन
आपन रुद्रक माल।

अपना सुत ला फिकुओ ना जुरइनि
अनका ला जजाल ॥
आगे माइ, छन में हेरथि कोटि धन बकसथि
ताहि देवा नहि थोर।
भन विद्यापति सुनह मनाइनि
थिका दिगम्बर भोर।

(२४६)

जोगि भँगवा खाइत भेला रँगिया
भोला बौडलवा ॥
सबके ओढ़ावे भोला साल दुसलवा
आप ओढ़य मृगछलवा ॥
सबके खिलावे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धतुरवा ॥
कोई चढ़ावे भोला अच्छत चानन
कोई चढावे वेलपतवा ॥
जोगिन भूतिन सिव के सँघतिया
भैरो बजावे मिरदंगिया।
भन विद्यापति जे जै सकर
पारवती गौरि सँगिया ॥

(२४७)

जौं हम जनितहुँ भोला भेला ठकना
होइतहुँ राम गुलाम गे माई।

भाइ बिभीखन बड तप कैलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माई।
पुरुब पछिम एको नहि गेला
अचल भेला यहि ठाम, गे माई।
बीस भुजा दस माथ चढ़ाओलि
भाँग दिहल भर गाल, गे माई।
नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरपि देलन्हि रुँडमाल, गे माई।
एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सोवरनक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माई।
भन बिद्यापति सुकबि पुनित मति
कर जोरि बिनओं महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक रहथि कलेस, गे माई।

(२४८)

जानकी-वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि, नहि जननि जनक नहि जाही ॥२॥
घसु नइहरा ससुरा के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेल चहि गाम ॥४॥

सासुक कोर में सुतल जमाय।
समधि बिलह तौ बिलहल जाय ॥६॥
जाहि श्रोदर से बाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेलि ॥८॥
भन विद्यापति सुकवी भान।
कवि के कवि कहँ कवि पहचान ॥१०॥

गंगा-स्तुति

(२४६)

बड सुख सार पाश्रोल तुश्र तीरे।
छोड़इत निकट नयन बह नीरे ॥२॥
करजोरि बिनमश्रों बिमल तरगे।
पुन दरसन होए पुनमति गंगे ॥४॥
एक श्रपराध छेमब मोर जानी।
परसल माए पाए तुश्र पानी ॥६॥
कि करब जप तप जोग धेश्राने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति समदश्रों तोही।
श्रन्त काल जनु बिसरह मोही ॥१०॥

(२५०)

ब्रह्मकमण्डलु बास सुवासिनि
सागर नागर-गृहबाले।

पातक महिप विदारण कारण
धृतकरवाल वीचि-माले॥
जय गंगे जय गंगे।
शरणागत भय भंगे
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित
कुसुम विचित्रित तीरे।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे॥
हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके।
प्रविलसदमरपुरी-पद दान-
विधान विनाशित शोके॥
सहज दयालुतया पातकि जन
नरकविनाशन निपुणे।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
विद्यापति कवि भणित गुणे॥

कृष्ण-कीर्त्तन

(२५१)

माधव, कत तोर करब बड़ाई।
उपमा, तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई॥

जौं थीरोदक सौरभ अति दुरलभ
तौं पुनि काठ कठोर।
जौं जगदीस निसाकर तौं पुन
एकहि पच्छ उजोर॥
मनि समान औरो नहि दोसर
तनिकर पाथर नामे।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह
की कहु ठामहि ठामे॥
तोहर सरिस एक तोहें माधव
मन होइछ अनुमान।
सज्जन जन सौं नेह कठिन थिक
कवि विद्यापति भान॥

(२५२)

माधव, बहुत मिनति कर तोय।
दए तुलसी तिल देह समर्पिनु
दय जनि छाडवि मोय।
गनइत दोसर गुन लेस न पाओबि
जब तुहुँ करवि बिचार।
तुहुँ जगत जगनाथ कहाओसि
जग बाहिर न इ छार॥
किए मानुस पशु पखि भए जनमिए
अथवा कीट पतंग।

करम विपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसग ॥
भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइत इह भव-सिंधु ।
तुअ पद-पल्लव करि अवलम्बन
तिल एक देह दिनबधु ॥

(२५३)

तातल सैकत वारि-बिन्दु सम
सुत-मित रमनि समाज ।
तोहे बिसारि मन ताहे समरपिनु
अब मझु हब कोन काज ॥
माधव, हम परिनाम निरासा ।
तुहुँ जगतारन दीन दयामय
अतए तोहर बिसवासा ।
आध जनम हम नींद गमायनु
जरा सिसु कत दिन गेला ।
निधुवन रमनि-रभस रंग मातनु
तोहे भजब कोन बेला ॥
कत चतुरानन मरि मरि जाओत
न तुअ आदि अवसाना ।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत
सागर लहरि समाना ॥

भनइ विद्यापति सेष समन भय
तुय विनु गति नहि आरा।
आदि अनादि नाथ कहाओसि अब
तारन भार तोहारा॥

(२५४)

जतने जतेक धन पापे बटोरल
मिलि मिलि परिजन खाय।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए
करम सग चलि जाय॥
ए हरि, बन्दौं तुअ पद नाथ।
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि
पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु
जुबती मति मयँ मेलि।
अमृत तजि हलाहल किए पीअल
सम्पद अपदहि भेलि॥
भनइ विद्यापति नेह मने गनि
कहल कि बाढ़ब काजे।
साँझक बेरि सेवकाई मँगइत
हेरइत तुअ पद लाजे॥

---

(२५५)

रुपया

माधव, कि कहब तोहर गेआन।
सुपहु कहलि जब रोष कयल तब
कर मूनल दुहु कान ॥ २ ॥
आयल गमनक बेरि न नीन टरु
तइ किछु पुछिओ न भेला।
एहन करमहीनि हम सनि के धनि
कर से परसमनि गेला ॥ ४ ॥
जओं हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच-कचन-गिरि-साँधि।
कौसल करतल बाहु-लता लय
दृढ करि रखितिहुँ बाँधि ॥ ६ ॥
इ सुमिरिए जब जाओं मरिए तब
बूझि पड हृदय पषाने।
हिमगिरि-कुमरी चरन हृदय धरि
कवि विद्यापति भाने ॥ ८ ॥

(२५६)

प्रेम

फूल एक फुलवारि लाओल मुरारि।
जतने पटाओल सुवचन-वारि ॥२॥
चौदिस बान्हल सीलक आरि।
अवलम्बन कए अवधारि ॥४॥

ततहु फुलल फुल अभिनव पेम।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम ॥६॥
अति अपरुब फुल परिनत भेल।
दुइ जिव अछल एक भए गेल ॥८॥
पिसुन-कीट नहीं लागल ताहि।
साहस फल देल विहि निरवाहि ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दर सेहु।
करिए जतन फलमत होए जेहु ॥१२॥

(२५७)

शिवसिंह का युद्ध

दूर दुग्गम दमसि भंजेओ
गाढ गढ़ गूढिय गँजेओ
पातसाह ससीम सीमा
समर दरसओ रे ॥ १ ॥
ढोल तरल निसान सद्दहि
भेरि काहल संख नद्दहि
तीनि भुवन निकेत
केतकि सान भरिओ रे ॥ २ ॥
कोह नीर पयान चलिओ
वायु मध्ये राय गरुओ
तरनि तेअ तुलाधरा
परताप गहिओ रे ॥ ३ ॥

मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ
धरनि पूरिय गगन झम्पिअ
हानि तुरय पदाति पयभर
कमन सहिओ रे ॥ ४ ॥

तरल तर तरवारि रंगे
बिज्जुदाम छटा तरंगे
घोर घन संघात वारिस-
काज दरसेओ रे ॥ ५ ॥

तुरय कोटिअ चाप चूरिअ
चारि दिसि सौं विदिस पूरिअ
विषम सार असाढ़ धारा
धरनी भरिओ रे ॥ ६ ॥

अन्ध कूअ कबन्ध लाइअ
फेरवी फफफरिस गाइअ
रुहिर मत्त परेत भूत
बैताल बिछलिओ रे ॥ ७ ॥

पार भइ परिपथि गंजिअ
भूमि मंडल मुंड मंडिअ
चारु चन्द्र कलेव कीत्ति
सुकेत की तुलिओ रे ॥ ८ ॥

राम रूप स्वधम्म सिक्खिअ
दान दप्प दधीचि रक्खिअ

नखसौं लिखल नलिनि दल पात।
लीखि पठाओल आखर सात॥
पहिलहि लिखलनि पहिल बसत।
दोसरैं लिखलनि तेसरक अत॥
लिखि नहि सकली अनुज बसत।
पहिलहि पद अछि जीवक अत॥
भनहि विद्यापति आखर लेख।
बुध-जन हो से कहए बिसेख॥

(२६१)

द्विज आहर-आहर सुत नदन
सुत आहर सुत रामा।
बनज बधु सुत सुत दए सुन्दरि
चललि संकेतक ठामा॥
माधव बूझल कथा बिसेखी।
तुअ गुन लुबुधलि प्रेम पिआसलि
साधस आइलि उपेखी॥
हरि अरि अरि पति ता सुत बाहन
जुवति नाम तसु होई।
गोपति पति अरि सह मिलु बाहन
बिरमति करहु न होई॥
नागर नाम जेन धनि आबद
हरि अरि अरि पति जाने।

नौमि दसाह एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ॥

(बाल-विवाह)

(२६२)

पिया मोर बालक हम तरुनी।
कोन तप चुकलौंह भेलौंह जननी ॥
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर।
पिया के देखैत मोर दगध शरीर ॥
पिया लेली गोद के चललि बजार।
हटियाक लोग पूछे के लागु तोहार ॥
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाई।
पुरुब लिखल छल बालमु हमार ॥
बाटरे बटोहिया कि तुहु मोरा भाई।
हमरो समाद नैहर लेने जाऊ ॥
कहिहुन बबा के किनए धेनु गाई।
दुधवा पियाइके पोसता जमाई ॥
नहि मोर टका अछि नहि धेनु गाई।
कौनइ विधि सँ पोसब जमाई ॥
भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारी।
धीरज धरह त मिलत मुरारी ॥

(परकीया)

(२६३)

अपर पयोधि मगन भेल सूर।
नखि कुल-सकुल बाट बिदूर॥
नर परिहरि नारिकि घर गेल।
पथिक गमन पथ सलय भेल॥
अनतए पथिक करिअ परवास।
हमे धनि एकलि कत नहिं पास॥
एक चिंता अओक मनमथ सोस।
दसमि दसा मोहि कओनक दोस॥
रयनि न जाग सखी जन मोर।
अनुखन सगर नगर भम चोर॥
तोहे तरुनत हम बिरहिनि नारि।
उचितहु वचन उपज कुलगारि॥
वामा वचन वाम पथ धाव।
अपन मनोरथ जुगुति बुझाव॥
भनइ विद्यापति नारि सुजानि।
भल कए रखलक दुहु अनुमानि॥

(२६४)

हम जुवती पति गेलाह बिदेस।
लग नहि वसए पड़ोसियाक लेस॥

सासु दोसरि किछुओ नहिं जान।
आँख रतौंधी सुनए नहि कान ॥
जागहु पथिक जाह जनु भोर।
राति अँधार गाम बड़ चोर ॥
भरमहु भौंरि न देअ कोतवार।
काहु न केओ नहिं करए विचार ॥
अधिप न कर अपराधहु साति।
पुरुष महते सब हमर सजाति ॥
विद्यापति कवि यह रस गाव।
उकुतिहु अबला भाव जनाव ॥
(विद्यापति की मृत्यु)

(२६५)

दुल्लहिं तोहरि कतए छथि माय।
कहुन ओ आबथु एखन नहाय ॥
वृथा बुझथु संसार विलास।
पल पल नाना तरहक त्रास ॥
माय बाप जौं सद्गति पाव।
संतति कौं अनुपम सुख आव ॥
विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदसि जान।

॥ इति ॥